अणुव्रत की दिशाएं

अणुव्रत की दिशाएं

मुनि सुखलाल

मंगलम्

अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी न मानवीय मूल्या की प्रतिष्ठा मे अपन जीवन के मूल्यवान क्षणा का नियाजन किया। उससे एक आन्दोलन जनमा। उसकी पहचान 'अणुव्रत' के नाम स हुई। आन्दालन की प्ररणा क्या हुई? इस प्रश्न के समाधान मे कवि का एक पद्य उद्धृत करना ही पर्याप्त लगता है—

घरो मे नाम थे, नामो क साथ ओहदे थे।
वहुत तलाश किया, कोई आदमी न मिला॥

आज विश्व की आवादी पाच अरब से अधिक है। पाच अरब लागा मे आध्यात्मिक, नैतिक या मानवीय मूल्या क प्रति समर्पित लाग कितने है? सर्वे किया जाए तो आकडे बहुत उत्साहवर्धक नहीं मिलगे।

अणुव्रत के माध्यम से आचार्यश्री न जीवन का नया दर्शन दिया। उस दर्शन स जन-जन परिचित हा इसके दो माध्यम हो सकते हैं— प्रवचन और साहित्य। तेरापथ धर्मसघ मे जितने साधु-साध्विया समण-समणिया एव गृहस्थ प्रवक्ता हैं व नैतिक मूल्या की चर्चा कर और अणुव्रत का नाम न आए, यह सभव नहीं है। अणुव्रत के बिना इस प्रकार का व्याख्यान, प्रवचन या वार्ता पूरी होती ही नहीं। लाखा-लाखा लोगा ने इस विधा से अणुव्रत को समझा ओर यथासभव जीने का प्रयत्न किया।

प्रवचन तात्कालिक प्रभाव छोडता है। स्थायित्व की दृष्टि से साहित्य का अपना मूल्य है। अणुव्रत के सम्बन्ध म साहित्य की अपेक्षा हुई। अणुव्रत अनुशास्ता स्वय अणुव्रत के प्रखर प्रवक्ता हैं। अणुव्रत के इतिहास दर्शन और उसकी प्रासगिकता पर आपने जितना कहा ओर लिखा है वह अणुव्रत को अच्छे ढग से समझने के लिए पर्याप्त है। अणुव्रत का साहित्य बहुआयामी हो इस उद्देश्य स आपन साधु-साध्वियो को लिखने क लिए प्रेरित किया। प्रेरणा सबके लिए थी पर उस विशेष रूप स पकडा हमार धमसघ क युवा लेखक सन्त मुनि सुखलालजी न।

मुनि सुखलालजी वक्ता है गायक ह और लेखक भी है। उनका लेखन

अपनी आशुगामिता के लिए विश्रुत है। दार्शनिक धार्मिक नैतिक या समसामयिक काई भी विषय हो उनकी लेखनी कभी रुकती नहीं है। उन्हाने बहुत लिखा है पर सबस अधिक अणुव्रत क बारे म लिखा है इस हकीकत को उनक आत्मवक्तव्य म पढा जा सकता है। आचार्यवर न उनको अवसर दिया। मुनिश्री ने अवसर का उपयोग किया। इसी कारण आज व अणुव्रत का अपनी विचार-चादर का महत्त्वपूर्ण ताना-बाना मानते हैं।

'अणुव्रत की दिशाए' मुनि सुखलालजी के चौबीस निबन्धा का सकलन है। ये निबन्ध किसी एक विशष उद्देश्य स प्ररित होकर शृखलाबद्ध रूप म लिखे हुए नही हैं। फिर भी अणुव्रत इन सबक केन्द्र म है। अणुव्रत की इन दिशाआ म काई व्यक्ति अपन जीवन की दिशा खाज पाया जीवन के अधेरे गलियारा को रोशन कर पाया तो उससे समाज का जीवन जगमगा उठेगा। आज की युवा पीढी जा शार्टकट मेथड से जीवन की नयी दिशाआ का उद्घाटन और सुख-सुविधा के योग की आकाक्षा रखती है उसको सही अर्थ म जीवन की नया दिशा मिल सकी तो बहुत बडा लाभ होगा। अणुव्रत दर्शन को सरलता ओर सरसता के साथ प्रस्तुति देन की लेखक की तडप अन्य लेखका म सप्रषित हा यही मगल भावना है।

लाडनू —साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा
८ अगस्त १९९२

—

सदपेक्षा

कौन नहीं जानता कि आज 'अणुव्रत आन्दालन' न सिर्फ राष्ट्रीय चरित्र निर्माण वरन् अहिसक समाज-सरचना की दिशा म गतिशील प्ररणात्मक आन्दोलन हैं। अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी एव युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ का सान्निध्य पाकर अनक सन्त-सतिया न इस अभियान का अपनी जीवन-शक्ति स सींचा है और हिमालय स कन्याकुमारी तक नैतिक चतना क वायुमडल का निर्माण किया है। उनम मुनिश्री सुखलालजी का स्थान अग्रिम है। अणुव्रत अनुशास्ता के आदश का स्वीकार कर जहा इन्हान भारत की राजधानी और नगरीय आचला म अणुव्रत का विचार-प्रसार किया है और सहस्रा लागा का प्रभावित किया है, वहा इन्हाने गाव-गाव म पद-यात्रा कर ग्राम्य-जीवन म अपनी रचनात्मक और सृजनात्मक प्रक्रियाआ से नव समाज-सरचना का दीप भी सजोया है। उसमे विनय पुरम् एव आदर्शपुरम् इनक रचनात्मक जीवन की एक प्रज्वलित मशाल हैं। मुनिश्री सुखलालजी अणुव्रत आन्दोलन के अच्छे व्याख्याता एव प्रवक्ता हैं वहा वे रचनात्मक शक्ति क प्रयाक्ता भी हैं और यही अणुव्रत आन्दोलन के लिए उनकी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। सैंकडा-सैंकडा ग्रामीणा एव पिछडे लोगा ने उनक दिशा-बोध को पाकर जहा शराब आदि अनेक व्यसना स मुक्ति ली है वहा उनके सत्सग एव साहचर्य से अपनी जीवन-दिशा म भी आमूलचूल परिवर्तन किया है।

अणुव्रत आन्दालन म कार्य करते-करते मुनिश्री सुखलालजी ने 'अणुव्रत समाज सरचना' के विविध प्रयाग किए हैं नए आयाम जाडे हैं नयी रेखाए खींची हैं और य ही रेखाए आज अहिसक समाज-सरचना की सयोजनात्मक कडिया बन गई हैं। प्रस्तुत पुस्तक और कुछ नहीं अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी की नित्य नवीन सरचनाआ से उत्प्रेरित अणुव्रत की नवीनतम सम्भावनाआ की आधार-शिला कही जा सकती है। प्रस्तुत पुस्तक 'अणुव्रत की दिशाए' न सिर्फ इसे उजागर करती है वरन् मुनिश्री की क्रान्तिकारी भावनाआ को भी प्रस्फुटित करती है।

तदर्थ मुनिश्री का अभिनन्दन एव प्रेरणात्मक दिशाओ के लिए आभार।

पुस्तक न सिर्फ पठनीय है वरन् अणुव्रत समाज-सरचना की दिशा म कार्यशील कार्यकर्त्ताओ के लिए प्ररणाशील भी है। आशा है, हम इसका अधिकाधिक उपयोग कर आचार्यश्री तुलसी की अणुव्रत विचार-क्रान्ति को अग्रसर करने म सहायक हांगे।

कल्पना-कुज
राजसमद

देवेन्द्रकुमार कर्णावट
अणुव्रत-प्रवक्ता

प्रवेशिका

अणुव्रत मेरी विचार-चादर का महत्त्वपूर्ण ताना-वाना रहा है। यद्यपि मैं महाव्रती हू, पर मरी मुनि-दीक्षा क वाद जल्दी ही आचार्यश्री तुलसी की कर्मशक्ति अणुव्रत के लिए सघनता म जुड गई। वही कालखण्ड मर सस्कार-निर्माण का कालखण्ड था। मैंन सात-जागत अणुव्रत-विचार के कपड ही पहने-आढे। अणुव्रत मरे अवचेतन म इस तरह रच-वस गया कि इसी के सपने लने लगा। मैं ही नहीं मेर सभी सहपाठी कमावश इसी जन्मघुटी से भावित-प्रभावित रह हैं।

साहित्य क प्रति भी मरा सहज झुकाव रहा है। हा सकता है अपनी इस सहज अभिरुचि क कारण मैं प्रचार की उच्चतम कक्षा म नहीं पहुच पाया। फिर भी मुझे इस वात का सताप है कि अणुव्रत क रचनात्मक पक्ष स जुडने का अवसर मिलता रहा। अणुव्रत की कन्द्रीय गतिविधिया के साथ ताल मिलान का सौभाग्य भी मुझ मिला। इसी क्रम म मुझ अपनी लेखन की अभिरुचि को माजने / अजमाने का मौका भी मिला। मुझे कभी यह अहकार नहीं करना चाहिए कि मैंने अपने लेखन मे अणुव्रत-विचार की नयी दिशा का उद्घाटन किया है पर यह सात्त्विक गौरव मुझे अवश्य है कि इस दिशा म लखन का मुझे जितना अवसर मिला उतना सभवत मरे सहकर्मा गुरुभाइया म स किसी का नहीं मिला। गुणवत्ता की दृष्टि से हर लेखक के लिए सभावनाआ के द्वार खुले रहने चाहिए। फिर भी मैंने जो कुछ लिखा है मर पाठका ने मुझे उत्साहित किया है। आचार्यश्री ने भी न केवल मुझे उत्साहित ही किया है अपितु समय-समय पर कुछ छोट-माटे पुरस्कार भी मेरी झोली मे डाल हैं।

प्रस्तुत 'अणुव्रत की दिशाए' अपनी इस नयी पुस्तक मे अपने आस-पास जो कुछ घटित-सघटित होता रहा है उसे मैंने सचेतन दृष्टि स दखा तथा निखारा / पखारा है। इसी परिप्रेक्ष्य म इस पुस्तक की प्रासगिकता का स्वीकार किय जान के आग्रह के साथ

जैन विश्वभारती लाडनू — *मुनि सुखलाल*
२८ फरवरी १९९२

अनुक्रम

अणुव्रत : एक पूर्णांग आन्दोलन

आज जब भी कोई आदमी शान्त भाव से विचार करता है तो उसे लगता है वह चारो ओर समस्याओं से घिरा हुआ है। यह कोई निराशावादी चिन्तन नहीं है अपितु एक सत्य है। भले ही विज्ञान ने जीवन को सुख-समृद्ध और आनन्दित बनाने के लिए विपुल साधन प्रस्तुत किए हैं पर लगता है उन साधनों का भी अपना एक घेरा बन गया है। नि सन्देह दुनिया के अधिकतम लोग आज भी धरती पर नारकीय जीवन जी रहे हैं। कुछ लोगों ने अपनी बौद्धिक क्षमताओं का फायदा उठाकर अपने-आपको सुख-सुविधाओं से सम्पन्न बनाने में सफलता हासिल की है पर लगता है वह आदमी को बहुत तृप्त नहीं कर पा रही है। यह ठीक है कि आज गरीब की झोपडी में भी बिजली की रोशनी पहुच गई है। पर उस रोशनी में उसे अपनी प्रभुता का नहीं अभाव का ही अधिक एहसास हो रहा है। यो विशेषज्ञो के सर्वेक्षण यह भी बता रहे हैं कि आज दु ख और अधिक फैला-पसरा है गरीब और अधिक गरीब हुआ है।

जो लोग मध्यवर्गी है, उनकी समस्याए तो स्पष्ट रूप से बढी हैं। अपने चारो ओर उन्होंने कल्पित मान्यताओं का जो घेरा बना लिया है इससे वे गरीब की तरह गरीबी में तो जी नहीं सकते पर साधनो का अभाव उनके जीवन को नीरस बना रहा है। चोटी के कुछ लोगो के पास यदि सुख-सुविधाओं का ढेर है भी तो उनकी प्राप्ति-प्रतियोगिता इतनी संघर्षमय है कि वे अपने आपको और भी अधिक अशांत अनुभव करते हैं। कोई शक नहीं कि कुछ धनाढ्य लोग आर्थिक-भौतिक दृष्टि से अतिशय सम्पन्न हुए हैं। उनका तन सशक्त हुआ है पर मन और अधिक बीमार हुआ है इसमे भी कोई शक नहीं है।

फिर भी भौतिकता की यह अन्धी दौड इस कदर बढ रही है कि उससे दु खद परिणाम भोगता हुआ भी आदमी उस खुजलाहट से विरत नहीं हो पा रहा है बल्कि उसी दिशा में आगे बढता जा रहा है। सवाल यह है कि आखिर इसका इलाज क्या है? सुख-सुविधाओं को छोडने की बात किसी के गले नहीं उतर सकती। पहली बात तो यह है कि जब सभी लोग इस दौड में शामिल हैं तो इसके विरोध में आवाज कौन उठाये? वैसे आज राजनीति ने पूरे जीवन पर इतना अधिकार जमा लिया है कि उससे बचकर आदमी का अस्तित्व ही नहीं रह गया है। यह पूरी

तरह म उसकी फास म आ गया है। राजनीति उस पर इस तरह कुडला मारकर बैठ गई है कि उसमें मुक्त होना चाहकर भी यह मुक्त नहीं हो पा रहा है। ऐसी स्थिति म जबकि सारा सामर्थ्य राजनीति क हाथ में आ जाए और उसका सचालन करन वाले लोग भी ऐसे ही हा जिन्ह अपनी सुख-सुविधा स ही ज्यादा वास्ता है ता दु ख स मुक्ति की आशा दुराशा मात्र रह जाती है।

समाधान का सूत्र

एसी स्थिति म व ही लाग आग आ सकत हैं जा राजनीति म ऊपर उठ हुए है। निश्चय ही एसे लाग व ही हा सकत हैं जिन्ह सारी मानवता का चिन्ता हा। राजनीति से ग्रस्त आदमी अपने परिवार या ज्यादा-स-ज्यादा अपन देश की सीमा क पार नहीं जा सकता। वह यदि उससे ऊपर उठकर कोई बात करता भा है तो उसका सिंहासन ही डाल जाता हैं। उसकी भाषा भल ही मानवता की हा कर्म अपन स्वार्थ स ही घिरा रहगा।

यहीं पर आध्यात्मिक नतृत्व की बात सामन आती है। शब्द भले ही अध्यात्म की जगह दूसरा आ जाए, पर भाव-भूमि उसकी यही रहगी कि वह पूरी मानवता के प्रति समर्पित हा। या आज अध्यात्म क नाम पर भी अनक दुकानदारिया चल रही ह तरह-तरह का आकर्षक माल उनम बचा जा रहा है। कहीं यह बिल्कुल रूढ़िग्रस्त ह तो कहीं बिलकुल उन्मुक्त। एस म उसका चतना समस्त क सवेदन से कट जाए, ता यह स्वाभाविक ही है। यद्यपि अध्यात्म का मूल केन्द्र व्यक्ति ही है पर जब तक व्यक्ति समस्त की चेतना से नहीं जुड जाता तब तक वह पूरा आध्यात्मिक नहीं हो सकता। आज यही ता हा रहा ह। धर्म के लागा ने अध्यात्म को परलोक क साथ जाडकर उसे वर्तमान की समस्याओ से विरत कर दिया। अणुव्रत का मानना है कि वह मोक्ष किस काम का जा हमारे इस जीवन का शात न बना सके। पर साथ-ही-साथ हमे इस बात से भी सचेत रहना हागा कि शान्ति अतत पदार्थ मे नहीं ह। पदार्थ की भी अपनी एक भूमिका है। पर यदि उसके साथ अध्यात्म नहीं जुडा ता जैसा कि आज हो रहा ह उससे मनुष्य और अधिक अशात बन जाएगा। अणुव्रत स्वार्थ और पदार्थ के अतिवाद स बचकर एक समन्वित भूमिका प्रस्तुत करता ह। वह व्यक्ति और समष्टि के बीच एक सन्तुलन बनाने का प्रयास है। यहा वह धर्म आर नैतिकता मे जुड जाता है।

नैतिकता का सवाल आज का अहम सवाल हैं। हा सकता ह कि कुछ लाग अनैतिक हाकर भी अपनी आकाक्षाए पूरी कर लत हा पर इसम काई सदेह नहीं कि उसम राष्ट्र निर्बल हाता है आम आदमी दु खी हाता ह। इसलिए अणुव्रत-आन्दालन न नैतिकता की आवाज उठाइ ह। यह आवाज किसी धर्म-सप्रदाय का

आवाज नहीं अपितु मानव-धर्म की आवाज है।

अणुव्रत ने क्या किया?

लोग पूछते हैं—क्या आवाज उठाने मात्र से अनैतिकता मिट जाएगी? सवाल ठीक भी है ठीक नहीं भी है। आवाज म ताकत हा तो उसमे बडे-बडे सिहासन भी हिल सकत हैं। आज यदि नैतिकता दुर्बल है ता इसका एक कारण यह भी है कि बडे-बडे लोग चुप बैठे हैं। जब आदमी स्वय बेईमान हो तो वह दूसरा का क्या उपदश द सकता है? शायद नैतिक मूल्या क प्रति चुप्पी का यही सबस बडा कारण है। नैतिक आवाज वही व्यक्ति उठा सकता है जा स्वय नैतिक हा। उसी की आवाज का प्रभाव भी हा सकता है।

अणुव्रत-आन्दालन न नैतिकता की आवाज उठाई है। दूसर शब्दा म यह आवाज अणुव्रत-अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी न उठाई है। आचार्य तुलसा शायद इसीलिए इस आवाज का उठा सके, चूकि व स्वय सत हैं हिसा और परिग्रह से मुक्त हैं। आज यह एक कठिनाई हा गई है कि धर्म और परिग्रह म कुछ समझौता हो गया है। अधिकाश धर्म और धमाचार्य पैस स धर्म की बात का मान्यता देने लगे ह। आचार्य तुलसी को यह विचार परम्परा स प्राप्त है कि पस स धर्म का काई समन्वय नहीं है। कहीं यदि पैसा जीवन-निर्वाह के लिए अनिवार्य हा भी जाता है ता वह कवल अनिवार्यता है धर्म नहीं है। इसीलिए उनके आसपास पेसा धर्म का मुखौटा पहनकर उच्च आसन पर विराजमान नहीं हा सकता। आचार्य तुलसी एक अकिचन एव परिव्राजक सन्यासी क साथ-साथ विचार मनीषी भी हैं। इसलिए व अणुव्रत-आन्दालन का प्रवर्तन कर पाए।

लाग यह भा पूछत है—क्या अणुव्रत-आन्दालन समाज म काई परिवर्तन कर सका है? निश्चय ही अणुव्रत-आन्दोलन न एक वातावरण बनाया है। आज जबकि नैतिक मूल्यो के प्रति सर्वत्र मौन छाया है अणुव्रत-आन्दालन उस मौन का ताड रहा है। आचार्यश्री का कहना है—पहली समस्या ता यह है कि लोगा की नैतिकता क प्रति श्रद्धा ही हिल गई। निश्चय ही यह एक खतरनाक बात ह। अनैतिक आचरण अवश्य ही बुरा है पर नैतिकता के प्रति श्रद्धा का डोल जाना उसस भी ज्यादा बुरा है। अश्रद्धा क्या उत्पन्न होती है इसका जवाब दत हुए व कहते हे—यह हमारी अपनी मानसिक कमजारी ता है ही पर जब आदमी बड-बड लागा का अनैतिक आचारण करत दखता है उन्ह फलता-फूलता दखता ह ता उसका विश्वास खडित हा जाता है। अत इस बात का आवश्यकता हे कि समाज मे नेतिक मूल्या की स्थापना हो। सभी स्तर पर लाग नैतिकता का पालन कर। पर बड भी

तभी हो सकता है जबकि समय-समय पर इस बार म आवाज उठाई जाए।

एक जमाना था जब लाग डालडा का व्यवहार छिप-छिपकर करत थ। आज वह खुल आम बढता जा रहा है। घरा म ता उसका व्यवहार हो ही रहा है विवाह-शादिया म भी उसका खुल आम व्यवहार हो रहा है। उस समय जबकि इस पर अगुली उठती थी तो लाग खुले आम इसका व्यवहार करन म भी कतरात थे। आज वह भी समाप्त हा गया।

यह भी एक विचारणीय विषय है कि वर्जनाओं क बीच डालडा का प्रचार सर्व-साधारण म कैस हा गया? निश्चय ही यह परिस्थिति की दन है। ज्या-ज्या शुद्ध घी उपलब्ध नहीं हुआ पशु-धन समाप्त या अपर्याप्त हा गया डालडा का प्रचलन बढता गया। इसक लिए आवश्यकता है कि इस समस्या पर पूर परिप्रेक्ष्य म चिन्तन किया जाए। यहीं यह बात पूरे समाज और शासन स भी जुड जाती है। अणुव्रत का विचार भी तब तक पूर्ण सफल नहीं हागा जब तक कि समाज आर शासन भी इस दृष्टि स सजग नहीं हा जाएगा।

इसम काई सदेह नहीं है कि शासन का सजग करने के लिए अणुव्रत के जितने प्रयास-प्रयत्न हुए हैं उन्ह और तेज करने की आवश्यकता है। इसी सदर्भ म केवल आवाज उठाने की बात की अपर्याप्तता भी हम समझनी चाहिए। पर इसम कोई सदह नहीं कि अणुव्रत न एस अनगिन लागा को तैयार किया है जिन्हाने नतिक-निष्ठा को अपने जीवन का व्रत बना लिया है। विद्यार्थियो व्यापारियो आदि मे काफी कार्य हुआ हे।

हजारा लाखो लोग को व्यसन-मुक्त बनाकर अणुव्रत ने उनके जीवन म आशा की एक नई लहर पैदा की है। अस्पृश्यता के विरुद्ध मोर्चा लगाने मे अणुव्रत आन्दोलन अनेक सम्प्रदायो से आगे है। सामाजिक कुरीतियो का मिटाने म अणुव्रत ने एक हद तक सफलता प्राप्त की है। ऐसे रूढिग्रस्त समाज म जहा नई समाज-व्यवस्था के विचार का प्रवेश ही निषिद्ध माना जाता था अणुव्रत ने नए मोड' के रूप मे क्रान्ति का शखनाद फूका है। इस तरह नैतिक पक्ष को प्रबल करने का आग्रह करने वाला देश का यह एकमात्र आन्दालन है। बल्कि अणुव्रत और नैतिकता आज एक-दूसर क पर्याय बन गए है।

अणुव्रत का उत्स

आरम्भ म अणुव्रत के सामने बहुत व्यापक लक्ष्य नहीं था। मात्र कुछ नवयुवका का यह आक्राश तथा निराशा-भरा कथन था कि आज के युग मे कोई भी प्राणी प्रामाणिकता से नहीं जी सकता। यह उस समय की बात ह जब दूसरे महायुद्ध क बाद सारी दुनिया क लोग अपने-अपने घावा की मरहम-पट्टी कर रहे

थे। निश्चय ही युद्ध ने एक प्रकार का अस्थिर वातावरण पैदा कर दिया था। भारत को उसी समय आजादी प्राप्त हुई। आजादी की लडाई क दौरान दश म जो एक बलिदान का भाव प्रकट हुआ था उसकी ज्योति धीरे-धीरे क्षीण पडती जा रही थी।

नता लाग सत्ता की शतरज खल रह थ कमचारी-अधिकारी अपने घर भरने म लग हुए थे ता आम आदमी अनजान-असहाय यह सारा तमाशा दख रहा था। सब लाग आजादी की खुशिया मे ता डूब हुए थ, पर कत्तव्य का वाध शिथिल पडन लगा था। बड-वडे कल-काखाने खाले जा रहे थे पर सभी लाग इसी प्रयत्न म लग हुए थ कि जो कुछ हाथ लग जाए उसे बटोर लिया जाए। शिक्षा के आकडे बढ रह थे पर दायित्व-वाध कम होता जा रहा था। नये मूल्य जन्म ल रहे थे पुराने सिद्धान्त विवाद के विषय बनते जा रहे थे। बुद्धिवादी तथा राजनता धर्म-गुरुआ को काम रहे थे तो धर्मगुरु बुद्धिवादिया और राजनताआ को काम रह थे।

ऐम समय म राजस्थान के एक छाटे से कस्बे छापर म आचार्यश्री तुलसी उक्त युवका से चर्चा कर रहे थे। युवका का कहना था कि धर्म के सार उपदेश अपने स्थान पर मही हैं पर आज जीवन म उनका काई स्थान नहीं रह गया है। आज एक ऐसा आदमी मिलना मुश्किल है जो धर्म का सही रूप म अपने जीवन म जी सके। आचार्यश्री उनके कथन से सहमत तो नहीं थे पर परिस्थिति से परिचित तो थे ही।

इसी विचार-मथन स भरे हुए व प्रवचन म गए। सहसा उन्हान कहा—"मैं ऐसे पच्चीम आदमी चाहता हू जो मेरी कल्पना का जीवन जी सक।" प्रस्ताव एकदम नया तो था ही अस्पष्ट भी। भला बिना जाने काई आदमी ऐसी स्वीकृति कैसे दे दे? फिर भी लोगो को अपने धर्म-नेता पर विश्वास था। उसी समय कुछ प्रमुख लोग तथा युवक खडे हुए और उन्हाने आचार्यश्री के आह्वान के प्रति अपने आपको बिना शर्त मर्मर्पित कर दिया।

धीरे-धीरे वह कल्पना स्पष्ट हाने लगी। कुछ नियम सामन आए। नव-सूत्री योजना तेरह-सूत्री योजना आदि नामो से कुछ सकल्प-प्रयोग उपस्थित हुए। पर वे नियम पूरे जीवन की पृष्ठभूमि का आकलन नही कर पा रहे थे।

अत अन्त म 1 मार्च 1949 को सहदारशहर म चौरासी नियमा की एक पूरी सूची सामने आई ओर वह विधिवत् अणुव्रत के महल की नींव का पत्थर बन गई। प्रारम्भ म इस आयाजना का नाम 'अणुव्रत-मघ' रखा गया पर ज्या-ज्या दायरा फैलता गया कई आवृत्तिया सामने आयीं और आज ये अणुव्रत के रूप मे सबके सामने है।

अणुव्रत का सदर्भ

अणुव्रत का नाम अणु और व्रत—इन दो शब्दा से जुडकर बना है। यद्यपि

यह शब्द जैन-साहित्य मे आया है और उसकी अर्थ-याजना जैन-श्रावक की आचार-सहिता मे जुडी हुई है पर नैतिकता क मामले म जैन-अजैन का विभाजन कोई अर्थ नहीं रखता। अत अणुव्रत का अर्थ भी छाट-छाट व्रता के सकल्पा क रूप मे स्वीकृत हा गया। अब तक अणुबम के रूप म अणु का नाम काफी विश्रुत हो चुका था। अणुबम चूकि विनाश का प्रतीक था तो अणुव्रत ने उसके विपरीत निर्माण की अपनी भूमिका का चयन कर लिया और उसने अपना एक सार्वजनिक रूप बना लिया। भल ही अणुव्रत की कल्पना क उदय म किसी सम्प्रदाय विशष की प्रेरणा काम करती रही हो पर जब यह आदालन क रूप म सामने आया ता सभी धर्म आर सम्प्रदाया के लाग इसम शामिल हो चुके थ। लक्ष्य के रूप म इस बात को बहुत अच्छी तरह स विधान म भी रखाकित कर दिया गया था। उसकी भाषा इस प्रकार थी —जाति वर्ण सप्रदाय देश और भाषा का भेदभाव न रखत हुए मनुष्य मात्र का सयम की प्ररणा करना।

निश्चय ही आचार्यश्री अणुव्रत के रूप म किसा पुराने सप्रदाय को आगे लाने की बात नहीं सोच रह थ। एक सप्रदाय विशेष के आचार्य क रूप म एक साप्रदायिक शुद्धि का अभिक्रम ता वे पहले से हा कर रहे थे। अब तो उनकी दृष्टि आम आदमी पर टिकी हुई थी।

जब दृष्टि सप्रदाय धर्म देश या जाति स बध जाती हे ता वहा भेद सक्रिय बन जाता है और अनेक विभक्तिया खडी हो जाती हैं। जब अभद दृष्टि खडी होती हे तो विभक्तिया मिट जाती हैं और आत्मा सक्रिय हो जाती है। अणुव्रत यदि पूरी मानवता का आदोलन हे ता इसलिए ह कि यह भेद का नहीं अभद का उत्पादन है। उसने सप्रदाय-विकास के लिए नहीं अपितु आत्म-विकास क लिए ही अपनी दह-सरचना की हे।

यद्यपि जीने की दृष्टि स मनुष्य अकेला ही जाता ह पर उसक जीन म पूरा दुनिया का सहयोग ह। अपनी प्रसन्नता-अप्रसन्नता सफलता-असफलता का हतु व्यक्ति स्वय हात हुए भी वह पूरा समष्टि क साथ जुडा हुआ ह। जब भी व्यक्ति का समष्टि-भाव खण्डित हाता ह ता उसम देश और जाति का विभक्तिया खडा होती हैं। अणुव्रत सारी विभक्तियो को मिटाकर एक समष्टि-पुरुष का स्वीकृति का सूचक ह।

आज जा शस्त्रा की हाड लगी हुई है यह इस भद-बुद्धि का ही परिणाम ह। सकीर्ण राष्ट्रायत्ता क नाम पर आज मनुष्य मनुष्य क विरुद्ध खडा ह। कुछ ही क्षणा म पूरी सृष्टि का सहार सामने खडा हैं। एक राष्ट्र क लाग भी तुच्छ स्वार्थों को लकर अपन ही भाइया क जानी दुश्मन बन हुए ह भयकर लडाइया लड रह है? वास्तव

म य सारी लडाइया स्वार्थ-प्रेरित हैं। जब तक मनुष्य इस सकीण स्वार्थ पर सयम नहीं लगाएगा तब तक दुनिया पर से युद्ध के बादल नहीं छट सकेंगे। इसी उद्देश्य से अणुव्रत के अन्तर्गत अहिसा-सार्वभौम क रूप मे शस्त्रा पर नियत्रण करने के लिए अनेक शाति-यात्राए भी आयोजित हाती रही हैं। आचार्यश्री के नेतृत्व म अहमदाबाद के साबरमती आश्रम से निकलने वाली शाति-यात्रा का इस सदर्भ मे अपना एतिहासिक महत्त्व है। हजारा लागा ने बिना किसी साप्रदायिक धार्मिक या जातीय भेदभाव के उस शाति-यात्रा म भाग लिया। सचमुच नि शस्त्रीकरण के विराध म पूरे दश म एक वातावरण बनाने म ऐसे उपक्रमा का अपनी एक विशष सार्थकता दृष्टिगत हाती है।

अस्पृश्यता-निवारण

मनुष्य-मनुष्य का बाटने के लिए आज अनक प्रकार के भेद अनेक रूपा मे पूरी दुनिया मे काम कर रह है। भारत म भी रग के नाम पर जाति के नाम पर प्रात और प्रदश क नाम पर मनुष्य अनेक भागा म टूटा हुआ है। और तो ओर धर्म के नाम पर भी आदमी टूटा हुआ है। धर्म तो आदमी का आदमी स जाडन वाली ऊर्जा है। पर आदमी एसा है कि उसका भी ताडने का हथियार बना लता है। एसा ही एक मुद्दा है अस्पृश्यता-छुआछूत। सचमुच विश्व-बन्धुत्व की बात करने वाले लागा क सिर पर यह एक बहुत बडा कलक का टीका ह। अपनी महत्ता का साबित करने के लिए दूसर लोगो को हीन मानना निश्चित ही पाप है।

भला जा लोग सवा करते हैं, अपना पूरा जन्म बल्कि पीढिया से सवा में लगे हुए हैं उनको अस्पृश्य मानना धर्म तो क्या मानवता की भी बात नहीं है। कुछ लोग गदे होते हैं उनके आचरण खान-पान गदे हाते हैं। ऐसे लोगा से दूर रहना एक समझ की बात हे पर पूरी-की-पूरी जाति को अस्पृश्य कह दना क्या धार्मिक-भावना का प्रतीक है? उन्ह अपने घर ही नहीं धर्म-स्थानों मे आने से रोकना क्या उचित है? सचमुच एसे अनेक प्रश्न हैं जो अणुव्रत के लिए विचारणीय बनते रह हैं। आचार्यश्री तुलसी ने अत्यन्त स्पष्टता से इन प्रश्नो पर विचार किया ह। एक धर्मगुरु होने के नात उन्हे कुछ लोगो ने हरिजना से दूर रहने की सलाह दी पर आचार्यश्री ने उस सलाह का अस्वीकार कर दिया। लागा ने विरोध किया। आचार्यश्री न उसका सामना किया वे स्वय हरिजना की बस्तिया मे गए।

एक बार कुछ हरिजन लाग स्वय उनक धर्म-स्थान पर पहुच गए। परपरावादी लोगा म खलबलाहट मच गई। उन्होने हरिजना को धर्म-स्थान मे आन से राकना चाहा। आचार्यश्री ने कहा— 'इन्ह धर्म-स्थान म आने स रोकना मुझ यहा

रहने से रोकना है। इस बात पर मैं कड़-से-कड़ा कदम उठा सकता हूं।' परिणाम यह हुआ कि लोग चुप रह गए।

एक बार आचार्यश्री की शिष्याएं एक हरिजन के मकान में ठहर गईं। स्थानीय सवर्ण लोगों में खलबलाहट मच गई। उन्होंने विरोध किया और स्थान-परिवर्तन के लिए दबाव डाला। बात आचार्यश्री के पास पहुंची। आचार्यश्री ने सवर्ण लोगों की बात को अस्वीकार कर दिया और साध्वियों को वहीं रहने का आदेश दिया।

इतना ही नहीं आचार्यश्री ने हरिजनों से स्वयं भिक्षा भी ग्रहण की। अणुव्रत का एक वार्षिक अधिवेशन तो हरिजनों के गांव में ही आयोजित किया गया था।

संस्कार-निर्माण

अणुव्रत का मानना है कि इस दृष्टि से दुहरा कार्य करना होगा। एक ओर जहां अछूत समझी जाने वाली जातियों के संस्कारों को शुद्ध कर उनको हीन-भावना से मुक्त करना होगा, वहीं दूसरी ओर अपने आपको उच्च समझने वाले लोगों के मन से घृणा के संस्कारों को दूर करना होगा। इस दृष्टि से अणुव्रत के अन्तर्गत संस्कार-निर्माण का एक पूरा कार्यक्रम चल रहा है। इस दृष्टि से हजारों लोगों को व्यसन-मुक्त बनाकर स्वस्थ जीवन जीने की प्रेरणा दी जा रही है।

चूंकि यह सवाल किसी एक व्यक्ति समाज या सम्प्रदाय का नहीं है। यह एक जलती हुई राष्ट्रीय समस्या है। यद्यपि महात्मा गांधी ने इस दिशा में बहुत रचनात्मक कार्य किया था और भी अनेक लोग इस दिशा में काम करते रहे हैं कर रहे हैं। पर संस्कारों की यह समस्या इतनी गहरी जमी हुई है कि अभी बहुत कुछ करना शेष है। कानून बना देने मात्र से कोई समस्या हल नहीं हो जाती। इसके लिए तीव्र प्रयत्न करने आवश्यक हैं। आज भी देश में हरिजनों के साथ जो दुर्व्यवहार हो रहा है वह न केवल अशोभनीय है अपितु अभद्र है। उनकी पूरी बस्ती की बस्ती को जला देना सचमुच एक अमानवीय काम है।

अस्पृश्यता-निवारण की दृष्टि से भारतीय संस्कार निर्माण समिति के रूप में अणुव्रत का एक सघन कार्यक्रम चल रहा है। समिति के पास अपनी एक प्रदर्शनी है जिसके माध्यम से अछूत माने जाने वाले हजारों-हजारों लोगों में —खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में व्यसन-मुक्ति तथा अन्धविश्वासों को मिटाने का गहरा कार्य हुआ है हो रहा है।

अणुव्रत के अन्तर्गत इस दिशा में राजस्थान में अनेक क्षेत्रों में थोड़ा कार्य चल रहा है। व्यक्तिगत सम्पर्क तथा अनेक हरिजन-सम्मेलनों के माध्यम से काफी लोग सम्पर्क में आए हैं। कुछ हरिजन बस्तियों में अणुव्रत वाचनालय भी खुले हैं। वहां

हरिजन छात्रावास के सचालन की प्रायाजना पर भी काफी गहराई म विचार-विमर्श हा रहा है।

अणुव्रत लोक-भारती के रूप म हरिजना की कुछ ऐसी कलाकार मडलिया भी बनाई गई हैं, जो अस्पृश्यता व्यसन-मुक्ति तथा समाज-सुधार कार्यक्रम का एक राचक परिवेश म प्रस्तुत करन म सलग्न हैं।

सहयोगी सस्थान

अणुव्रत का आग बढान म आचायश्री का अपना तजस्वी व्यक्तित्व ता है ही उसी क साथ-साथ लगभग सात सौ अकिचन साधु-साध्विया की एक प्रशिक्षित सना भी समर्पित भाव स यह कार्य कर रही है। जैनेन्द्रजी बहुत बार कहत थे—"सचमुच बिना किसी अर्थ-सयाजना के यह सना जितना सार्थक तथा प्रभावी काय कर रही है यह अपन आप म अनुपम है। पाद-विहारी हाने क कारण यह सत शक्ति शहरा स लकर ठठ गावा तक पहुचती है। स्वय आचार्यश्री ने भी अपन जीवन म पचास हजार किलामीटर स अधिक भूमि की परिक्रमा कर इस दृष्टि स एक रिकार्ड ता स्थापित किया ही है जन-जन म नैतिक बीज-वपन का एक महत्त्वपूर्ण काय भी किया है।" काका काललकर ठीक ही कहते हैं— "भिक्षु और श्रमण शाति-सना क सैनिक हैं। नैतिक प्रचार और प्रसार के लिए उन्हान जीवन का जगाया है यह उचित ही है। अणुव्रत आदालन नैतिक और विचार क्राति क साथ बौद्धिक अहिसा पर बल दता है। सचमुच सन्यासिया की इन पदयात्राओं न पूर्व और पश्चिम तथा उत्तर और दक्षिण की दूरी का पाटने म भा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है।"

साधु-साध्वियों के अतिरिक्त अणुव्रतिया की अनेक सस्थाए भी इस कार्य को आगे बढाने म सक्रिय व सहयोगी हैं। उनमे सबसे प्रमुख स्थान है अणुव्रत महा समिति का। श्री रविशकर महाराज डॉ आत्माराम श्री जैनेन्द्रकुमार श्री यशपाल जैन श्री जयसुखलाल हाथी भाई जैसे देश के चोटी क सत वैज्ञानिक साहित्यकार तथा राजनता इस महा समिति की अध्यक्षता करत रहे हैं। इस केन्द्रीय समिति की दश-भर म अनेक शाखाए हैं। उनके अन्तर्गत समय-समय पर पूर देश म व्यसन-मुक्ति, मिलावट-विरोधी रूढि-उन्मूलन तथा भ्रष्टाचार-विरोध के लिए अभियान चलाय जाते रहे हैं। इन अभियानो से अनक स्थाना पर व्यक्तिगत चरित्र-निर्माण का काम हुआ है जो कि अणुव्रत की अपनी विशिष्ट उपलब्धि है। हजारा की सख्या म लाक अणुव्रती बने तथा उन्हाने अपने व्यवसाय-धन्धा म प्रामाणिकता का उदाहरण पश किया है। कई जगह पर शुद्ध खाद्यान भडार भी सक्रिय हुए हैं। साथ

ही साथ अनेक स्थानो म व्यापारियो क ऐसे व्यापारिक सगठन भी उदय म आते रहे है जिन्होने व्यापार के क्षेत्र म अपनी एक मिसाल कायम की है।

अनेक समितिया स्थानीय तौर पर चिकित्सा-शिविरो छात्र-शिविरो, छात्र वृत्तियो आदि के रूप म जन-सेवा के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही हैं।

अणुव्रत महा समिति अणुव्रत परीक्षाओ का एक वृहद् आयोजन भी करती है जिसम हजारो की सख्या मे छात्र-छात्राए नैतिक जीवन का बोध-पाठ लेकर राष्ट्र-निर्माण की दिशा म अपने ठोस कदम बढाते हैं।

महा समिति का 'अणुव्रत' के नाम से हिन्दी म एक पाक्षिक मुख पत्र भी निकलता है जो नैतिक विचारो को आगे बढाने मे एक अग्रदूत पत्र का कार्य कर रहा है। तमिलनाडु समिति की ओर से 'अणुव्रतम्' नाम से भी एक मासिक पत्र प्रकाशित हो रहा है। हरियाणा से भी अणुव्रत-भावना के रूप म एक पाक्षिक पत्र प्रकाशित होता है। गुजराती म अणुव्रत आन्दोलन पत्र का मासिक प्रकाशन होता है।

अणुव्रत-साहित्य के प्रकाशन की दृष्टि से समिति के अतिरिक्त आदर्श साहित्य सघ का भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। काफी मौलिक तथा जीवन-प्रेरक साहित्य यहा से प्रकाशित होता रहा है।

समिति क द्वारा प्रति वर्ष पूरे देश म एक 'अणुव्रत उद्‌बोधन सप्ताह' का आयोजन भी होता है जिसम देश और दुनिया की ज्वलत समस्याओ पर केवल लोक-चेतना को जागृत ही नहीं किया जाता हे अपितु उस सकल्पबद्ध भी बनाया जाता है। हजारो-हजार लोग इस दृष्टि से हर वर्ष अणुव्रत के साथ जुडते है।

अणुव्रत पुरस्कार

अणुव्रत की भावना को व्यापकता और सम्मान प्रदान करने के लिए अणुव्रत क एक सहयोगी सस्थान 'जय तुलसी फाउडेशन' की ओर से प्रति वर्ष एक एसे व्यक्ति को सम्मानित / पुरस्कृत भी किया जाता है जिसकी चरित्र के क्षेत्र म विशेष सेवाए रहती हैं। इस पुरस्कार की अर्थराशि एक लाख रुपय है। अब तक यह पुरस्कार प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ आत्माराम प्रसिद्ध साहित्यकार श्री जैनन्द्रकुमार प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री वैज्ञानिक डॉ डी एस कोठारी तथा सर्वोदयी सत श्री शिवाजी भावे प्रसिद्ध राजनेता शकरदयाल शर्मा एव शिवराज पाटिल जैसे तप हुए महानुभावो का प्रदान किया जा चुका है। इस पुरस्कार का निर्णय देश क प्रमुख लोगो का एक तटस्थ समिति करता है।

इसी प्रकार अणुव्रत विश्व भारती के अन्तगत अणुव्रत एक शाति पुरस्कार भी श्री मोरारजी भाई देसाइ श्री इकेडा तथा श्री क्वेया आदि महानुभावो को प्रदान किया

गया है। अणुव्रत-जीवन का मूर्त रूप देने के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण प्रयाग मेवाड-राजसमन्द म शुरू हो गए हैं। पूर परिवार के जीवन क हर पहलू पर अणुव्रत भावना को प्रतिबिम्बित करने का अणुव्रत विश्व भारती का यह एक महत्त्वपूर्ण और रचनात्मक कार्य चल रहा हे। मेवाड-मारवाड के कुछ गावा का अणुव्रत भावना से भावित करने के कुछ विशिष्ट प्रयोग भी चल रहे हैं। एस अणुव्रत-गावा म शिक्षा-व्यवस्था, न्याय-व्यवस्था स्वच्छता-व्यवस्था आदि म लकर अर्थ-व्यवस्था तक को सुधारने क प्रयाग शामिल हैं।

अणुव्रत की गतिविधिया का सचालन करने क लिए दिल्ली म अणुव्रत भवन म अणुव्रत न्याम एक महत्त्वपूर्ण अर्थस्रोत है।

इसी प्रकार दिल्ली म एक अणुव्रत साधनाकेन्द्र भी स्थापित है जहा देश-विदेश स आए हुए लोग साधना का प्रत्यक्ष अनुभव करते है।

अणुव्रत के अन्तर्गत महिला जागृति का भी अपना एक उज्ज्वल अध्याय है। असल म समाज-सरचना म महिलाआ का अपना विशिष्ट स्थान होता ह। आचार्य श्री ने अशिक्षित और रूढिग्रस्त महिला समाज मे जागृति का एक एसा शखनाद फूका है जिससे अनेक महिलाए इस दिशा म आग आ रही है। बल्कि इस दृष्टि से कुछ महिलाआ ने जा प्रतिमान-कीर्तिमान स्थापित किए है वे पूरे आन्दोलन के लिए गौरव का विषय ह।

शिक्षा ओर अणुव्रत

आजादी के बाद देश के निर्माण की सर्वाधिक आवश्यकता है। निर्माण के भौतिक पक्ष को केन्द्र मानकर सरकार ने अपना सारा श्रम और सामर्थ्य उस दिशा म प्रवाहित किया। पर जैसा कि हम देखते हैं उसमे कोई चैतन्य प्रकट नहीं हुआ। आज देश मे अनेक विश्वविद्यालय हैं कॉलेजा स्कूलो का तो काई पार ही नहीं है, पर लगता है कि वह सारा प्रयत्न पयास नहीं है। इसलिए यह आवश्यकता प्रतीत हा रही है कि समाधान से कुछ नये क्षितिया की खोज की जाए।

अणुव्रत वर्षो से इस खाज-यात्रा म सलग्न है। इस दृष्टि से उसका समाधायक सूत्र है—जीवन-विज्ञान। अणुव्रत का मानना है कि वातावरण भी बुराइया का एक कारण है। पर वही एकमात्र कारण नहीं हैं। बल्कि वह सबसे वडा कारण भी नहीं ह। क्योंकि हम दखत ह कि कठिन परिस्थितिया म भी बहुत सारे लाग अपने चरित्र को खण्डित नहीं हान देत। यदि बहुत सारे लाग परिस्थितियो के सामने रुक भी जात हैं ता वह परिस्थितियो से निपटने का तरीका नहीं हैं। परिस्थितिया ता ह, सवाल ता उनके समाधान का है। इस दृष्टि से अणुव्रत मनुष्य

की आन्तरिक सरचना पर दृष्टिपात करता है। यदि कुछ लाग परिस्थितिया के सामने नहीं झुकत हैं ता शप लागा को भी एसा बनाया जा सकता है कि व भी उनक सामने सीना तानकर खडे रह सक। यही आन्तरिक-सरचना का मूल बिन्दु ह। यह परिस्थिति-सुधार का निपध नहीं है अपितु आन्तरिक मजबूती से उसस निपटन की सामर्थ्य जुटाने का प्रयत्न है। यहीं आन्तरिक सरचना का यह प्रयत्न भाव-शुद्धि स जुड जाता है।

अणुव्रत ने जीवन-विज्ञान क रूप म एक एसी शिक्षा पद्धति का विकास किया है जिसम मनुष्य की भावधारा म निश्चित परिवर्तन हा सकत हैं। भारत-सरकार राजस्थान सरकार तथा अनेक विश्वविद्यालया म इस पद्धति पर वैज्ञानिक प्रयोग हो चुक हें आर उनमे यह सिद्ध हा चुका हे कि जीवन-विज्ञान से मनुष्य की भावधारा म निश्चित परिवर्तन हाते हैं।

भावधारा का नियन्त्रण करती हैं हमारी अन्त स्रावी ग्रन्थिया। ध्यान तथा आसन प्रयाग से ग्रन्थिया क स्रावा म परिवर्तन किया जा सकता। उदाहरण के तोर पर बच्चे मे पीयूप-ग्रन्थि सक्रिय रहती है। उससे उसके जीवन म पवित्रता रहती हे। ज्या-ज्यो वह बडा होता जाता है उसकी पायूष-ग्रन्थि निष्क्रिय हाती जाती हे और उसकी पवित्रता खडित होती जाती है। यदि पीयूप-ग्रन्थि के स्राव का नियत्रित रखा जा सक ता बच्चे की पवित्रता का कायम रखा जा सकता है। इस पर कुछ प्रयोग हो भी चुके ह। इसी प्रकार प्रेक्षाध्यान क अतर्गत पूरे शिक्षा क्षेत्र म जीवन-विज्ञान ने कुछ सूत्र प्रस्तुत किए है।

जीवन-विज्ञान

शिक्षा का प्रश्न बहुत उलझा हुआ है। यह ता जरूरी हे कि शिक्षा मूल्यपरक हो सामाजिक दायित्व की वाहक हो पर साथ ही वह जीवन-मूल्या की उद्दीपक हो यह भी आवश्यक हे। इस दृष्टि से आध्यात्मिक जीवन तथा नैतिक शिक्षा की भी चर्चा हाती रही है पर उनक सामने उलझन भी कम नहीं है। विभिन्न सम्प्रदाया की उपस्थिति म किस सम्प्रदाय द्वारा मान्य आध्यात्मिकता एव नैतिकता की शिक्षा विद्यार्थी का दी जाए, यह उलझन का एक वलय बना हूआ हे जिसम घुसने का कोई दरवाजा नहीं हें। आध्यात्मिक एव नतिक शिक्षा कैसे दी जाए— यह दूसरी समस्या ह। बहुत सार शिक्षाविदो ने इसका एक समाधान सूत्र दिया कि विद्यार्थिया को महापुरुपो की जीवनिया पढाई जाए। कहानिया के माध्यम स नतिक नियमा के प्रति आकर्पण पैदा किया जाए। नैतिकता के सिद्धान्त ओर नियम पढाए जाए। इन समाधान-सूत्रा को गलत ता नहीं कहा जा सक्ता पर परिपूर्ण भी नहीं माना

जा सकता।

आध्यात्मिकता और नैतिकता मनुष्य की आन्तरिक आस्था का प्रश्न है। इस आस्था को जगाने के लिए आंतरिक परिवर्तन जरूरी है। राष्ट्र-प्रेम मानवता का प्रेम सन्तुलित अर्थ-व्यवस्था और पारिपार्श्विक वातावरण—सब उसमें सहयोगी बनते हैं किन्तु आध्यात्मिक और नैतिक विकास का मूल कारण है— व्यक्ति का आन्तरिक परिवर्तन। जब तक उसके प्रति ध्यान आकर्षित नहीं होता तब तक शिक्षा की समस्या हल नहीं हो सकती। इस दृष्टि से जीवन-विज्ञान आंतरिक रूपान्तरण का वरदान बनकर शिक्षा के नये आयाम के रूप में अणुव्रत के साथ जुड़ रहा है।

वर्तमान शिक्षा-पद्धति में बौद्धिक विकास पर अत्यधिक जोर दिया जा रहा है। इसलिए आज के महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों से प्राध्यापक वैज्ञानिक विधि-विशेषज्ञ प्रशासक शिक्षाशास्त्री और व्यवसायी निकल रहे हैं। मस्तिष्क का बायां पटल बहुत सक्रिय हो रहा है दायां पटल निष्क्रिय हो रहा है। इस असन्तुलन से पूर्ण व्यक्तित्व असन्तुलित बन रहा है। यह असन्तुलन ही हिंसा के लिए जिम्मेदार है। जीवन-विज्ञान संतुलित व्यक्तित्व पर बल देता है। उसमें बौद्धिक तथा भावनात्मक विकास में संतुलन आता है। शिक्षा के क्षेत्र में जीवन-विज्ञान से छात्रों का परिचय कराने की दृष्टि से अणुव्रत शिक्षक संसद विशेष रूप से सक्रिय है।

आज शिक्षकों के अनेक संगठन कार्यरत हैं। पर उनमें अधिकतर अधिकार की मांग ही प्रबल है। अधिकार के साथ-साथ दायित्व-बोध जागना भी आवश्यक है। बल्कि कर्तव्य की भूमिका पर जो अधिकार प्राप्त होता है वही आन्तरिक ऊर्जा के जागरण का वाहक बन सकता है। उसी से शिक्षकों की सृजनात्मक शक्ति का उदय हो सकता है।

कुछ लोगों का मानना है कि आज की शिक्षा-प्रणाली ही गलत है। पर अणुव्रत का यह मानना नहीं है। यदि शिक्षा-प्रणाली ही गलत होती है तो आज जो इतने वैज्ञानिक इंजीनियर डॉक्टर आदि निकल रहे हैं वे कैसे निकलते? अतः शिक्षा-प्रणाली गलत है इसकी अपेक्षा यह कहना ज्यादा उपयुक्त होगा कि वह अपर्याप्त है। उसमें आज आंतरिक जागरण का कोई प्रावधान ही नहीं है। इसलिए उसमें कर्तव्य-बोध का भाव जागे भी तो कैसे? जीवन विज्ञान कर्तव्यबोध की जागृति का उपाय है। वह स्वयं शिक्षक के हित में तो है ही पर छात्र तथा समूचे राष्ट्र की संरचना में भी एक महत्त्वपूर्ण उपाय है।

इसके अतिरिक्त अणुव्रत से सम्बन्धित बाल-मन्दिरों से लेकर स्कूल और कॉलेजों की भी एक शृंखला खड़ी हुई है। अणुव्रत बाल-निकेतनों की दृष्टि से एक नया पृष्ठ-बल अणुव्रत को प्राप्त हो रहा है। उसके परिष्कार और परिवर्धन की

आवश्यकता से तो इनकार नहीं किया जा सकता पर इसस इतना तो स्पष्ट है हा कि शिक्षा के क्षेत्र म अणुव्रत कुछ करने क लिए तत्पर है तैयार ह।

सर्वधर्म सद्भाव का मच

चूकि अणुव्रत एक असाम्प्रदायिक आदोलन हे अत इस मच पर प्राय सभी धर्मो के लाग एकत्र होते रहे हैं। गहर म देखा जाए तो सर्वधर्म सद्भाव की दृष्टि से अणुव्रत ने एक अनुकूल वातावरण वनाने म काफी मदद की है। यह सन् 1958 की बात है जब आचार्यश्री का चातुर्मास कानपुर म था। उस समय अणुव्रत के मच पर वहा एक सर्वधर्म सम्मेलन का आयोजन किया गया था। अनेक धर्मो क प्रतिनिधि प्रवक्ता उसम सम्मिलित हुए थे। मुस्लिम धर्म के प्रवक्ता ने कहा— ''आज का दृश्य दखकर म प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हू। सब धर्म-गुरुआ की एक मच पर उपस्थिति कानपुर के इतिहास म पहली घटना हे। ऐसे आयोजन ही धार्मिक सद्भाव का वातावरण तैयार कर सकते है।''

वास्तव मे यह मच कवल विभिन्न धर्म-गुरुओ के सम्मेलन का केन्द्र ही नहीं अपितु सहगमन का भी एक सार्थक आयाम प्रस्तुत करता है।

फादर डॉ जे एम विलियम जो स्वय एक अणुव्रती थे तथा जिन्होने देश-विदश मे अणुव्रत-प्रचार का अर्थपूर्ण प्रयत्न किया है एक जगह कहत हैं— ''अणुव्रत आदालन न मुझमे असीम आत्मबल ओर साहस फूका है। यूराप जैसे पश्चिम के ठडे मुल्कों में अपनी यात्रा मे भी मैंने मादक पदार्थो को नहीं छुआ यह अणुव्रत आदोलन की ही प्रेरणा थी।''

''प्रभु यीशु क्राइस्ट के सिद्धान्तो और अणुव्रत आदोलन के विचारो मे मैं साम्य का दशन करता हू।'

राष्ट्र सत तुकडोजी ने कहा था— 'आचार्य तुलसीजी ने अणुव्रत आन्दालन द्वारा चरित्र-निर्माण के कार्य मे महत्त्वपूर्ण प्रयास किया है। मेरी शुभकामनाए आपके साथ हे।''

बाद्ध-धर्म के बहुचर्चित धर्मगुरु श्री दलाई लामा ने कहा ह— ''धर्म क सिद्धाता का जीवन के देनिक व्यवहार म अनुसरण होना चाहिए। इस दृष्टि से अणुवत प्रचारको द्वारा मानव-विवेक जागृत करने का प्रयास हो रहा है यह बहुत सुन्दर ह और अणुव्रत प्रतिष्ठा से ही सम्भव है।''

इस तरह विनाबा भावे फ्युजा गुरुजी आदि अनेक राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय सत अणुव्रत-मच पर उपस्थित होत रहे है आर इसे बल प्रदान करत रह हैं।

आचार्यश्री न सर्वधर्म सद्भाव की दृष्टि स एक पच-सूत्री याजना भी प्रस्तुत

की। वह इस प्रकार है—

१ मडनात्मक नीति बरती जाए। अपनी मान्यता का प्रतिपादन किया जाए। दूसरा पर मौखिक या लिखित आक्षेप न किए जाए।
२ दूसरा के विचारा के प्रति सहिष्णुता रखी जाए।
३ दूसरे सम्प्रदाय और उसक अनुयायिया क प्रति घृणा और तिरस्कार की भावना का प्रचार न किया जाए।
४ कोई सम्प्रदाय-परिवर्तन कर तो उसक साथ सामाजिक बहिष्कार आदि अवाछनीय व्यवहार न किया जाए।
५ धर्म क मौलिक तत्त्वा— अहिसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का जीवन-व्यापी बनान क सामूहिक प्रयत्न किए जाए।

राष्ट्रीय आन्दोलन

केवल धार्मिक ही नहीं अनक नास्तिक लाग भी इस ओर आकृष्ट हुए हैं। कम्युनिस्ट विचारधारा के लागा न भी अणुव्रत को समर्थन दिया है। एक बार आचार्यश्री दक्षिण भारत की यात्रा म थ। पूना-सतारा म वे अणुव्रत की एक बडी सभा म प्रवचन कर रह थ। अचानक एक युवक आग मच पर आया और माइक पर खडा हो गया। व्यवस्थापक लाग घबराए— न जान यह क्या कर देगा। पर आचार्यश्री ने उसे नहीं टाका। यह माका प्राप्त कर वह युवक बोला— "अपने जीवन म आज तक मैंने किसी भी धर्मगुरु को नहीं माना। वास्तव म मेरी धर्म म कोई आस्था ही नहीं है। पर आज आपने धर्म की जैसी व्याख्या की उसस तो लगता है मैं भी धार्मिक हा सकता हू। मुझ परलोक म विश्वास नहीं है पर मैं अणुव्रत से प्रभावित हू और आज पहली बार किसी धर्मगुरु के — आपके पैर छूकर प्रतिज्ञा करता हू कि मैं अणुव्रत का पूरा-पूरा पालन करूगा।" फिर तो सब लाग आश्चर्यचकित रह गए। आचार्यश्री ने कहा— "मुझे ऐसे नास्तिका की भी जरूरत है।"

जयपुर म एक कम्युनिस्ट नता आचार्यश्री के सम्पक मे आए। उन्हे अणुव्रत की जानकारी दी गई तो व बोल— "ऐसे धर्म का तो हम कम्युनिस्ट भी पालन कर सकत हैं।" यही कारण है कि ए क गोपाल एन सी चटर्जी सुरन्द्रनाथ बनर्जी डॉ राममनोहर लोहिया जयप्रकाश नारायण आदि देश क प्रमुखतम राजनेताओं के साथ भी अणुव्रत का गाढ सम्पर्क रहा।

साहित्यकारा तथा पत्रकारा का भी अणुव्रत को आत्मीय सहयोग-समर्थन प्राप्त हाता है। सर्वश्री श्रीमन्नारायण सत्यदेव विद्यालकार कामरेड यशपाल

गोपीनाथ अमन जैनन्द्रकुमार यशपाल जैन अभयकुमार जैन मुकुटबिहारी शाभालाल गुप्त रामधारी सिह दिनकर मैथिलीशरण गुप्त सच्चिदानन्द वात्स्यायन विमल मित्र, हरवशराय बच्चन आदि पुरानी पीढी के साहित्यकारा स लेकर राजेंद्र अवस्थी, नन्दकिशार नौटियाल हरिशकर व्यास, विनाद मिश्र आदि नयी पीढी के साहित्यकारा-सम्पादका म स बहुत कम लाग बचे हैं जिन्हान किसी-न किसी रूप म अणुव्रत पर अपनी कलम न चलाई हा।

सचमुच पत्रकारा ने बिना किसी आर्थिक प्रलाभन के अणुव्रत का इतना सहयोग-समर्थन दिया है जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। यह अणुव्रत क प्रथम अधिवेशन की बात है। उस समय भी पत्रा ने अणुव्रत को जा अभिव्यक्ति दी वह उल्लखनीय है। उस समय हिन्दुस्तान टाइम्स ने अणुव्रत पर टिप्पणी करत हुए लिखा था— चमत्कार का युग अभी समाप्त नहीं हुआ एक किरण दीख पड़ी है। जब अनुचित रूप से कमाये गये पैस पर फलने-फूलने वाले व्यापारी एकत्रित होकर सचाई स जीवन बिताने का आन्दोलन शुरू करत हैं तब कोन उनसे प्रभावित नहीं हागा। आचार्य तुलसी जो कि इस सगठन या आन्दोलन के दिमाग हैं, राजपूताना के रेतील मैदाना को पार कर दिल्ली की सडका पर आए हैं।

बगला के प्रमुख दैनिक 'आनन्द बाजार पत्रिका' ने बडे आश्चर्य के साथ यह सवाद दिया था—तो क्या कलियुग का अवसान हो गया है? क्या सतयुग प्रकट होने को है? नई दिल्ली ३० अप्रैल का समाचार है कि कितने ही व्यापारिया कराडपतियो ने यह प्रतिज्ञा की है कि वे कभी चार-बाजारी नहीं करगे।

फिर तो अनेक प्रतिष्ठित पत्रा ने अणुव्रत पर न केवल खबरें ही छापीं अपितु विशेष लेख तथा विशेषाक भी प्रकाशित किए। यह सब पैसे के बल पर नहीं हुआ। वास्तव मे पैसे के बल पर इतनी व्यापक प्रसिद्धि सभव भी नहीं है। यह सब कुछ तो इस अभियान की अपनी गरिमा के कारण ही हो सका। सभी लागा का इस आन्दोलन ने इतना आन्दोलित कर दिया कि वे स्वय ही इस आर आकृष्ट हुए।

केवल भारतीय नहीं अपितु विदेशी पत्रा में अणुव्रत की गूज-अनुगूज होती रही है। सुप्रसिद्ध न्यूयार्क टाइम्स ने 'एटॉमिक बम' शीर्षक स १५ मई १९५० क अक म एक सवाद प्रकाशित करते हुए कहा—अन्य अनेक स्थाना के कुछ व्यक्तिया की तरह एक दुबला-पतला ठिगना चमकती आखा वाला भारतीय ससार की वर्तमान स्थिति क प्रति चिन्तित है। चालीस वर्ष का आयु का वह आचार्य तुलसी हैं जा जैन तरापथ समाज का आचार्य है। वह अहिसा म विश्वास रखने वाला धार्मिक सम्प्रदाय हैं। आचार्य तुलसी ने १९४९ म अणुव्रत सघ की स्थापना की थी। जब समस्त भारत को व्रती बना चुकग तब शेष ससार का व्रती बनाने की उनकी योजना है।

सबका सहयोग

अणुव्रत क प्रचार का एक सशक्त माध्यम रहा है पद-यात्राए। इससे गरीब की झापडी से लेकर राष्ट्रपति भवन तक अणुव्रत को आवाज पहुची है। निश्चय ही पद-यात्राआ क माध्यम से अणुव्रत क साथ लाखा-करोडा का सम्पर्क हुआ है। गरीब लोग जहा व्यसन-मुक्त होकर स्वस्थ ममाज क निर्माण म सहयोगी बन हैं वहा दश के बडे-बडे राजनेता भी अनेक प्रकार से अणुव्रत के सम्पर्क म आते रह हैं। व केवल सम्पर्क म ही नहीं आए अपितु उन्हान अनक राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय सभा-सम्मलना म अपन विचार भी प्रकट किए हैं। तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ राजन्द्रप्रसाद न अणुव्रत-अणुशास्ता क सान्निध्य म भारत की राजधानी मे राजघाट पर आयोजित मैत्री-दिवस क आयोजन म हजारा नर-नारिया के बीच कहा था— "यह हमारे देश के लिए सौभाग्य की बात है कि धर्माचार्यो क मन म इस प्रकार की भावना पैदा हुई है। हमारे देश का पथ-प्रदर्शन धर्माचार्यो द्वारा ही हाता आया है। सम्प्रदाय से ऊपर उठकर वे समस्त मानव जाति क लिए काम करते आए हैं। अणुव्रत आन्दोलन जो कि आचार्य तुलसी द्वारा प्रवर्तित है का में हमेशा से समर्थक रहा हू और इसके लिए आप (आचार्य तुलमी की ओर सकत कर) अगर कोई पद दना चाह ता मैं समर्थक का पद लेना चाहूगा।"

सचमुच डॉ राजन्द्रप्रसाद पहले राजपुरुष हैं जिन्हाने अणुव्रत को अपना खुला ममर्थन प्रदान किया था। प्रारम्भ म चूकि अणुव्रत तेरापथ के एक आचार्य द्वारा प्रवर्तित हुआ था अत लागा म इसके प्रति अनेक आशकाए थी। पर डॉ राजेन्द्रप्रसाद ने उस समय भी इस आन्दोलन की असाप्रदायिकता का परख लिया था। इसलिए व इसके प्रबल समर्थक रहे।

फिर ता पडित नहरू ने भी अणुव्रत पर अनेक बार अपने विचार प्रकट किए। सप्रू हाउस म आयाजित एक कार्यक्रम मे उन्होने कहा था— "हमे अपने देश को महान बनाना है तो उसकी बुनियाद गहरी होनी चाहिए। गहरी बुनियाद चरित्र की हाती है। कितना अच्छा काम अणुव्रत आन्दालन मे हो रहा है।"

इस प्रकार दश का शायद ही काई प्रमुख पुरुष बचा हा जिसन अणुव्रत की प्रशसा न की हो। बल्कि ससद तथा विधान सभाआ म भी अनेक बार इसकी गूज हाती रही हे। यहा तक कि अणुव्रत ससदीय मच क रूप मे सासदो का मगठन भी खडा हुआ है।

उत्तर प्रदेश की विधानसभा म विधायक सुगनचन्द्रजी द्वारा एक सकल्प जिस पर सत्ताईस विधायकों के हस्ताक्षर थे प्रस्तुत किया गया— "यह सदन निश्चय करता है कि उत्तर प्रदेशीय मरकार देश मे आचार्यश्री तुलमी द्वारा चलाए गए अणुव्रत

आन्दोलन म यथोचित सहयाग तथा सहायतता द।'' विधायक श्री लालता प्रसाद सानका न कहा— ''यह प्रस्ताव सरकार से धन की माग नहीं करता और न किसी अन्य वस्तु की माग करता है। यह प्रस्ताव सरकार स यही चाहता है कि उसक शासन म रहने वाले लोगा की नैतिक और आध्यात्मिक चरित्र सम्बन्धी बाता म सुधार हो।''

ठीक इसी प्रकार ३० जनवरी १९६८ को राजस्थान विधानसभा म विधायक श्री प्रेमसिंह सघवी, श्री महेन्द्रसिंह ओर आदित्येन्द्र द्वारा एक गर सरकारी प्रस्ताव रखा गया। प्रस्ताव की भाषा इस प्रकार है— ''सदन यह निश्चय करता है कि आचार्यश्री तुलसी द्वारा प्रवर्तित अणुव्रत अभियान को समर्थन दिया जाये ओर उमे एक राष्ट्रीय नतिक आन्दालन के रूप म स्वीकार किया जाय।'' प्रस्ताव की बहस मे भाग लेते हुए राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री मोहनलाल सुखाडिया ने कहा— ''मे व्यक्तिश यह समझा हू कि जो आदोलन अणुव्रत आदालन के नाम से चलाया जा रहा है उस आदोलन का म पूरी तरह से समर्थक हू। यह आदालन देश को शुभ रास्ते पर ले जाने के लिए अच्छा है। इस पर देश के किसी भी समाज के व्यक्ति का मतभेद नहीं हो सकता।''

इससे स्पष्ट है कि अणुव्रत आदोलन क लिए हर दिशा से सहयाग-समथन प्राप्त होता रहा हे।

विरोध का स्वर

पर इसका यह अर्थ नहीं हे कि सभी लोगो न अणुव्रत का स्वागत किया। बहुत सारे लागो ने इसके विरोध मे भी स्वर उठाये। अन्दर से भी बाहर से भी आलोचनाए हुई। पर आचार्यश्री उन आलोचनाओं से घबराए नहीं अपितु उनम लाभ उठाया ओर आदालन को एक ऐसा स्वस्थ स्वरूप प्रदान किया जिसस यह दिनोदिन प्रगति पथ पर आग बढता गया।

आतरिक विराध का स्वर यह था कि आचार्यश्री जेन आर अजेन का सम्मिश्रण कर एक घपला पेदा कर रहे ह। इसस एक प्रकार की वर्ण-सकरता पेदा होगी। जन धर्म की विशिष्टता समाप्त हो जाएगी। सम्यक्तवी आर मिथ्यात्वा म कोई भेद नहीं रह जाएगा। पर आचार्यश्री न इन प्रश्ना को इतने तर्कसगत तरीके स प्रत्युत्तरित किया कि अन्तत सभी लाग उनक न कवल प्रबल समर्थक ही बन गए अपितु सहगामी भी बन गए।

बाहरी प्रतिशाध क स्वर का तर्ज यह था कि आचार्यश्री प्रच्छन्न रूप स लागा पर जैनधर्म का लाद रहे हैं पर अणुव्रत का अभिमत ता स्पष्ट था। यह किसा प्रकार

की सकीर्णता मे विश्वास नहीं करता था।

रचनात्मक आलाचनाओं के लिए आचार्यश्री ने सदा अपने दरवाजे खुल रखे। उदाहरण के लिए हम श्री किशारलाल मशरूवाला की 'हरिजन' की टिप्पणी को ले सकते हैं। उन्हाने लिखा— "इस सघ म सबका प्रवेश हो सकता है। जाति धर्म रग स्त्री पुरुष आदि का काई विचार नहीं किया जाता। इस सघ मे अपने सदस्या के लिए सत्य अहिसा अस्तेय ब्रह्मचर्य अपरिग्रह आदि नाम देकर कुछ विभाग बनाये गये ह और उनमे हर एक अणुव्रत बताये हैं। यद्यपि यह सब धर्मो के मानन वालो के लिए खुला ह आर अहिसा के सिवाय बाकी सब व्रता के नियम उपनियम साम्प्रदायिकता स मुक्त मामाजिक कर्तव्या पर निगाह रख बनाए गए है लेकिन अहिंसा के नियमा पर पथ के दृष्टिकोण की पूरी छाप हे। उदाहरण के लिए शुद्ध शाकाहार वह चाह कितना भी वाछनीय हो भारत सहित मानव समाज की आज की हालत और रचना को देखते हुए मास मछली अडा आदि स पूरा परहेज करने और उनसे सम्बन्ध रखन वाल उद्यागा से वचे रहने का व्रत जना और वैष्णवा की एक छाटी-सी सख्या ही ले सकती है—लेकिन इन छाटी-माटी खामिया का छाडकर इतना तो कहना चाहिए कि सिद्धात और नियम के प्रति लापरवाह आज के रवैये के खिलाफ लागा का विवेक जगाने की यह कोशिश प्रशसनीय ह।

अणुव्रत क परिवेश म इस टिप्पणी पर विचार किया गया। यह ठीक है कि अणुव्रती मास न खाए पर जा मास खाये वह अणुव्रती बन ही नहीं सके ऐसी बाध्यता भी क्यो? यह ठीक हे कि खान-पान का भी आदमी के चरित्र पर प्रभाव होता है पर यह कोई ऐसी शर्त नहीं हे कि जिससे आदमी क नैतिक होने म बाधा आये। इसीलिए इसके बाद अणुव्रत म शाकाहार की बाध्यता को अमान्य कर दिया गया।

कुछ लोगा ने अणुव्रत की निषेधात्मक भापा का अपनी आलाचना का विपय वनाया तो कुछ लोगा न यह भी कहा कि महावीर बुद्ध और महात्मा गाधी जब सब लोगा को ईमानदार नहीं बना सके तो आयार्यश्री तुलसी किस खेत की मूली हे?

आचार्यश्री ने कहा— 'यह ठीक है कि किमी भी जमाने म सब लोग सदाचारी नहीं बन सकते। पर इससे एक व्यक्ति के सदाचारी बनने के प्रयत्न का भी गलत नहीं कहा जा सकता। मैं जानता हू कि मै भी सब लोगा का सदाचारी नहीं बना पाऊगा पर यदि हम सदाचार और असदाचार के बीच एक सन्तुलन भी स्थापित कर सके ता वह एक बहुत बडी उपलब्धि हागी। आज असदाचार का पलडा भारी है। मै चाहता हू कि असदाचार न मिटे ता कम से कम सदाचार का पलडा भारी बन। सच तो यह है कि आज मदाचार के प्रति लोगा का विश्वास भी

वदल गया है वह ता कम-से-कम सुस्थित वने। यदि लागा का सदाचार पर विश्वास भी हो जाय तो भी मैं उसे अपनी वहुत वडी मफलता समझूगा।"

इसी प्रकार अणुव्रत के निपेधात्मक स्वरूप के वारे म उन्हान कहा– "निपेध और विधि दाना परस्पर जुडे हुए हैं। जहा निपेध है वहा विधि है और जहा विधि है वहा निपेध है। असल म यह हमारी अपनी दृष्टि पर निर्भर पर करता ह कि हम जीवन को किस रूप म स्वीकार करते हैं। यदि एक व्यक्ति बुराइया का छोड देता है ता शेप सारी वात ता विधि ही वन जाती है। वास्तव म अणुव्रत कार नियम नहीं हैं यह पूरी जीवन-पद्धति ह। जिस व्यक्ति ने निपेध को उसके मूल रूप म समझ लिया उस व्यक्ति का जीवन अपने आप मन्मार्ग की आर वढ चलगा।"

आचार्य विनावा भाव ने अणुव्रत के कार्य की प्रशसा करत हुए भी सत्य क वार म एक तर्क प्रस्तुत किया। उन्होंन कहा— "अहिसा का अणुव्रत हो सकता है पर सत्य का अणुव्रत नहीं हा सकता। सत्य ता अखण्ड और अविभक्त है। उसका तो महाव्रत ही हो सकता ह अणुव्रत नहीं।" आचार्यश्री ने उत्तर दिया— "यह ठीक है कि सत्य अखण्ड हाता है पर उसका आचरण करने की शक्ति ता व्यक्ति की अपनी होती हे। यों तो अहिसा का व्रत भी अखण्ड ही ह पर जिस तरह अहिसा का आचरण सब व्यक्तियों क लिए एक जैसा सभव नहीं होता उसी तरह स सत्य का आचरण भी सबके लिए एक सरीखा सभव नहीं हा मकता। इसीलिए अणुव्रती सत्य का आशिक ही पालन कर सकता है। महाव्रती सत्य का पूर्ण रूप स पालन कर सकता है। अणुव्रती उसका एक हद तक ही पालन कर सकता हैं। यदि अहिंसा मे खडश पालन सभव है तो सत्य मे भी वह सभव होगा ही। क्याकि सत्य अहिसा से भिन्न नहीं हैं। जहा हिसा है वहा सत्य नहीं।

कहीं-कहीं ऐसा भी स्वर सुनाई दिया कि अणुव्रत जड का बात नहीं करता वह कवल ममस्या के ऊपरी भाग को ही छूता है। चूकि हर समस्या का मूल आर्थिक है उसका समाधान हुए बिना समस्या का सही समाधान नहीं हा मकता। 'भूखे भजन न हाइ गापालाले ला अपनी कठी माला' के अनुसार जब आदमी के पेट मे रोटी नहीं हागी तो वह ईमानदार कैसे हागा? इमलिए सवसे पहल आवश्यकता इस बात की है आर्थिक समस्या का समाधान प्रस्तुत किया जाये। अणुव्रत न इसका उत्तर इम प्रकार दिया— "यह ठीक हे कि वहुत सारी समस्याआ का मूल आर्थिक है पर सभी समस्याए आर्थिक नहीं होतीं। बल्कि अर्थ की समस्या तभी खडी होती है जवकि आदमी का चरित्र अच्छा नहीं हो। यदि सव लाग अपना आचरण सुधार ले ता अर्थ का समस्या स्वय मिट जाएगी। वहुत बार हम देखत है कि जिनक पाम अर्थ वहुत है वे ही ज्यादा बेइमान होत हैं। यदि अर्थ होने पर

आदमी ईमानदार हो जाए तब पूंजीपति लोग तो बेईमान होने ही नहीं चाहिए पर हम देखते हैं कि गरीब की अपेक्षा जिनके पास पैसे ज्यादा हैं वे ज्यादा बेईमान हैं।

फिर नैतिकता का संदर्भ बहुत व्यापक है। वह केवल पैसे से ही जुड़ा हुआ नहीं है। आक्रामक वृत्ति भी अनैतिकता है। साम्राज्यवादी मनोवृत्ति भी अनैतिकता है। व्यसन अस्पृश्यता सामाजिक कुरीतियां आदि भी अनैतिकता के अनेक पहलू हैं। वास्तव में ये ही बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। अणुव्रत इन सबको मिटाने का प्रयास करता है। वह चरित्र-शुद्धि की बात करता है। इसलिए यही सबसे जड़ की बात है मौलिक बात है।

कुछ लोगों ने पूछा— "क्या अणुव्रती को आपको गुरु मानना आवश्यक है?" आचार्यश्री ने कहा— "अणुव्रती को मुझे गुरु मानने की बाध्यता नहीं अपने-अपने धर्म पर श्रद्धा रखते हुए भी व्यक्ति अणुव्रती बन सकता है। और यह भी आवश्यक नहीं है कि अणुव्रत का नेतृत्व मैं ही करूं। वर्तमान में इसका अनुशास्ता मैं हूं। इसका यह अर्थ नहीं है कि अणुव्रती को तेरापंथी होना होगा। किसी भी धर्म का अनुयायी अणुव्रती बन सकता है अणुव्रती बनने के लिए उसे अपने धर्म को छोड़ने की आवश्यकता नहीं है।"

दलगत राजनीति से ऊपर

कुछ लोगों का यह भी आक्षेप था कि आचार्य तुलसी प्रचार-प्रिय हैं। वे अपने प्रचार के लिए कांग्रेसी लोगों को पकड़े हुए हैं। डॉ राममनोहर लोहिया प्रभृति कुछ लोगों को यह भी अनुभव हुआ कि आचार्यश्री कांग्रेस राज की नींव गहरी कर रहे हैं। इसी स्वर मे अपना स्वर मिलाते हुए एन सी चटर्जी ने कहा— "आपके द्वारा कांग्रेस की दुर्बलता को पोषण मिल रहा है अणुव्रत से आर्थिक प्रभुता को सम्मान मिलता है तथा उससे क्रांति की आंच मन्द होती है।"

आचार्यश्री का उत्तर था— "मैं किसी भी राजनीतिक दल से सम्बन्धित नहीं हूं तथा कोई भी ऐसा दल नहीं है जिससे मैं सम्बन्धित नहीं हूं। इसलिए मैं किसी एक राजनीतिक विचारधारा को पोषण दे रहा हूं, ऐसा दोषारोपण करना गलत है। अलबत्ता मुझे राजनीति से एलर्जी नहीं है। बहुत सारे लोग मानते हैं कि धर्म के प्लेटफार्म पर राजनेताओं को नहीं आने देना चाहिए पर मैं इस बात को नहीं मानता। मैं मानता हूं कि यदि वे धर्म के नजदीक ही नहीं आएंगे तो उनमें सुधार कैसे होगा? धर्म के लोगों को यह सावधानी रखना जरूरी है कि वे किसी भी प्रकार की राजनीति को अपने ऊपर सवार न होने दें।"

यही कारण था कि अणुव्रत के मंच पर सभी दलों और विचारधारा के

लोग आए। मच ता यह है कि राज्य-बरा भी एक महत्त्वपूर्ण बरा है। अणुव्रत उस पर आधारित नहीं होना चाहता अपितु उस प्रभावित अवश्य करना चाहता है। इसी का प्रमाण है अणुव्रत का चुनाव-शुद्धि अभियान। प्रथम चुनाव क अवसर पर काग्रेस अध्यक्ष श्री ढवर भाई प्रजा-सामजवादी पार्टी क नता आचार्य कृपलानी साम्यवादी दल श्री ए. क गापालन आदि सभी पार्टिया क लाग अणुव्रत क मच पर एकत्र हुए और एक सर्व-सम्मत आचार-सहिता बनायी। सभी ने उस पर अमल करन का पक्का विश्वास दिलाया। श्री गापाल ने ता यह बात इतनी दृढता स कही कि सारे लाग चकित रह गए।

फिर भी अणुव्रत न पैस क लिए कभी किसी सरकार क सामन हाथ नहीं फैलाया न ही किसी क प्रभाव का अनुचित उपयाग किया। सभी लागा का इसक साथ मधुर सम्बन्ध है।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर

राष्ट्रीय ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अणुव्रत की गूज-अनुगूज हाती रही है। अनेक विदेशी लागा ने इस दृष्टि से अपने उद्‌गार प्रकट किए। युनस्का डाइरक्टर लूथर एवास न एक सभा को सम्बाधित करत हुए कहा था— "ससार आज समस्याआ स उलझा हुआ है। अनेक प्रकार की समस्याए उसके सामने हैं। यह आश्चर्य है कि हम उन्ह जानते हुए भी सुलझा नहीं पा रह हैं। सरकार चाहती हैं कि उनके पारस्परिक सम्बन्ध कटु न हा। कोई भी आक्रमण न करे पर उन्ह सफल करने का कोई हल प्रस्तुत नहीं कर सकी है। मनुष्य एक प्रयत्नशील प्राणी है वह हमेशा प्रयत्न करता रहता है। हम लोग युनेस्को क द्वारा शाति क अनुकूल वातावरण बनाने की चेष्टा कर रहे हैं। इधर अणुव्रत आदोलन भी प्रशसनीय काम कर रहा है यह खुशी की बात है। मै इसकी सफलता चाहता हू। आपका यह सत्कार्य ससार म फैले और मार्गदर्शन करे।"

भारत म पश्चिम जर्मनी के प्रधान व्यापार सचिव हलमुथ डीटयर ने कहा— "अणुव्रत आदालन का मुझ पर गहरा और काफी असर पडा और म इसका प्रशसक बन गया।"

ब्लामवर्ग वास्टल अमरिका के वारन फ्रेटीफोन ने कहा— "मेरा विश्वास है कि अणुव्रत आदोलन स्थायी विश्व-शाति का सच्चा आर शक्तिशाली साधन बन सकता है। धीरे-धीरे ही सही किन्तु यह आदालन सारे विश्व म फैल सकता है।"

आस्ट्रेलिया के हाई कमिश्नर आर्थरटाग जर्मन क मक्समूलर भवन क

डाइरेक्टर होमियाराऊ तथा उनके सहयोगी कनाडा के तत्कालीन हाई कमिश्नर शलेन्द्र मिचनर जो बाद मे अपने दश के राष्ट्रपति भी बन गए थ, अणुव्रत के निकट सहयोगी रहे हैं। इसके अतिरिक्त और भी इतने लागा का अणुव्रत क साथ गहरा सम्पर्क रहा है कि उनकी तालिका भी बहुत लम्बी हो जाती है बल्कि बहुत सारे लाग तो स्वय अणुव्रती भी बन हैं। कई लोग विदशों मे भी इस दृष्टि से सक्रिय हैं।

इन वर्षो म अणुव्रत इटरनेशनल के रूप म विदशा मे भी कुछ अणुव्रती कार्यकता गए हैं। समण-समणिया के माध्यम स भी अनक देशा म प्रचार-प्रसार तथा सम्पक हुआ है। लाडनू तथा राजसमद म अणुव्रत विश्व भारती क तत्त्वावधान म कई इटरनेशनल काफ्रेन्म भी आयाजित हुई हैं जिनकी अनुगूज यु एन ओ तक हुई है।

एक जीवन दर्शन

यह सच है कि अणुव्रत व्यक्तिगत सुधार का आदोलन है पर व्यक्ति-सुधार ही तो अतत सामूहिक सुधार की पृष्ठभूमि बनता है। यह एक उलझा हुआ सवाल है कि मनुष्य परिस्थितिया का निर्माण करता है या परिस्थितिया मनुष्य का निर्माण करती हैं। कुछ लागा का बल्कि अधिकाश लोगा का अभिमत है कि परिस्थितिया ही मनुष्य का निर्माण करती ह। पर सचमुच व लाग काई भी बडा काम नहीं कर सकते जो परिस्थितिया के सामने घुटने टेक देते हैं। दुनिया का इतिहास उन लोगा का इतिहास हे जा परिस्थितियो की छाती को चीरकर आगे बढ जाते हैं। असल म एस लोग ही वीर्यवान् और आत्मवान् होते हैं। अणुव्रत ऐसे ही लागा की प्रतीक्षा म है तथा इस दिशा म अपना नम्र प्रयास भी कर रहा है।

अणुव्रत एक आचार-सहिता मात्र नहीं है अपितु एक पूरा जीवन-दर्शन है। आचार-सहिता का भी अपना महत्त्व है पर उसका अर्थ आदमी को केवल कुछ विधि-निपेधा मे उलझाना नहीं है, अपितु उसम सोयी हुई सकल्प-शक्ति को जगाना है। जब चतना जाग जाती है तो आदमी म इतनी ऊर्जा प्रकट हा जाती हे कि वह हर अपराध स लडन के लिए खडा हा जाता है। अणुव्रत म निखार तभी आ सकता है जबकि अणुव्रती लोग परिस्थितिया क सामने झुक नहीं अपितु उससे सघर्ष कर।

अणुव्रत का एक नियम है कि में किसी पर आक्रमण नहीं करूगा तथा आक्रामक नीति का समर्थन भी नहीं करूगा। वास्तव मे यह किसी को नहीं मारने की प्रतिज्ञामात्र नहीं है अपितु पूरे शस्त्रीकरण के विरोध मे खडे होने का सकल्प-बल है विश्व-शाति के पक्ष म अपना वोट देने का विचार-प्रयत्न है। इस तरह

अणुव्रत को केवल नियम से नही पकडकर भावना से पकडा जाए ता निश्चय ही यह जागृति का एक पूरा आदोलन है। अणुव्रतिया का इस दिशा मे ठोम प्रयत्न करना आवश्यक है।

प्रेक्षाध्यान

शाति का सवाल जहा एक ओर विश्व-शाति स जुडा हुआ है वहा दूसरी ओर वह अपने व्यक्तिगत तनावा स भी जुडा हुआ है। वास्तव म विश्व-शाति को अगर काई खतरा खडा होता है तो उसका मुख्य कारण ता व्यक्ति का अपना व्यक्तिगत तनाव ही हे। आज के युग म विश्व-शाति की जा तीव्र आवश्यकता अनुभव की जा रही ह उसका मूल सभी दशा के व्यक्तिया के अपन-अपन तनावा म ही खाजा जा सकता ह। राष्ट्रसघ क घाषणापत्र म ठाक ही कहा गया है— युद्ध सबस पहल मनुष्य क मन म फूटता ह। इसलिए यदि दुनिया स युद्ध को विदा करना है तो व्यक्तिया के मन म ही शाति को स्थापित करना हागा। उद्योगा के विकास क साथ-साथ जिस प्रकार की एक शहरी सभ्यता उदित हुई है उससे अशान्ति भी ज्यादा बढी है। परन्तु प्रतिदिन का मामान्य दिनचर्या तथा सार्वजनिक यातायात के साधना से यात्रा करने जेसे दैनिक कार्य भी आज बेहद मानसिक तनावा के कारण बन गए है। सार्वजनिक साधन ही नहीं आज ता निजी साधना स यात्रा करना भी गहरा तनाव का कारण बन गया है।

एसी स्थिति म आदमी को तनावमुक्त करना विश्व-शाति के लिए भी नितात आवश्यक हा गया है। परिस्थितिया ही कुछ एसी हो गई हैं कि सभ्यता के इस दौर स आदमी का मुक्त होना एक असभव कल्पना हा गई ह। समाधान अगर है ता यही कि तनावा स मुक्ति का व्यक्तिगत साधना का कोई मार्ग खाला जाए। यहीं आदमी ध्यान-अध्यात्म से जुड जाता हे। अणुव्रत म भी इस दृष्टि से प्रेक्षा ध्यान क रूप म एक नया अध्याय जुड रहा है। प्रेक्षा ध्यान से आदमी को इतना सशक्त बनाया जा सकता ह जिसम वह दैनदिन तनावा से लड सक।

प्रेक्षा क साथ अणुव्रत क अनुबध की एक दूसरी दृष्टि स भी लम्ब समय म अपेक्षा महसूस की जा रही थी। अणुव्रत क माध्यम स आदमी म सकल्प का ता उदय हाता है पर उस सकल्प का गहरा बनाना भी नितान्त अपेक्षित ह। आदमी एक बार सकल्प कर भी लता है पर जब तक आन्तरिक रूपान्तरण घटित नहीं होता ह तब तक उसके कदम फिसल जात ह। उदाहरण के लिए आदमी तम्बाकू को छाडन का सकल्प तो कर लता ह पर जब साथ-सगति म या आतरिक माग से उसकी तलब उठती हे ता मन डोल जाता ह आर वह फिर धूमपान करन लग जाता ह। एसी स्थिति म यह अपेक्षा स्पष्ट सामन आता ह कि आदमी म एसा आतरिक

रूपातरण आए कि वह किसी भी हालत म धूम्रपान को स्वीकार न कर बल्कि तम्बाकू को देखत हुए उसे घृणा आने लगे।

प्रेक्षा ध्यान क अन्तर्गत ऐसे अनेक प्रयोग करवाए जाते है जिससे आदमी म भावनात्मक परिवर्तन आ जाता है और वह सदा के लिए बुराई—व्यसन से अपना मुह मोड लेता है। आदमी म अनेक प्रकार क अवगुण हैं। वह गुस्सा करता है डरता हे अहकार करता ह आदि-आदि यह सार कार्य अन्त स्रावी ग्रन्थियो से सम्बन्धित हैं। ध्यान म अन्त स्रावी ग्रन्थिया पर नियत्रण प्राप्त किया जा सकता है जिससे उपराक्त सारी वृत्तिया बदल जाती है। इस सार प्रयोग-प्रबन्ध म आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का मार्गदर्शन अणुव्रत के लिए गोरव का विषय हे।

इस तरह अनेक रूपा से प्रेक्षा ध्यान अणुव्रत का एक पूरक अग बनता जा रहा है। इसलिए इन वर्षो म अणुव्रत के अन्तर्गत अणु-प्रेक्षा शिविरो का आयाजन भी हाता रहा ह। इसके आश्चर्यजनक परिणाम सामने आए ह। ऐसा लगता ह अणुव्रत व्यक्ति से लेकर पूरे विश्व की समस्याआ का समाधान बनता जा रहा हे।

फिर भी ऐसे कार्य की काई सीमा नहीं हाती। अणुव्रत के अन्तर्गत जितना कार्य हुआ है उससे बहुत अधिक कार्य करने की आवश्यकता है। पूरे अणुव्रत-समाज को इस दृष्टि स करने क लिए बहुत कुछ बाकी है। अणुव्रत-अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी युग-बोध से सर्वथा परिचित है। अत आशा की जानी चाहिए कि उनक अनुशासन म आने वाले वर्ष अणुव्रत के लिए आशा ओर उत्साह के शुभ सकेत होंगे।

मनुष्य इस दुनिया का विशिष्ट प्राणी है। यद्यपि बल-विक्रम की दृष्टि से कुछ अन्य प्राणी मनुष्य स भारी पडते है पर मनुष्य की बौद्धिक क्षमता उसे उन सबसे विशिष्ट बना देती है। वैज्ञानिक-शोधा के अनुसार डाल्फिन मछलिया का बोद्धिक-विकास भी उल्लेखनीय है पर इसम कोई सन्दह नहीं कि वे अपन म ऐसी योग्यता अर्जित नहीं कर सकी हैं जिससे दुनिया की अन्य चीजो का अपन लाभ म उपयोग कर सके। मनुष्य ससार के जड-चेतन का अपने पक्ष म लाभ उठाने की क्षमता रखता है। इसलिए हमारी दृश्य दुनिया का वह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्राणी है। पर कठिनाई यह है कि अपनी बौद्धिक क्षमताओ का दुरुपयोग कर वह न कवल दूसरा के जीवन का बल्कि अन्तत अपन जीवन को भी कष्टमय बना लेता हे।

पर्यावरण चेतना

चूकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह एक दूसरे क सहारे से जीता है। समाज के साथ जीने के लिए यह आवश्यक हे कि वह अपने अधिकारा का अतिक्रमण न कर परस्परता का खडित न कर। जब भी वह अपने अधिकारा का

अतिक्रमण करता है दूसरे क अधिकारा पर आक्रमण हा जाता है। परमार्थवादिया ने प्राणी मात्र के प्रति सवेदनशील होन की जा बात कही है वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। आज के पर्यावरण चेतना क युग म ता उसने बहुत गहरा अर्थ धारण कर लिया है। *प्रत्यक व्यक्ति अपन चारा आर म एक पर्यावरण क घिरा हुआ है। मिट्टी पानी* अग्नि हवा वनस्पति—य सभी मनुष्य पर्यावरण क घटक तत्त्व हैं। परमार्थवादिया की दृष्टि से इन सब म जीवन है। जब भी मनुष्य इन्ह क्षति पहुचाता है ता वह अपन अस्तित्व को क्षति पहुचाता है। पदार्थवादिया का मिट्टी आदि भूता म जीवन स्वीकार नहीं हैं। अत इन्ह उनक प्रति मवदनशील हाने की भी चिन्ता नहीं है। पर पर्यावरणीय एकता म बधे होने क कारण आज उनके प्रति उपेक्षा-भाव सभव नहीं रह गया है। पर्यावरणीय-तत्त्वा क अस्तित्व का अस्वीकार करना अपन ही अस्तित्व को *अस्वीकार करन जैसा हा गया है। दूसरा क अस्तित्व उपस्थिति और* उपयोगिता का स्वीकार करने वाला व्यक्ति ही समाज और विश्व क बीच सामजस्य स्थापित कर सकता है।

इच्छा भाग तथा सुख-सुविधावादी दृष्टिकोण न हिसा का बढावा दिया है आर साथ-साथ पर्यावरण सतुलन का भी विनष्ट किया है। एसी स्थिति म अहिसा का सिद्धान्त आत्म-शुद्धि का सिद्धान्त ता है ही पर साथ-ही-साथ वह पर्यावरण शुद्धि का सिद्धान्त भी बन गया है। पदार्थ सीमित है उपभोक्ता अधिक हैं और इच्छा असीम है। अहिंसा का अर्थ है— *इच्छा का सयम करना उसकी काट-छाट करना* जो इच्छा पैदा हा उसे उसी रूप म स्वीकार नहीं करना किन्तु परिष्कार करना।

आज अहिसा को बहुत स्थूल रूप से समझा जा रहा है। किसी को मार देना ही हिसा समझा जाता है पर हिसा का प्रारम्भिक बिन्दु किसी को मारना ही नहीं हैं। हिसा का प्रारम्भिक बिन्दु है दूसर जीवा क अस्तित्व का नकारना। इसलिए अहिसा का प्रारम्भिक बिन्दु है दूसरे जीवा के अस्तित्व को स्वीकारना और उसक साथ छेडछाड नहीं करना। अपने अस्तित्व की भाति दूसरा क अस्तित्व का भी सम्मान आत्मौपम्य का यह सिद्धान्त ही अहिसा का सिद्धान्त है। पदार्थ क अपरिग्रहण का सिद्धान्त अहिसा का उच्छ्वास है—प्राणतत्त्व है। यही अहिंसा का सम्यग् दर्शन है। हिसा की बाढ केवल पर्यावरणीय दृष्टि से ही वाछनीय नहीं है, *किन्तु आत्मा की दृष्टि से भी वाछनीय है। अणुव्रत आन्दालन मनुष्य का समस्त* चराचर के साथ जाडन का आन्दालन है।

सापेक्ष राष्ट्रवाद

समस्त के साथ जुडना एक आवश्यक बात है पर मानवीय एकता ता अत्यन्त

आवश्यक है। आज राष्ट्रीय तथा प्रान्त-प्रदेशा की विभक्तिया ने आदमी का इतना खडित कर दिया है कि मानवीय एकता खतर मे पड गई है। यह हो सकता है कि राष्ट्रवाद एक भौगालिक एव ऐतिहासिक सच्चाई हो पर जब तक राष्ट्रा की सापेक्षता का दर्शन उदित नहीं हागा तब तक दुनिया म शान्ति स्थापित नहीं हो सकती।

विश्व-शाति

आज विश्व-शाति का प्रश्न पहल मे अधिक महत्त्वपूर्ण बन गया है। परम्परागत शस्त्रा के युग म विश्व-शाति का प्रश्न उपयोगी था किन्तु अणु युग एव प्रक्षेपणास्त्रो क युग में उनका महत्त्व और भी वढ गया हे। पहले केवल उन लोगा का ही जीवन खतरे म पडता था जो युद्ध मे लडते थ किन्तु आज के आणविक हथियारा न सम्पूर्ण मानव जाति क अस्तित्व को खतरे म डाल दिया है। इसी कारण आज अहिसा का सिद्धान्त पुन सजीवित हा उठा ह। उसका नये ढग मे नय सिरे म सोचने क लिए समूचा ससार बाध्य हो रहा है। यदि अहिसा के सिद्धान्त पर ध्यान नहीं दिया गया उसका नहीं समझा गया और उसे नहीं क्रियान्वित किया गया ता क्या मनुष्य बच पाएगा यह प्रश्न हर व्यक्ति के मस्तिष्क को झकझोर रहा है।

अशान्ति और हिसा तथा शाति आर अहिंसा ये दा युगल है। जैसे अशान्ति और हिंसा को अलग-अलग नहीं देखा जा सकता वैसे ही शाति और अहिसा को विभक्त नहीं किया जा सकता। अहिंसा एक व्यापक सदर्भ है। अणुव्रत उस व्यापकता की एक व्यावहारिक आचार सहिता है।

अणुव्रत आन्दालन विश्व म अहिंसा द्वारा शान्ति स्थापित करने का एक रचनात्मक उपक्रम है। न्यूनतम मानवीय मूल्यो के प्रति वैयक्तिक सकल्प का विकास कर विश्व का हिसा से मुक्ति दिलाने का यह अनूठा प्रयोग हे। व्रता को आदालन का रूप दकर आचार्यश्री तुलसी न शाति स्थापित करने का यह पहला प्रयास किया है। आत्मानुशासन स विश्व म एक विशेष स्थिति बन सकती है। प्रत्येक व्यक्ति यदि स्वच्छा से आक्रमण करने का परित्याग कर देता है, अहिंसा-अणुव्रत को ग्रहण कर शाति क लिए वचनबद्ध हा जाता है ता क्रूरता तथा आतकवाद अपन आप समाप्त हो जाते है।

द्वितीय विश्व युद्ध म अन्य क्षतिया क साथ-साथ मानव-मूल्या का जो अवमूल्यन हुआ है उसका लेखा-जाखा ता सम्भव है लेकिल साथ-साथ मानव का उसकी एकता का जो एहसास हुआ वह एक वरदान सिद्ध हुआ हे। नयी-नयी मार के हथियारा के लिए की गई वैज्ञानिक खाजा के कारण विज्ञान की व्यापकता बढी। उसक कारण मनुष्य क चिन्तन और व्यवहार म भी व्यापकता आई। विश्व

युद्ध क बाद दुनिया क लगभग सभी गुलाम देश एक क बाद एक स्वतत्र होत गए। विश्व के विचारका क सामने एक ही सवाल था और यह आज भी है कि दुनिया को तीसरे विश्व युद्ध से कैसे बचाया जाए? अणु अस्त्रा के निर्माण पर कैसे राक लगे? विश्व म कैसे भाईचारा कायम हो और कैसे लाग शाति स समृद्धि की ओर अग्रसर हा? धार्मिक सस्थाए साम्प्रदायिक दबाव स मजबूर होकर अपना महत्त्व खा चुकी थीं। उस रिक्तता का भरन के लिए सैकडा-हजारा सस्थाआ का उदय हुआ। भारत म गाधीजी के कारण ऐसी सस्थाए आजादी की लडाई के समय स हा कायरत थीं। सस्थाआ क लिए अपने-अपने कार्यक्रम होते है, अपने-अपने कायदे हाते हैं और होते हैं उन्ह चलान क लिए व्यक्तिया के समूह। विश्व-शाति के उद्देश्य से बनी सभी सस्थाआ क कार्यक्रम कमोबेश समान ही होत हैं। अन्तर हाता है कार्यकर्ताआ की शक्ति मे। उद्देश्य की सफलता क लिए कार्यकर्ताओं को सात्त्विक ओर सत्याधारित जीवन का महत्त्व हाता है। आज की यही समस्या ह। कार्यकर्ताआ की कथना-करनी में फर्क हाता जा रहा है। उाम सकल्प-शक्ति का अभाव है इसीलिए वे लोकशक्ति से कटते जा रह हैं। इसी अर्थ म अणुव्रत आन्दोलन की भूमिका महत्त्वपूर्ण हा जाता है। अणुव्रत म जा कार्यक्रम हैं वे सभा आन्दोलनों के पूरक है। अणुव्रत आन्दालन मिश्री की तरह अपने का घुलाकर उन्हे मीठा बनाने का आन्दोलन है यह लोगो की सकल्प-शक्ति बढाने का आन्दोलन है, यह मनुष्य को मनुष्य बनाने का आन्दोलन हे यह कथनी आर करनी का फर्क मिटाने का आन्दोलन हे चारित्रिक सान्दर्य सम्भालने का दर्पण हे यह अपने आपको प्रशिक्षित करने का आन्दालन है।

रगभेद और जातीय भेद

भेद हमारी उपयोगिता है। बाटना विभक्त करना सुविधा है। इस उपयोगिता और सुविधा को हमने वास्तविक मान लिया ओर उसक आधार पर मानव जाति को टुकडो म बाट दिया। जाति और रगभेद के आधार पर मनुष्य-मनुष्य मे एक घृणा की दीवार खडी हो गई। हीनता और उच्चता का एक अभेद्य किला बन गया। यह कहना अति प्रासगिक नहीं होगा कि जाति आर रगभेद के कारण हिंसा को निरन्तर बढावा मिल रहा है। मनुष्यजाति का एक बहुत बडा भाग हीनता की ग्रन्थि से ग्रस्त है तो दूसरा भाग अह की ग्रन्थि से रुग्ण है। इसे समाप्त करन की बात साच भी लें पर रगभेद एक यथार्थ है। यह कोरी कल्पना नहीं है। उसकी समाप्ति हाने पर भी हिंसा की समस्या सुलझगी नहीं। इसलिए अहिंसा की दिशा म यात्रा आवश्यक है। जातिभेद और रगभेद क हान पर भी हिंसा न भडक घृणा का अपना

पजा फैलाने का अवसर न मिले एसा कुछ सोचना है और वह भीतरी यात्रा से ही सभव है। अणुव्रत का अहिसा की अन्तरयात्रा म विश्वास है। मनुष्य-मनुष्य के बीच प्रेम का इतना सशक्त वातावरण बनाया जाए कि उसम घृणा को जन्म लेने का मौका ही न मिले। इतिहास साक्षी है कि समाज की धरती पर जितने घृणा के बीज बोए गए उतन प्रम के बीज नहीं बोए गए। आज इस ऐतिहासिक यथार्थ को बदलने की दिशा मे चलना एक नयी दिशा म प्रस्थान होगा।

अहिंसा सार्वभौम

यह सही ह कि अहिसा का एक पुप्ट विचार दर्शन हे। पर इस आचार म उतारन के लिए सकल्पित होना आवश्यक है। यह अनुभव किया गया कि सकल्प के लिए भी आतरिक रूपान्तरण आवश्यक हे। जब तक आन्तरिक रूपान्तरण नहीं हा जाता तव तक विचार आचार म परिवर्तित नहीं हो पाता। आज अहिसा की चर्चा तो बहुत है पर कठिनाई यह हे कि इसकी काई प्रयाग-पद्धति नजर नहीं आती। इसीलिए वह जीवन म नहीं उतर पा रही है। हिसा आज प्रतिप्ठित है तो उसके कुछ कारण ह। उसकी पूरी प्रशिक्षण-व्यवस्था है। हिसा को प्रतिप्ठित करने म आज जितना समय श्रम ओर अर्थ नियाजित हो रहा हे उसका शताश भी शायद अहिसा की प्रतिप्ठा के लिए नहीं हा रहा ह। इस दृष्टि से अणुव्रत आदोलन के अन्तर्गत आचार्यश्री तुलसी एव युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ ने एक विधायक भूमिका का निर्माण किया है। अहिसा के कुछ अछूत पहलुओ पर प्रकाश डालते हुए उन्हाने कहा है—''आज अहिसा को ऐस सार्वभौम मच की आवश्यकता है जहा बैठकर हिसा की विभिन्न समस्याओ पर सामूहिक चिन्तन किया जा सके। यह भी कठिनाई है कि अहिसा के क्षेत्र मे काम करने वाले लोग अहिसा के जावन दर्शन मे प्रशिक्षित नहीं हैं। उसक लिए जितने साधन एव साधना चाहिए वह भी उपलब्ध नहीं है। अणुव्रत एक एसे मच के निर्माण का प्रयास कर रहा है जिसमे तपे हुए कार्यकर्ता इस क्षेत्र म आगे आए और अहिसा के स्वर को बहुत प्रभावकता क साथ मुखरित किया जा सक।''

व्यसन-मुक्ति

औद्यागिक क्रान्ति शहरी सभ्यता तथा जन-सख्या वृद्धि ने मनुष्य को अत्यन्त तनावग्रस्त बना दिया है। जैस-जैसे तनाव बढता ह आदमी का मादक वस्तुआ की ओर झुकाव होता है। नशे की आदत अमीर लोगा म भी है। उसका कारण अमीरी गरीबी नहीं है अपितु तनाव हे। गरीब आदमी म अभाव की अधिकता

से तनाव होता है तो अमीर मे अमीरी की, सपदा की अधिकता स तनाव उत्पन्न होता है। तनाव स घिरा हुआ आदमी शाति और सुख का जीवन नहीं जी सकता। इसलिए वह मादक पदार्थों की शरण म जाता है। सच्चाई यह है कि आदमी बाहरी घटनाओ तथा उनसे उत्पन्न चिन्ताओ स मुक्त रहकर जीना चाहता है। मादक पदार्थों के सेवन से कुछ समय के लिए सब कुछ विस्मृत हो जाता है। विस्मृति क क्षणो मे उसे एक सुखद अनुभूति होती है। वह अनुभूति मादक पदार्थों क सेवन की प्रेरणा बन जाती है। उसका परिणाम भी सुखद नहीं होता। तम्बाकू से शुरू होने वाली यह यात्रा आज भयकर नशीली दवाओ तक पहुच गई है। इससे न कवल शरीर ही रुग्ण होता है अपितु वृत्तिया म भी परिवर्तन आता है। मद्यपान नहीं करन वाला व्यक्ति उतना क्रूर नहीं होता जितना एक मद्यपायी हो सकता है। अपराधी मनोवृत्ति के लिए मद्यपान का बहुत बडा योग है। आज तो मादक वस्तुओ की तस्करी भी एक गहरी समस्या बन गई है। असल म खानपान और आचार-विचार का बहुत गहरा सम्बन्ध है। बहुत प्राचीन काल म भी लोग इस सच्चाई से परिचित हो चुके थे। अहिसा के विकास के लिए आहार शुद्धि और मादक-पदार्थों का वर्जन पहली शर्त है। इसीलिए अणुव्रत क अन्तगत खान-पान एव व्यसन-मुक्ति पर विशेष जोर दिया जाता है।

स्वस्थ समाज-सरचना

अणुव्रत की आचार सहिता के अन्तर्गत वर्तमान की कुछ बुराइया के प्रति सकेत किया गया है पर वास्तव में अणुव्रत एक जीवन-दर्शन है। आचार सहिता उसकी अभिव्यक्ति है। उसके माध्यम से आदमी व्रती बनता है। महाव्रत वे लोग पालते है जो घर-बार छोडकर सन्यासी बन जाते हैं। घर-परिवार मे रहने वाले व्यक्ति से अणुव्रतो के पालने की अपेक्षा की जाती है।

अणुव्रत ने समाज को विकृत करने वाले तत्त्वो भ्रष्ट आचरणो अधविश्वासो व अर्थहीन रूढि-परम्पराओ को निरस्त करने के लिए एक सशक्त आवाज उठाई और समाज म नैतिक चेतना के वातावरण का निर्माण किया। इसी भूमिका के मध्य यह अनुभव हुआ कि केवल सशोधन या सुधार की बात का महत्त्व तो अवश्य है किन्तु व्यवस्थागत कठिनाइया क बीच सशोधन या सुधार की बात का प्रभाव चिरस्थायी रहना कठिन है। इसी समस्या के निराकरण मे से स्वस्थ समाज की परिकल्पना सामने आई। किसी भी समाज के निर्माण मे राजनीति और अर्थ का प्रमुख हाथ रहता है। अणुव्रत भी इनके महत्त्व को स्वीकार करता है किन्तु इनको सर्वोपरि महत्त्व नहीं देता। इसका विश्वास है कि व्यवस्थाओ म राजनीति और

अर्थनीति म परिवर्तन अवश्य हुए हैं किन्तु उन्ह सर्वोपरि महत्त्व दने से समस्याए और अधिक गहरा जाती हैं। अणुव्रत समाज-व्यवस्था मानसिक अनुशासन को प्रधानता दती है। कोइ भी शासन या अर्थतत्र तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक उसके साथ मानसिक अनुशासन नहीं जुडे। मानसिक अनुशासन के विकास म किसी बाहरी अनुशासन की अपेक्षा नहीं होती। मानसिक स्वतत्रता जितनी पुष्ट होती जाएगी बाहरी सुचारुता उतनी ही अधिक बढती जाएगी। इसीलिए अणुव्रत जन-जीवन म व्रता का विकास करना चाहता है। उसस जो अन्तर्जागरण होगा उसम व्यवस्था भी अपने आप सुचारु बन जायगी।

अपरिग्रह परमो धर्म

अहिसा और अपरिग्रह का कभी अलग नहीं किया जा सकता बल्कि अहिसा पर विचार करत समय अपरिग्रह पर विचार करना जरूरी हो जाता है। क्याकि दुनिया म जितनी भी हिसा होती है उसके मूल म परिग्रह ही है। इसीलिए अपरिग्रह के बिना अहिसा को नहीं समझा जा सकता। आदमी शरीर परिवार भूमि आदि के लिए ही हिसा करता है। य सारे परिग्रह हैं। अत हिसा क मुख्य कारण हैं। कोई अहिसक रहना चाह और अपरिग्रही नहीं बन यह सम्भव नहीं है। व्यक्ति धन कमाना चाहता है। क्या हिसा के बिना धन का अजन सम्भव है? जितना ज्यादा परिग्रह उतनी ज्यादा हिसा। इसीलिए अपरिग्रह अणुव्रत का केन्द्रीय विचार है। यद्यपि एक अणुव्रती पूर्ण रूप म अपरिग्रही नहीं हो सकता पर यदि वह अपने अर्जन के तरीका का स्वच्छ बना ले उनके उपयोग की सीमा कर ले तथा विसर्जन की भावना को समझ ले तो वह अहिसा की दिशा म ही एक प्रयास हो जाता है।

कुछ लोगा का मानना रहा कि आवश्यकताओ को बढाओ उससे उत्पादन बढेगा तथा उत्पादन स समृद्धि बढेगी। परिणाम यह हुआ कि आर्थिक-विकास पर बल दिया गया। आर्थिक सयम और इच्छा के सयम पर बल नहीं दिया गया। परिणाम यह आया कि आर्थिक समस्या सुलझ नहीं पाई। इस बिन्दु पर आकर कहा जा सकता है कि अपरिग्रह के बिना समाज-व्यवस्था लडखडा जाती है। आज के अर्थशास्त्री आर्थिक विकास के साथ सयम की बात को जोड देते तो एक नया समीकरण बनता है। सयम के साथ आर्थिक विकास जुडा होता तो गरीब-अमीर के बीच बहुत गहरी खाई नहीं होती। वास्तव म हिसा स भी अधिक जटिल है परिग्रह की समस्या। इसीलिए 'अहिसा परमो धर्म' के साथ-साथ 'अपरिग्रह परमो धर्म' इस घोष का प्रबल होना जरूरी है। जिस दिन अहिसा परमोधर्म के साथ अपरिग्रह परमो धर्म का स्वर बुलन्द होगा आर्थिक समस्या का एक सही समाधान उपलब्ध हो जाएगा ऐसी अणुव्रत की मान्यता है।

अणुव्रत : समाज-रचना बनाम स्वस्थ समाज-रचना

धर्म की दृष्टि से व्यक्ति सर्वोच्च सत्ता है। राज्य-व्यवस्था की दृष्टि से समाज सर्वोच्च सत्ता है। यह सही है कि व्यक्ति की स्वस्थता के बिना स्वस्थ-समाज की सरचना नहीं हो सकती, पर यह भी सही है कि अनुकूल तत्र-व्यवस्था के बिना व्यक्ति भी स्वस्थ नहीं रह सकता। धर्म ने अनेक बार ऐसे व्यक्तियो को पैदा किया है जिन्होने समाज को प्रभावित किया है पर वे लोग सत बनकर रह गए। उन्होने जो सत्प्रयास किया वह भी सम्प्रदाय बनकर रह गया। वे ऐसी व्यवस्था नहीं दे पाए जिससे स्वस्थ समाज का निर्माण हो सके।

व्यक्ति का महत्त्व

बहुत बार राजनीति ने भी ऐसे मूल्यो को स्थापित किया है जिन्हे स्वस्थ कहा जा सके पर व्यक्तियो की स्वस्थता के बिना वे भरभराकर ध्वस्त हो गए। साम्यवाद का प्रयोग एक ऐसा ही प्रयोग था। रूस मे जो राजनीतिक क्राति हुई वह अद्‌भुत थी। एक जमाना था जब उससे लोहा लेना आसान बात नहीं थी पर चूकि उसके केन्द्र मे ऐसा व्यक्तित्व नहीं जम पाया जो धर्म से प्रेरणा लेता अत साम्यवाद अपने ही बोझ के नीचे दबकर टूट गया।

भारत मे गाधीजी ने समाजवाद के नाम से ऐसे प्रयोग किए थे जो धर्म और समाज को जोडने वाले थे। पर उससे पहले कि वे प्रयोग अपना स्पष्ट रूपाकार ग्रहण करते गाधी जी कुछ उन्मत्त लोगो की गोली से उडा दिए गए। गाधी जी के बाद विनोबाजी ने वह बागडोर सम्भाली पर आज वे भी उपस्थित नहीं हैं। ऐसी स्थिति मे अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी सामने आ रहे हैं। वे एक ऐसी समाज-रचना चाहते हैं जो समस्याओ का स्थाई समाधान बन सके। इसमे कोई भी सदेह नहीं कि अणुव्रत के पीछे धर्म की प्रेरणा है। पर यह प्रेरणा आज के परिप्रेक्ष्य मे इसलिए महत्वपूर्ण है कि उसके पीछे सम्प्रदाय की कोई अवधारणा नहीं है।

अणुव्रत मानवतामात्र का सामने रखकर ऐसी व्यवस्था को रूपायित करना चाहता है जो व्यक्ति और समाज दोनो मे सन्तुलन स्थापित कर सके। किसी भी व्यवस्था को जन्म लेने मे देश-काल की परिस्थितिया भी महत्त्वपूर्ण भाग अदा कर सकती हैं पर इसम कोई शक नहीं है कि यदि हमारा दर्शन भी सजग बन जाए ता हमारी यात्रा का मुख मजिल की ओर हो जाता है।

अणुव्रत के मच से स्वस्थ समाज-रचना पर गहराई से विचार कर कुछ सूत्र इस प्रकार निर्धारित किए गए हैं—

१ हिसा समस्या का समाधान नहीं, इस आस्था का निर्माण।
२ मानवीय एकता म विश्वास।
३ दूसरो क श्रम का अशोषण।
४ मानवीय सम्बन्धो का विकास।
५ अर्थ एव सत्ता का विकेन्द्रीकरण।
६ वैचारिक-सहिष्णुता।
७ जीवन-व्यवहार म करणा का विकास।
८ आहार-शुद्धि और व्यसन-मुक्ति।
९ सामाजिक रूढिया का परिष्कार।

इन नौ सूत्रा मे अणुव्रत की पूरी समाज-रचना प्रतिबिम्बित है।

हिंसा समाधान नही

समाज-रचना पर विचार करते समय बहुत वार अहिसा शब्द सामने आता है। इसम कोई शक नहीं है कि अहिसा प्राणी मात्र का जाडने वाली कडी है। पर इस सन्दर्भ मे वह इतनी वजनी बन जाती है कि एक सामाजिक व्यक्ति उस बोझ को नहीं उठा सकता। गृहस्थ जीवन मे सूक्ष्म हिसा से बचना तो असम्भव है ही स्थूल हिसा से भी एक सीमा तक ही बचा जा सकता है। एक सन्यासी के लिए सूक्ष्म और स्थूल हिमा स बचना सम्भव है। क्योकि उसके सामने न ता परिवार हाता है और न परिग्रह। सामान्य आदमी इन दाना से मुक्त नहीं हो सकता। जब भी उसके परिवार और परिग्रह की प्रभुसत्ता पर आक्रमण होता है तो वह उसका प्रतिकार करता है। प्रतिकार चाहे कितना ही सात्त्विक क्यो न हो पर उस पर हिमा का प्रतिबिम्ब आए बिना नहीं रहता। कुछ लोग उस हिसा को भी अहिसा मान लेते हैं पर यह दुहरी भूल है। हिसा तो हिसा ही है उसे अहिसा नहीं कहा जा सकता। एसी स्थिति मे उमे अहिसक समाज-रचना कहने की अपेक्षा स्वस्थ समाज-रचना कहना ज्यादा सगत प्रतीत होता ह।

स्वस्थ समाज-रचना म भी हिसा का समस्या का समाधान नहीं माना जा सकता। वर्तमान राजनीति म हिसा को— शस्त्र का ही समाधान माना जाता है यही ममस्या का मूल है। एक ओर जब शस्त्र पर धार चढती है तो दूसरी आर उसे और भी ज्यादा तेज बनाने का प्रयास शुरू हा जाता है। इस स्पर्धा न ही पूरी दुनिया म शस्त्रा के भयकर जखीरे खडे किए हैं, पर उनस समस्या उलझी ही है। अणुव्रत का पहला व्रत है म किसी पर आक्रमण नहीं करूगा तथा आक्रामक नीति का ममर्थन भी नहीं करूगा। जब आदमी आक्रामक नहीं होगा तो अहिसा की प्रतिष्ठा अपन आप हो जाएगी। यह अहिसा मे आम्था हान का पहला चरण है।

सामाजिक आदमी पूर्ण अहिसक नहीं बन सक तो भी यह ता आवश्यक ह कि उसकी आस्था अहिसा मे रहे। कुछ लाग हिसा स बच नहीं सकते इसलिए उसे ही समाधान का उपाय मान लत हैं यह हिसा की प्रतिष्ठा है। अणुव्रती कभी-कभी हिसा स बच नहीं सकता फिर भी वह उसे आदर्श नहीं मानता यह अहिसा की प्रतिष्ठा हे। इसम कोई सन्देह नहीं कि समस्या का अन्तिम समाधान अहिसा म ही निहित है। समय पर कभी अशक्य कोटि की हिसा का आचरण हो भी जाता है ता भी वह स्वस्थ जीवन का विकास नहीं है। हिसा हिसा को जन्म देती है। सारा ससार इस क्रिया-प्रतिक्रिया क जाल म उलझ रहा ह ऐसी स्थिति मे हिसा समस्या का समाधान नहीं है पर आस्था अहिसा की एक महत्त्वपूर्ण उद्‌घोषणा है।

मानवीय एकता

अणुव्रत समाज-रचना का दूसरा सूत्र है— मानवीय एकता म विश्वास। हम भूगोल और इतिहास की इस सच्चाई को स्वीकार करना चाहिए कि मानव-समाज कई भागा म बटा हुआ हे। इसी से राष्ट्रो की सीमाए खडी हाती ह। भविष्य मे भी इस विभक्ति को मिटाया जा सके यह सम्भव नहीं है। फिर भी यदि मानवीय एकता मे विश्वास किया जाए तो भावात्मक दूरिया को समाप्त किया जा सकता है। जमीन पर खिची हुई लकीर कृत्रिम हैं जब मन म दीवार खडी हा जाती ह ता उनमे प्राण पड जाते हैं। इसीलिए सकीर्ण राष्ट्रवाद से ऊपर उठकर मानवाय एकता पर विश्वास स्वस्थ समाज-रचना का महत्त्वपूर्ण पहलू बन जाता है।

परस्परोपग्रह

समाज-रचना के बारे म एक मान्यता न्याय की रही है। उसके अनुसार बडी मछली हमेशा छाटी मछली को निगलकर ही अपना अस्तित्व कायम रख सकती है। पर यह ता जगल का न्याय है। आदमी का न्याय ता परस्परापग्रह की भूमिका

पर ही अधिष्ठित हो सकता है। एक मनुष्य का हित दूसरे के विरोध मे नहीं अपितु सहयोग म ही निहित है। भले ही कुछ लोग अपने बौद्धिक सामर्थ्य से कुछ गरीब लागा के श्रम का शोषण कर एक बार बडे बन जाए, पर यह व्यवस्था बहुत लम्बी नहीं चल सकती। इसमे कुछ गरीब लोग भल ही कुछ दिना के लिए चुप रह जाए, पर अतत प्रतिक्रातिया घटित होती ही हैं। इससे जहा कुछ लोगा को कष्टमय जीवन जीन के लिए बाध्य हाना पडता हे तो अन्य लोग भी लम्बे समय तक शाति से नहीं जी सकते। दूसरी आर यदि आदमी दूसरा क श्रम का शोषण न कर ता न कवल वह स्वय ही शात जीवन जी सकता ह अपितु दूसरे लोगा के लिए भी शात जीवन की पृष्ठभूमि का निर्माण करता है। एस लाग ही मशीन की अपक्षा मनुष्य को ज्यादा महत्त्व दे सकत हैं।

मानवीय सम्बन्ध

मानवीय सम्बन्धा का यह सेतु ही आदमी-आदमी के बीच सवाद बनाता है। यह कवल राष्ट्र का ही सवाल नहीं है। एक राष्ट्र म रहन वाल लाग भी आपस म बहुत सार भेद खड कर लेते हैं। जाति-भेद रग-भेद आदि इसी भेद की अभिव्यक्तिया हैं। जब आदमी मे मानवीय सम्बन्धा का विकास हो जाता है छुआछूत जैसी धारणाए टिक ही नहीं सकतीं।

सत्ता और अर्थ

सत्ता आर समाज-रचना के दो प्रमुख सघटक हैं। जितनी प्रमुखता स ये सघटक ह दुष्प्रयोज्य होने पर उतने ही विघटक भी बन जात हैं। ये दोनो जितने कन्द्रित होत ह उतनी ही अव्यवस्था फेलती है। एक जमाना था जब साम्राज्यवाद का प्रतिष्ठा प्राप्त थी। पर अपने केन्द्रित स्वरूप के कारण आज वह अप्रतिष्ठित ओर अप्रासगिक बन गया हे। उसका स्थान आज लाकतन्त्र ने ले लिया है। पर लोकतत्र की सफलता भी इसी पर निर्भर हे कि वह सत्ता ओर अर्थ का ज्यादा-मे-ज्यादा विकन्द्रित कर। जब भी ये दाना सीमित हाथा म केन्द्रित होते है तो सघर्ष खडा होता है। उससे निपटने का यही सबसे अच्छा उपाय है कि इन दानो को विकन्द्रित कर। जब भी य दानो सीमित हाथा म केन्द्रित हाते ह ता सघर्ष खडा होता हे। उससे निपटन का यही सबसे अच्छा उपाय ह कि इन दोनो का इस तरह विकेन्द्रित कर दिया जाए कि न ता सत्ताशीर्ष पर कुछ लोगा का अधिकार हो ओर पूजी भी कुछ ही हाथा म सिमटकर रह। शासक-विहीन शासन और पूजीपति-विहान पूजी इसी

लक्ष्य के चरम-बिन्दु हैं। इस चरम-सीमा तक न भी पहुचा जा सकता भी इस दिशा म प्रस्थान तो हो ही सकता है।

सहिष्णुता और करुणा

अहिसा का अर्थ है दूसरा के प्रति सवेदना। सवेदना से ही करुणा का भाव जागृत होता है। पत्थर म कोई सवदना नहीं फूटती। वह ता चतना म ही जागता है। जिस व्यक्ति म सवेदना जितनी ज्यादा होगी उसम करुणा का उदय भी उसी मात्रा मे अधिक होगा। जिस आदमी म करुणा का भाव जागृत हागा वही पर्यावरण के प्रति सवेदनशील बनगा। पृथ्वी पानी अग्नि हवा तथा वनस्पति म भी जीव है। जा उनके प्रति सवदनशील बन जाता है वह प्राकृतिक परिवश का जरा भी हानि नहीं पहुचा सकता। वह न ता स्थूल 'स्थिर' जीवा को हानि पहुचा सकता और न त्रस अर्थात् द्वि-इन्द्रिय आदि चलने फिरन वाले जीवा का हानि पहुचा सकता है। मनुष्य क प्रति तो उसक मन मे करुणा होगी ही। ऐसा व्यक्ति न तो शोषण कर सकता है और मिलावट। अहिसा का अर्थ ही है— चरित्र का ताना-बाना। इसीलिए अणुव्रत अहिसा का एक आन्दोलन ह। चरित्र शुद्धि उसका फलित है।

आहार-शुद्धि

आहार मनुष्य की पहली आवश्यकता है। हवा ओर पानी की आवश्यकताए यद्यपि आहार से प्राथमिक हैं। पर वे दुर्लभ नहीं है। आहार न केवल दुर्लभ है अपितु वह मनुष्य के व्यक्तित्व-निर्माण का प्रमुख घटक है। वह न केवल शरीर का ही पोषक है अपितु वृत्तिया के निर्माण मे भा उसकी अह भूमिका हे। सन्तुलित आहार के अभाव म जहा एक ओर लाखा-करोडा लाग भूख मरते हैं वहा लाखा-करोडा लाग अधिक खा-खाकर मरते हैं। सचमुच दुनिया म रोटी भी भयकर समस्या है। तामसिक आहार भी कोई कम समस्या नहीं हे।

व्यसन-मुक्ति

नशे से ता न केवल आदमी का स्वास्थ्य ही बिगडता है अपितु चेतना भी सुप्त-लुप्त हा जाती हे। उसी से अपराधा की एक अजस्र परम्परा शुरू हो जाती है। आज ता नशे से पूरी मानवता लहूलुहान हो गई। इसकी तीव्रता ने दुनिया की अर्थ-व्यवस्था को भी डावाडोल बना दिया हे। काले धन की ओर तस्करी की समस्या भी आज पूरे यौवन म है। ऐसी अवस्था म अणुव्रत-प्ररित समाज-व्यवस्था म आहार-शुद्धि तथा व्यसन-मुक्ति का स्थान मिलना एक महज बात है।

अल्पारंभ-अल्प परिग्रह

लोकतंत्र आज की मान्य शासन-पद्धति बन गई है। चुनाव इसका मुख्य आधार है। पर जब सत्ताशीर्ष पर कुछ लोग जमने की कोशिश करते हैं तो चुनाव में गंदगी का प्रवेश होता है। जिस दिन सत्ता और पूंजी पर लोक का स्वत्व हो जाएगा उसी दिन सच्चा लोकतन्त्र प्रतिष्ठित होगा। यही अहमिन्द्रता तथा सच्चा समाजवाद होगा। निश्चय ही इस दृष्टि में एक नये अर्थतन्त्र को विकसित करना होगा। अल्पारम्भ और अल्पपरिग्रह उस तंत्र के दो महत्त्वपूर्ण आधार बनेंगे। यह सारा हृदय-परिवर्तन में ही सम्भव है। केवल कानून या दंड के बल पर लोकतंत्र को संस्थापित नहीं किया जा सकता। उसके लिए तो जन-जन की चेतना को जगाना पड़ेगा। जब लोक-चेतना जागृत होगी तभी लोकतंत्र विकसित हो सकेगा।

सापेक्ष-दृष्टि

व्यक्ति है तो व्यक्तित्व भी रहेगा। व्यक्तित्व की सबसे पहली अभिव्यक्ति है विचार। विचार ही सम्प्रदाय तथा वाद के भेद के रूप में प्रकट होता है। यह सम्भव नहीं है कि सभी लोग एक ही तरीके से सोच-विचार। क्योंकि सत्य इतना विविधमुखी है कि उसे एक रूप में पहचाना ही नहीं जा सकता। ऐसी स्थिति में आवश्यक यही है कि उसकी अनेकमुखता को पहचाना जाए तथा उस पर सापेक्ष दृष्टि से विचार किया जाए। विचार का आग्रह जहां आदमी को असत्य के द्वार पर पहुंचाता है वहां सापेक्षता उसे सत्य से साक्षात्कार कराती है। सापेक्षता के इस दर्शन से ही आदमी में वैचारिक सहिष्णुता का उदय हो सकता है। हमें इस बात का अधिकार है कि अपने विचार को सत्य माने पर यह अधिकार नहीं हो सकता कि दूसरे के विचार को असत्य मानकर उसका तिरस्कार करें। सहिष्णुता का यह भाव ही असली धर्म है। यह सार्वभौम स्वीकृति ही सम्प्रदायों एवं वादों में सौहार्द स्थापित कर सकती है, अनेकता में एकता की अनुभूति करा सकती है।

परम्परा और प्रबोध

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जहां समाज होता है वहां परम्परा भी आवश्यक होती है। हर परम्परा का अपना एक उपयोगी उत्स होता है। पर धीरे-धीरे ज्यों-ज्यों देश-काल की स्थितियां-परिस्थितियां बदलती हैं, बहुत सारी परम्पराएं अपनी उपयोगिता को खो देती हैं। वे न केवल स्वयं ही रूढ़ बोझिल एवं बेमानी बन जाती हैं अपितु उनसे सारी समाज-व्यवस्था बीमार बन जाती है। इसीलिए अणुव्रत हर समय रूढ़ियों के परिष्कार के लिए आवाज उठाता रहा है।

परम्पराओ से इनकार नहीं किया जा सकता पर निरर्थक रूढिया का ढोते रहना भी स्वस्थ समाज और राष्ट्र का लक्षण नहीं हो सकता। इस दृष्टि म अध-रूढिया क परिष्कार की सम्भावना को भी नकारा नहीं जा सकता।

अणु की महत्ता

इस तरह अणुव्रत जिस समाज-व्यवस्था का रूपाकार दना चाहता है वही उसकी आचार-सहिता म अभिव्यक्त हुई है।

आज हमारी दुनिया म अधिकाश आन्दोलन बडी-बडी बातो स शुरू होत हैं। उनक सामन पूजी की समस्या युद्ध की समस्या आबादी की समस्या जमान की समस्या प्रदूषण की समस्या रग-भेद जाति-भेद की समस्या आदि बडी-बडा बात रहती हैं। पर उनकी बात बडी-बडी मिटिगो-चर्चाओ क बाद समाप्त हो जाता है। बडे-बड एयरकडीशनर हॉलो म गर्मागर्म बहस होती हैं और आदमी सुन-बोलकर लौट जाते हैं। अणुव्रत की मीटिंग पाच-सितारा होटलो म नहीं होता। इसकी मीटिग तो गावो-ढाणियो तथा शहरो-नगरो क एस स्थानो पर होती हैं जो सर्वजन सुलभ होत हैं। उन मिटिगो म जो चर्चा होती है वह भी सामान्य आदमी के जीवन से जुडी हुई बहुत सामान्य बातो पर होती है। यद्यपि व बात तो छोटी होती हैं पर दुनिया की हर बडी समस्या से जुडी हुई होती हैं। इस अर्थ म अणुव्रत छोट होत हुए भी विशिष्ट और महान् आन्दोलन है और बडी-बडी समस्याओ का कारगर समाधान है। अणु अस्त्रो के युग म अणुव्रत म अपना एक विशेष पहचान बनाई है।

अणुव्रत और लोकतन्त्र

एक जमाना था जब कर्त्तव्य की पूरी डोर इश्वर क हाथा मे थमी हुई मानी जाती थी। पर जब स विनान ने 'इश्वर मर गया है' की नीत्स की घोषणा को स्वाकार कर लिया तब से कर्तृत्व ईश्वर के हाथा से छिन गया है। यद्यपि पहल ही कुछ लाग किमी भी घटना क बीच म ईश्वर को नहीं राना जरूरी नहीं मानते थे पर अब तो प्राकृतिक नियमा के अन्तर्गत कार्य-कारण की एक शृखला का स्पष्टत स्वीकार कर लिया गया है। यह सही है कि आज भी कुछ लोग उस पुरानी राग को आलापते हैं पर अब कर्तृत्व ईश्वर के क्या राजा-महाराजाओ क हाथ म भी नहीं रहा है। उनक ईश्वर के प्रतिनिधि हान की बात को भी स्पष्टत नकार दिया गया है। लाकतन्त्र इसी धारणा की मौलिक स्वीकृति हे।

क्या लोकतन्त्र आया?

लाकतन्त्र का नाभिक लोक है। यद्यपि लोक का कारवा व्यक्ति-व्यक्ति के मार्ग से हाकर ही गुजरता है। पर यह भी निश्चित है कि उसका केन्द्र व्यक्ति नहीं समुदाय ही है। समुदाय जिम नेतृत्व को पसद करता है वही लाकतन्त्र मे आगे आता है। यद्यपि लोकतन्त्र म भी बहुत बार निर्णायक व्यक्ति का ही बनना पडता है पर यदि वह निर्णय लाकोन्मुखी नहीं हा तो उसे लोकतन्त्र नहीं कहा जा सकता। असल म लाकतन्त्र बहुमत की पीडा को पहचानने का तन्त्र है। आदमी युगा-युगो तक एकतन्त्र को अपन सिर पर ढाता रहा है। पर एकतन्त्र की परम्परा म राम जेसे कुछ चुने हुए गिनती के नाम ही आगे आ सके। ज्यादातर राजाआ ने लोकहित के नाम पर जी भरकर लोक का शोषण किया है। उन्हाने अपन आपको तथा अपन पीछे अपने उत्तराधिकारिया को सारा राज्यवैभव सौंपकर अपनी परम्परा का कायम रखा है। पूरी मानव जाति इस उत्तराधिकार म भयकर त्रासदी भोगती रही ह। इसीलिए स्वतन्त्र भारत के सविधान न एकतन्त्र क चोगे को उतार फक दिया तथा लाकतन्त्र का पूजा की वदी पर प्रतिष्ठित किया। पर आजादी क लम्बे समय के बाद भी यहा असली प्रतिष्ठित हुआ या नहीं यह एक चिन्तन का विपय है।

मतदाता की विवशता

यद्यपि इस अर्से म भारत म अनक आम चुनाव हा गए। नागरिका न अपनी पसन्द के नेता का चुनाव किया। पर लगता है नेताआ ने जनता की भावना का साकार नहीं किया। आज देश की जा स्थिति बन गई है उसम न ता भगवान् कुछ कर पा रहा है ओर न जनता भी कुछ कर पा रही। नेता लोग इस तरह सत्ता-लिप्सु बन गए हैं कि लोकतन्त्र की मूल भावना पर ही कुठाराघात होने लगा है। यह किसी एक पार्टी का सवाल नहीं है। लगता है इस दृष्टि से पूरी ससद जन-भावना को समझने मे अक्षम रही ह। सत्ता-प्राप्ति के लिए जैस स्वार्थपूर्ण जोड-तोड हुए व वास्तव म ही लोकतन्त्र के प्रति क्रूर व्यग्य-स प्रतीत होते हैं। सत्ताशीर्ष पर अल्पमत के प्रतिनिधि तक का बैठ जाना इसी बात का सकेत है कि यहा लोकतन्त्र स्वस्थ नहीं है। बचारा मतदाता आज विवश-ववश-सा दिखाई द रहा है।

पार्टी-प्रदेश से ऊपर

देश और दुनिया की आज जा हालत है वह किसी से छिपी हुई नहीं है। चारा आर समस्याआ क अम्बार लगे हुए हैं। उनस प्रगति के मार्ग इतने अवरुद्ध हो गए हैं कि आदमी को सूझ नहीं रहा है कि वह क्या करे? यद्यपि समस्याए पहल भी थीं पर आज व जिस तरह से अनुभव की जा रही हैं उतनी शायद पहले नहीं की जाती थीं। नि सन्देह आदमी की सोच का विस्तार हुआ है पर साथ-ही-साथ यह भी मानना हागा, कि वह स्वाथ-केन्द्रित भी होता जा रहा है। कहीं यदि स्वार्थ का विस्तार हुआ भी है तो पार्टी-प्रदेश की सीमाओ पर आकर रुक गया है।

एक दिशा सूचक यत्र

यही सही बात है कि दुनिया मे पदार्थ जितने हैं उतने ही रहगे। हा विज्ञान ने पदार्थ की पहचान के कुछ नए बिन्दु उभारे हैं। फिर भी यह सही है कि पदार्थों की अपनी एक सीमा है ही। यदि आदमी इस सीमा का समझकर समविभाग से भावित हो जाए तो उसके बहुत सारे दु ख-दर्द दूर हो सकते हैं। पर कठिनाई यही है कि पदार्थ की परिमितता का समझकर भी आदमी अधिक से अधिक अपने अधिकार म रखने की आकाक्षा से ग्रसित है। इसी से सघर्ष की आच तेज हो जाती है और न केवल अभाव-ग्रस्त आदमी ही दु खी होता है अपितु अन्तत साधन-सम्पन्न आदमी भी आराम से नहीं जी पाता। सरकारे इस सम्बन्ध म बहुत सार कानून बना रही हैं पर कठिनाई यही है कि कानून से हृदय का परिशोधन नहीं हाता इसमे बुराई मिटती नहीं है अपितु उसका मुख बदल जाता है। इस तरह एक बहुत

गहरी धुंध से आदमी घिरा हुआ है। उससे उबरने का कोई मार्ग दिखाई नहीं दे रहा है।

ऐसी स्थिति म अणुव्रत एक मार्ग दिखाता है। अणुव्रत का मार्ग कोई नया मार्ग नहीं है। यह तो शाश्वत सत्य की ही एक अभिव्यक्ति है। पर हमारे वर्तमान का नापन-जोखन का वह एक मापक यन्त्र अवश्य है। इसीलिए वह अंधेरे म एक प्रकाश-किरण है।

लोकतन्त्र एक जीवन शैली

लाकतन्त्र आज तक की सबसे ज्यादा निरापद शासन-पद्धति है। ऐसा नहीं है कि इस पद्धति के सामने भी काई प्रश्नचिह्न नहीं है। सबस बडी बात तो यह है कि जब लोक-चतना पूर्ण रूप मे जागृत नहीं होती तब तक लोकतन्त्र की सफलता भी सन्देहा के घेरो से मुक्त नहीं हो सकती। इसीलिए उसकी सफलता क लिए यह आवश्यक है कि जन-चेतना का जगाया जाए, प्रशिक्षित किया जाए। वास्तव म लोकतन्त्र केवल शासन-पद्धति नहीं है बल्कि एक जीवन-पद्धति भी है। एक-दूसरे के जीने के लिए जगह छोडना ही इस पद्धति की अपनी विशेषता है।

दल

यह सही है कि लाकतन्त्र म भी सत्ताशीर्ष पर कुछ ही व्यक्ति होते है पर यह भी सही है कि इसम अयोग्य व्यक्तियो के बदलन की गुजाइश भी है। इस दृष्टि से चुनाव लाकतन्त्र का मूलाधार है।

चुनाव क मुख्य चार घटक हैं— दल प्रत्याशी मतदाता तथा प्रचार-तन्त्र। चारा घटक स्वस्थ हा तभी स्वस्थ लाकतत्र का उदय होता है।

लाकतन्त्र अर्थात् लाक का तन्त्र जनता का तन्त्र। पूरी जनता पूरे राष्ट्र की भलाई के लिए जिस व्यवस्था का अच्छा समझ वही सच्चा लाकतन्त्र है। यह एक आदर्श स्थिति है। सब लोग इस तक नहीं पहुच सकत। एसी स्थिति मे दलीय व्यवस्था जन्म लती है। दलीय व्यवस्था से कुछ मतभेद भी जन्म लेत हैं। लाकतत्र म उन्ह सहना एक अनिवार्यता है। फिर भी इस विराधाभास म से एक समीकरण उभरता है कि एक पक्ष कभी गुमराह हो जाए ता दूसरे पक्ष उसे सन्मार्ग की आर प्रेरित कर।

लाकतन्त्र मे पार्टिया के द्वैत से इनकार नही किया जा सकता। पर उनकी शुचिता इस बात पर निर्भर है कि उनके सामने जनहित और राष्ट्र-हित का क्या उपक्रम है तथा उनका कितना सुदृढ जनाधार हे? सिद्धान्तहीन गठजाड और शाब्दिक

आश्वासन राजनीतिक दलो की विश्वसनीयता को कम करते हैं। जो पार्टिया योग्य प्रत्याशियो का चुनाव नहीं कर पाती उन्हे उसका खामियाजा भी भुगतना पडता है। अक्सर पार्टियो का विघटन योग्य व्यक्तियो के अभाव मे ही होता है।

पार्टियो का दायित्व केवल प्रत्याशियो के चयन तक ही सीमित नहीं है। मतदान तक की पूरी चुनाव-प्रक्रिया की पवित्रता की सुरक्षा भी उनका परम कर्त्तव्य है।

प्रत्याशी

योग्य उम्मीदवार चुनाव का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। साधारणतया पार्टियो के प्रति वफादारी को ही उम्मीदवार की योग्यता का मानदड माना जाता है। पर यदि उसका चरित्र ऊचा नहीं होता है तो बहुत बार वफादारी स्वय पार्टी को ही ले डूबती है। लोकतन्त्र मे वैयक्तिकता को सार्वजनिकता से तोडकर देखना भी उचित नहीं कहा जा सकता। यह सही है कि बौद्धिकता भी आवश्यक है, पर यदि वह चरित्र की सुदृढ नींव पर खडी नहीं होती है तो मतभेद का हल्का-सा हिलोर भी पार्टी की इमारत को ध्वस्त कर सकता है।

जातीय वर्गीय एव आर्थिक बाटो से तोल जाने वाला उम्मीदवार भी लोकतत्र के लिए लाभकारी सिद्ध नहीं हो सकता। क्योकि इन मूल्यो पर खडा उम्मीदवार सबसे पहले तथा स्वार्थ ऊपर आ जाएगे। चरित्र को एक व्यापक सदर्भ मे देखना तथा प्रतिष्ठित करना राष्ट्र की सच्ची सेवा है। अच्छे लोगो के लिए भी यह जरूरी है कि वे मतदाताओ को दो बुरो मे से कम बुरे को चुनने के लिए विवश न करे अपितु स्वय ही अच्छे लोगो के चुनाव की ससद की पुकार को सुने।

दुनिया मे अनेक तत्र अनेक बार प्रतिष्ठित हुए हैं। समय-समय पर हर तत्र ने अपनी उपयोगिता को भी रेखाकित किया है। राम राज्य जैसे एक तत्र को भी यदि कुछ लोग आदर्श मानते है तो इसका अर्थ यही है कि वह स्वार्थ केन्द्रित नहीं था। आज यदि वह अप्रतिष्ठित है तो इसका कारण भी यही रहा है कि सत्ताशीर्ष पर सही आदमी नहीं रहे। लोकतत्र को प्रतिष्ठित करने के लिए भी यह आवश्यक है कि सत्ताशीर्ष पर चरित्र-सम्पन्न व्यक्ति पहुचे। चुनावी रणनीति। तय करते समय इस बात पर विशेष ध्यान देना जरूरी है।

मतदाता

प्रत्याशी अपने भाग्य का परीक्षण करने के लिए मैदान मे उतरता है। वह गलत तरीको का भी इस्तेमाल कर सकता है। यदि मतदाता जागृत है तो वह उसे

सबक सिखा सकता है। यह सही है कि भोली जनता को रुपय-पैसा के प्रलोभन से झुकाया जा सकता है बल्कि कई लोग तो इतने भोले होते ह कि दारू की बोतल म ही बहक जाते है। कुछ लोग ऐसे तुच्छ प्रलाभना मे नहीं बहते हैं तो जाति, वर्ग या सम्प्रदाय के नारा मे बह जाते हैं। पर सजग मतदाता अपने अस्तित्व को यो नहीं बेच सकते। गलत राहो पर जल्दी चलने की अपेक्षा सही राहो पर धीमे चलना ज्यादा अच्छा है। बडे-वडे वादे करने वाले दूसरा पर कीचड उछालने वाले उत्तेजक भाषण असली उम्मीदवार की पहचान नही बन सकते। असल मे राजनीति को अपराधीकरण स बचाना जागरूक मतदाताआ के ही वश की बात है। मतदाता का यह एक दिन का राज ही उनके अगले पाच वर्षो का निर्णायक क्षण होता है। जो इसे पहचान पाता है वही लोकतत्र का सच्चा प्रहरी बन सकता है।

चुनाव के इस सारे प्रकरण म मीडिया का भी अपना महत्त्वपूर्ण यागदान है। स्वस्थ प्रचार-तत्र वही हा सकता है जो वस्तु-स्थिति को प्रकाश मे ला सके। यह सही है कि आदमी के अपने-अपन चश्मे होते हैं पर उन्हे रगीन न बनाया जाए तो भी वस्तुस्थिति को देखन म काफी सुविधा हो सकती है। इस दृष्टि से समर्थको स लेकर पत्रकारा तथा सरकारी प्रचार-तत्र तक की अपनी एक नैतिकता है। वह यदि स्वस्थ रहती है तो लाकतन्त्र को स्वस्थ-दिशा मे प्रस्थित किया जा सकता है।

अद्वैत मे काई चुनाव नहीं होता। दो हा तभी चुनाव की बात खडी होती है। इसलिए धर्म मे चुनाव की बात नहा आती। उसकी बात राजनीति से ही शुरू हाती है। यद्यपि आज धर्म म भी द्वैत दिखाई दता है। धर्म म जैन बौद्ध वैदिक मुसलमान ईसाई आदि अनेक भेद हैं। पर असल म ये सारे भेद धर्म मे नहीं होकर सम्प्रदाय म हैं। इसमे राजनीति का भी बडा हाथ है। जब भी सम्प्रदाया म राजनीति उभरती है तो पाकिस्तान और खालिस्तान का जन्म हुए बिना नहीं रहता। इस अर्थ से राजनीति को भी सप्रदाय से प्रेरणा नहीं लेकर धर्म से प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। ऐसा होगा तभी वह अद्वैत की राह पर आगे बढ सकेगी। ऐसा नहीं होगा तो उसमे बिखगव आएगा। इसमे न ता सप्रदाय का लाभ होगा और न शेष लोगो का। सप्रदाय का एक बार भला हो भी जाए ता भी धर्म के अभाव म वह फिर बिखरेगा।

जाति सप्रदाय से ऊपर

एक जमाना था जब भारतीय राजनीति म एकता थी। वह सप्रदाय से प्रेरणा नहीं लेती थी। काग्रेस मे सभी सप्रदाय के लोग शामिल थे। जब वह स्थिति बदली तो काग्रेस के टुकड हुए। टुकडो म फिर टुकडे हुए। आज ता स्थिति यह है कि हर राजनीतिक दल चुनाव मे अपने उम्मीदवार खडे करने क पहले यह देखता है

कि वहा किस जाति और किस सप्रदाय की प्रमुखता है। जनतत्र म चुनाव लडना कोई बुरी बात नहीं है पर जब चुनाव जातिया और सप्रदाया के समीकरण के आधार पर लडा जाने लगता है तो उसम गडबडी पदा हान लगती है। इस प्रक्रिया से चुनकर जाने वाले लाग निश्चय ही अपनी जाति और सम्प्रदाय की सज्ञा से मुक्त नहीं हा सकगे। अत चुनाव प्रक्रिया म सबसे पहली आवश्यकता इस बात की है कि राजनीतिक पार्टिया साप्रदायिक जातीय-भाव को नहीं जगाए। समझदार लाग राजनीति को सप्रदाय के डडे से हाकने के सदा विरोध म रहे है। इसका मतलब यह नहीं है कि जातिया का देश की मूल-धारा से काटना चाहिए। यदि अच्छे आदमी राजनीति मे नहीं जाएगे तो राजनीति म पवित्रता कैसे रह सकगी? पर यह भी आवश्यक है कि उम्मीदवारा को चुनाव म जाति और सप्रदाया का ध्यान नहीं रखा जाए, अपितु आदमीयता का ध्यान रखा जाए। जब ध्यान आदमीयता पर टिकेगा तो चुनकर आने वाले लाग भी उसे महत्त्व दे सकगे। जब आदमी जाति सप्रदाय क दरवाज स राजनीति म घुसगा ता उस सकीण बनाएगा ही।

राजनीति लोगा को यह समझ पाना बडा कठिन है। अपने आपको धर्म-निरपेक्ष मानने वाली पार्टिया भी उम्मीदवारा का खडा करने म जाति-सप्रदाय से प्ररणा लती हैं यह एक चितनीय बात है। आज राजनीति इतनी दुविधाग्रस्त हो गई है कि उसके सामने से आदर्शों की बात ओझल-सी हो गई है। रचनात्मक पहलू धूमिल हो गए है। चुनाव जीतना ही एकमात्र लक्ष्य रह गया है। यदि काई पार्टी यन-कन प्रकारण उस मानन का प्रयत्न करती भी है तो अपनी विजय पर भरासा नहीं होने के कारण दूसरा को हराने के लिए चाहे जैसे गठजोड हा रहे हैं।

ऐसी स्थिति मे मतदाता सजग बन सक तो एक क्रातिकारी परिवर्तन हो सकता है। भारतीय मतदाता यद्यपि राजनैतिक दला से प्रभावित है फिर भी समय पर उसने उनको अच्छी नसीहत दी है। अनक चुनावा म इस तथ्य को बहुत स्पष्टता से देखा जा सकता है।

वास्तव म जनतत्र की रीढ है— चुनाव। चुनाव सही तरीके से हो तो उससे सही लोग ही चुनकर आगे आते हैं। पर यदि चुनाव ही गलत हो तो सत्ता को थामन वाल हाथ मजबूत कैस हा सकते हैं?

सत्ता का आकर्षण

आज तो सत्ता का इतना तीव्र आकर्षण ह कि सभी लाग उसी आर दौडत हैं। असल म भारतीय राजनीति म अभी सिद्धान्तवादिता आई नहीं है। यहा विरोध पक्ष असगठित है। कभी यदि विराधी लागा म सगठन की बात चलती है ता वह

भी सत्ता को हथियाने के लिए ही। फिर व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा इतनी प्रबल है कि एक दल मे भी अनेक उपदल खडे हो जाते हैं। ऐसी स्थिति मे सत्ता पक्ष को मनमानी करने का मौका मिल जाता है।

सत्ता के इस मोह के कारण ही आम नागरिक आज यहा तक सोचने लगा है कि ऐसे दुर्बल जनतंत्र से आखिर साम्राज्यवाद क्या बुरा है? आज तो हर दिन मन्त्री बदलते रहते हैं। उनका भी अपना अजीब गणित है। फिर जो भी पद पर आता है वह अपने कर्तव्य को कितना निभाता है यह भी एक देखने की बात है। ऐसा नहीं है कि सत्ता पर आने वाले सभी लोग गलत हैं, पर राजनीति का आम चरित्र जैसा हो गया है, उससे उस पर आस्था नहीं जम पा रही है। कल तक जिस आदमी के पास कुछ नहीं था सत्ता पर आने के बाद रातो-रात वह जमीन से आसमान पर चला जाता है। सभवत वह इसमे आता ही इसीलिए है। चुनाव का भारी खर्च उठाकर जो व्यक्ति उसमे आता है वह माला फेरने के लिए तो आता नहीं। निश्चय ही इसमे उसका अपना स्वार्थ है। इसीलिए उसे भय रहता है कि यदि यह अवसर चूक गया तो फिर न जाने वह आएगा या नहीं? ऐसी स्थिति मे राजनीति पवित्र कैसे रह सकती है? सत्ता-लिप्सु राजनीतिक लोग एक बार नहीं, बार-बार दल-बदल का यह खेल इतना हास्यास्पद बना जाता है कि आम आदमी को भी शर्म आने लगती है। पर राजनीति के खिलाडियो को इसमे कोई शर्म नहीं आती। थोडी शर्म आती भी है तो कुछ दिनो के बाद अपने पर लगी मिट्टी झाडकर फिर खडे हो जाते हैं। ऐसे लोगो को पार्टिया यदि टिकिट नहीं देती हैं तो वे लोग बगावत करने से भी बाज नहीं आते। सयोग से जब कोई चुनाव जीत जाता है तो पार्टिया भी अपनी शक्ति बढाने के लिए उन्हे अपने मे शामिल करने मे कम स्फूर्ति नहीं दिखातीं। अपनी पार्टी को मजबूत बनाए रखने के लिए कभी-कभी ये लोग दल-बदल पर कानूनी रोक लगाने की भी बात करते हैं पर अन्दर कुछ ऐसी कमजोरी है कि बार टाय-टाय फिस हो जाता है।

अपने पक्ष का यदि कोई सदस्य दल-बदल कर लेता है तो उसकी तीव्र भर्त्सना होती है उसे पार्टी से अलग कर दिया जाता है। दूसरे पक्ष का कोई सदस्य अपनी पार्टी मे आता है तो उसका फूल-मालाओ से स्वागत होता है। यह एक ऐसा रोग है जो भारतीय जनतंत्र को खोखला बना रहा है। इसी से आम आदमी का प्रजातंत्र के प्रति सदेह होने लगता है।

मतदाता क्या करे?

सवाल यह है क्या मतदाता इस दल-बदल को रोक सकता है? निश्चय ही दल-बदल मतदाताओ का बडा भारी अपमान है। जिन लोगो ने एक व्यक्ति को

आस्था को देखकर उसे वोट दिया था उनकी राय के बिना किसी भी उम्मीदवार का दल-बदल करना एक बहुत बड़ी अनैतिकता है। इसलिए मतदाताओं को भी चुनाव के अवसर पर इस प्रसंग पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है तथा प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है। पर यह तभी हो सकता है जब मतदाता स्वयं जागृत हो। यदि वह स्वयं सोया हुआ है तथा स्वयं भी स्वार्थ में लिप्त है तो उम्मीदवार पर कैसे प्रभाव डाल सकता है?

असल में उम्मीदवारों को भी जनता ही खराब करती है। बड़े-बड़े सेठिये लोग अपना उल्लू सीधा करने के लिए सभी पार्टियों को पैसा बांटते हैं। उनके लिए सिद्धांत का कोई सवाल नहीं है। वे कम्युनिस्टों को पैसा देते हैं और मुस्लिम लीग और राम-राज्य परिषद् जैसी साम्प्रदायिक संस्थाओं को भी पैसा देते हैं। उनका इसमें स्वार्थ निहित है। वे एक लाख रुपये देते हैं तो दस लाख रुपये कमाते हैं। सत्ता और पूंजीपतियों की इस सौदेबाजी में गरीब जनता को पिसना पड़ता है और फिर जनतंत्र बदनाम होता है। इस दृष्टि से कुछ बेसमझ तथा स्वार्थी कार्यकर्ता भी कम उछल-कूद नहीं मचाते। अपने थोड़े से स्वार्थ के लिए गलत आदमियों को सहयोग-समर्थन कर वे पूरे जनतंत्र को भ्रष्ट करते हैं। जब गलत आदमी चुनकर जाते हैं तो वे दल-बदल करने से कैसे बाज आ जाएंगे? जरूरत यही है कि जनता अपने वोट की कीमत समझे और उम्मीदवारों को दल-बदल नहीं करने के लिए प्रतिबद्ध करे। ऐसा होगा तभी सिद्धान्तों के आधार पर राजनीतिक दलों का ध्रुवीकरण होगा। उसी से जनतन्त्र स्वस्थ बनेगा। इसीलिए अणुव्रत आन्दोलन एक आचार संहिता सब लोगों के सामने प्रस्तुत करता है।

अणुव्रत : एक प्रगत चिन्तन

अणुव्रत एक मानवता का आन्दोलन है। यह किसी धर्म-विशेष का आन्दोलन नहीं है। धर्म आज सम्प्रदायो म बध-बटकर अलग-अलग जागीर बन गया है। धर्म क लिए एक यह धारणा भी बन गई है कि वह गिरी-कन्दराओ मे साधना करने वाल सन्यासियो के पारलौकिक चिन्तन का ही विषय है या फिर मन्दिर-मस्जिद से जुडे हुए क्रियाकाड ही धर्म है। पर अणुव्रत ऐसा धर्म नहीं है। यह तो आज का और यहा का नकद धर्म है। आज यदि साफ-सुथरा है ता कल पर भी उसका प्रभाव पडता ही है। जिसका यह लोक सात नहीं है उसका परलाक भी सान्त नहीं हा सकता। घर-दफ्तर का धर्म भी मदिर-मस्जिद के धर्म से अलग नहीं हो सकता। इस अर्थ म अणुव्रत यदि धर्म का आन्दोलन है भी तो किसी सम्प्रदाय विशष का आन्दोलन नहीं है अपितु सभी धर्मों के सार्वभौम सत्या का स्वीकरण है।

एसे व्यापक आन्दोलन का व्यापक प्रचार-प्रसार हो यह अत्यन्त आवश्यक है। आज के युग म ता इसकी आवश्यकता और भी अधिक है। यद्यपि आज का युग नैतिक आन्दोलना को सहज रूप म स्वीकार नहीं करता है। पर अणुव्रत को इस कठिन परिस्थिति म ही अपना यात्रा-पथ तय करता है। इस दृष्टि से कुछ आवश्यक अपेक्षाए इस प्रकार हा सकती है।

अचल चरित्र-निष्ठा

चारित्रिक आन्दोलन क प्रचार-प्रसार के लिए यह जरूरी है कि इसस जुड हुए लोग *चरित्रनिष्ठ हो। इस दृष्टि से अणुव्रत के लिए यह एक विशष सुविधा है* कि इसे आचार्यश्री महाप्रज्ञ जैसे राष्ट्र-सत का अनुशासन तथा उनक वृहद् प्रबुद्ध एव सचेतन शिष्य साधु-साध्विया का पृष्ठबल प्राप्त है। साधु-सतो की समाज म एक विशिष्ट छवि हाती है। उनकी साधना एव अकिचनता स्वत ही लागा म प्ररणा भरती है। बहुत बार साधु-सता क वचन-मात्र से प्रभावित होकर आदमी बड-बड दुर्गुण को त्याग दता है। पर इसके साथ-साथ एसे कार्यकर्ताओ की आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता जिनका चरित्र अपने आप बाले। वेस उपदशा क

द्वारा भी दूसरो म प्ररणा भरी जा सकती है पर आचरणगत उदाहरण अपने आप म एक सटीक उपदेश है। सामाजिक लागा क द्वारा अपने ही बीच जीने वाली अचल निष्ठा का एक विशप प्रभाव होता है। अणुव्रत का साध्य भी तभी सिद्ध हागा जबकि इसक पास चरित्र-निष्ठ समर्पित कार्यकर्ताआ की टीम हागी। यद्यपि अणुव्रत क पास ऐसे अनेक महानुभाव हैं, पर उनकी सख्या का बढाना तथा उस सगठित करना आवश्यक है। इसम काई शक नहीं कि किसी भी आन्दोलन को आगे बढान म भातिक साधन-सामग्री की भी अपक्षा रहती ह पर जहा समर्पित एव सक्षम कायकता हात हैं, वहा सभी साधन अपन आप जुट जात ह।

तलस्पर्शी अध्ययन

चरित्र-निष्ठा के साथ-साथ कार्यकर्ताआ म वाध और वाणी की भी आवश्यकता हे। या ता हर युग ही प्रचार का युग हाता है पर हमारा आज का युग तो इस दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कहा भा है— बालने वाले क बोर भी बिक जाते हें और नहीं बालने वाले के सेव भी धरे रह जात हें। पर वाणी भी तभी प्रभावी बनती है जब उसके पीछे बोध का ठास धरातल हा। सही बात का भी दूसरो के गले उतारने के लिए प्रवुद्ध लागा की आवश्यकता हे। दुनिया म अनेकानेक लागा ने धर्म आर समाज के बारे मे बहुत कुछ लिखा है अणुव्रत को उन सबका सार ग्रहण कर सबको परोसना है। अध्ययन मनन और चितन जितना गहरा होगा प्ररूपण भी उतना ही प्रभावक वन सकेगा।

प्रयोग की आवश्यकता

बुद्धि के साथ-साथ प्रयोग भी नितान्त अपक्षित हैं। बल्कि जब तक अपन जीवन को प्रयागशाला नहीं बनाया जाएगा तब तक कवल ज्ञान स काम नहीं चल सकेगा। इस दृष्टि स सामूहिक तथा व्यक्तिगत दोना ही प्रकार क प्रयोगा स इनकार नहा किया जा सकता। प्रयोग की प्रक्रिया से गुजर कर ही सिद्धान्त का विश्वासपूर्वक व्यक्त किया जा सकता है। अव तो प्रक्षाध्यान तथा जीवन-विज्ञान क रूप मे अणुव्रता क साथ प्रयोगा का एक प्रबल पक्ष भी जुड गया है। व्रता का भावनात्मक रूप से ढालन क लिए ध्यान क प्रयोगा की सार्थकता असदिग्ध रूप से सिद्ध हा चुकी है। बहुत बार व्रत आत्मगत नहीं बनते हैं इसका मूल कारण यही हे कि वे अन्तश्चतना से नहीं जुड पाते। ध्यान की गहराई से व्रत का चतना का अभिन्न अग बनाया जा सकता है। व्यसन-मुक्ति क लिए ता ध्यान को एक अचूक औषधि के रूप म सुझाया जा सकता हे। दस-दस दिना क प्रेक्षा-शिविरा से ध्यान-

प्रक्रिया को हस्तगत कर चेतना को बहुत प्रभावी ढंग से भावित-प्रभावित किया
सकता है।

सामयिक से तालमेल

यद्यपि नैतिकता एक शाश्वत सत्य है। उसे टुकडो म तोडकर नहीं बाटा
सकता। पर जो सत्य सामयिक सदर्भो स नहीं जुड पाता वह बहुत उपयोगी न
बन पाता। बहुत बार आदमी ज्ञान क बोझ स तो भारी बन जाता है पर वह अप
वर्तमान म नहीं जुड पाता। एस लोग किसी भी आन्दोलन को गतिशीलता प्रद
नहीं कर सकते। इस दृष्टि से अणुव्रत को शाश्वत म तो जुडना ही है पर सामयि
सदर्भों पर भी चौकसी रखनी जरूरी है। अणुव्रत केवल एक आचार-सहिता
नहीं है अपितु इसका अपना एक विचार-दर्शन है। इसीलिए इस केवल बाल
विवाह वृद्ध-विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियो पर ही प्रहार नहीं करना है अपि
आज जो अनेक नयी व्यर्थ परम्पराए जन्म ले रही हैं उनकी ओर भी अगुली निर्दे
करना है। आज जो नैतिक आन्दोलन पर्यावरण-प्रदूषण अणु-अस्त्र जनसर
विस्फोट आदि समस्याओ स परिचित नहा होगा वह युग के साथ कदम मिलाव
नहीं चल सकता। आज दुनिया म जो कुछ हो रहा है उसक प्रति सचेत सतर्क रह
वाला व्यक्ति ही उसस कर्तव्य की प्रेरणा ग्रहण कर सकता है तथा आन्दोलन व
भी प्रगति क मार्ग पर आरूढ कर सकता है।

धर्म और सम्प्रदाय

धर्म आज अप्रतिष्ठ हो गया है। धर्म का नाम आते ही पढ़-लिखे लोग उदासीनता से भर जाते हैं। ऐसा समझा जाने लगा है कि उसका जीवन में कोई स्थान नहीं है। इतना ही नहीं बल्कि यह भी समझा जाता है कि यही सब झगड़ा का मूल है। वास्तव में समझदार लोगों की यह सोच बेबुनियाद नहीं है। धर्म आज कहीं *अंधविश्वासों में उलझ गया है तो कहीं स्वार्थभाव में। भले ही आम आदमी आज* किसी न किसी धर्म से जुड़ा हुआ है। पर असल में यह जुड़ाव या तो वंश-परम्परा से हो गया है या क्रियाकांड से। धर्म का सही अर्थ है आत्मशुद्धि। पर आज वह सम्प्रदाय मात्र बनकर रह गया है। धर्म का नाम आने पर आत्मशुद्धि का अहसास ही नहीं होता। बल्कि उसका नाम आते ही सामने कोई सम्प्रदाय आकर खड़ा हो जाता है। इसीलिए आज का बुद्धिवादी धर्म से दूर ही भागता है उसे दूर से ही नमस्कार करना नहीं चाहता है।

धर्म और राजनीति

कोई जमाना था जब व्यवस्थाओं का संचालन भी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से धर्म से ही होता था। पर जब धर्म के कारण व्यवस्थाओं में गड़बड़ी होने लगी सम्प्रदाय उभरने लगे तो राज्य-व्यवस्था ऊपर आ गई और धर्म गौण हो गया। आजादी की लड़ाई के समय देश में जिस एकता के दर्शन होते थे वे सम्प्रदायों के कारण नहीं राज्य-व्यवस्था के कारण ही होते थे। हिन्दू, मुसलमान सिख, ईसाई सभी एक-जुट होकर आजादी के लिए अपनी आहुति देने के लिए तत्पर हो जाते थे। पर धीरे-धीरे यह विकास इस तरह से हुआ कि जहां राजनीति धर्म के द्वारा शासित होती थी वहां धर्म ही राजनीति के द्वारा शासित होने लगा। आज तो राजनीति देश पर इस कदर हावी हो गई है कि धर्म केवल मन्दिरों-मस्जिदों एवं गुरुद्वारों में कैद होकर रह गया है। बल्कि स्थिति तो यह हो गई है कि धर्म-समारोहों में भी जान तब आती है जब कोई राजनेता मंच पर उपस्थित होता है। यदि किसी कारण से राजनेता वहां उपस्थित नहीं भी होता है तो परोक्ष रूप से उसके डोर हिलते रहते

हैं। भले ही इस राजनीति की प्रभुसत्ता कहें या धर्म की प्रभावहीनत
निश्चित है कि धम आज अधिकतर राजनीति क सीखचा म बन्द है

इसका यह अर्थ नहीं है कि राजनीति आज पूर्ण रूप से विशुद
राजनीति भी आज सम्प्रदायो क इशारो पर चल रही है। यदि राजनीति
पर कायम रहती ता वह धर्म मे समागत अध-विश्वासा एव स्वार्थपरता
कर एक एसे नये युग का सृजन कर सकती थी जिसम आम आदमं
सुख-समृद्धिपूर्ण हाता। पर वह अपना वैमा चरित्र रूपायित नहीं कर
वर्तमान राजनीति का मूलाधार वाट-बैंक है अत उसका ध्यान उधर ही
वाट अधिक बटार जा सक्त हा। एमी स्थिति म निर्णायक शक्ति ि
बनकर वाट बन जाते हैं और जाने-अनजान म राजनीति भी सम्प्रदाया
जाकर अपना त्राण खाजती है। इस दृष्टि स दखा जाए तो आज र
अपवित्र हा गइ है। आज व राजनता कहा हैं जो राजनीति को व्यापार
सेवा का व्रत मानते थे। वास्तव म यही समस्या की जड है। यहीं
पार्टीतत्र बन जाती है।

परस्परता

कहने का अर्थ यह नहीं है कि राजनीति नहीं हानी चाहिए या ध
चाहिए। असल म दाना का अपना अलग-अलग महत्त्व है। अपने
राजनीति की महत्ता है तथा धर्म की भी अपने स्थान पर महत्ता है। बलि
एक-दूसरे की आवश्यकता है। धर्म दीर्घकालीन राजनीति है औ
तत्कालीन धर्म। न ता धर्म क बिना राजनीति चल सकती है और न
सुव्यवस्थाआ क अभाव म धर्म चल सकता है। फिर भी यह तो आव
कि राजनीति क नाम पर सम्प्रदाय को न थोपा जाए और धर्म के नाम
का आग नहीं किया जाए। यदि राजनीति पर धर्म का अकुश नहीं
दिग्भ्रात हा जाएगी तथा धर्म की धारणा के केन्द्र म सम्प्रदाय रहा ता वह
हा जाएगा। आज एसे धर्म की अवश्यकता है जा न तो सम्प्रदाया से प्रे
न राजनीति से। बल्कि वह राजनीति को भी पवित्रता द तथा सम्प्रदाय क
का पावन धाम बना दे।

अणुव्रत एक एसा ही धर्म है। इसका प्ररणा न तो राजनीतिक पा
न कोई सम्प्रदाय। यह तो चरित्र-शुद्धि का एक अभियान है। जब आदमं
विशुद्ध नहीं होता है तभी सारी समस्याए खडी हाती है। वास्तव म ध
है वह तो जीवन क लिए आवश्यक प्राण ऊर्जा है। जब भी जीवन इ

शून्य हो जाता है तो वह समस्या बन जाता है। अणुव्रत शुद्ध धर्म की प्रतिष्ठा का प्रयत्न है। इसीलिए बुद्धिवादी लोग भी इसकी ओर आकर्षित हैं। अणुव्रत के समर्थको-अनुयायियो मे एक ओर परम आस्तिक लोग हैं तो दूसरी ओर परम नास्तिक लोग भी हैं एक ओर पार्टियो के प्रमुख हैं तो दूसरी ओर सम्प्रदायो के प्रमुख भी हैं।

सर्वधर्म सद्भाव का मच

एक सवाल अक्सर उठाया जाता है कि अणुव्रत भी तो एक सम्प्रदाय विशेष के आचार्य की ओर से चलाया जा रहा है, तब यह धर्म कैसे हुआ? इसका सीधा-सा उत्तर है— अणुव्रत की आचार-सहिता मे किसी भी सम्प्रदाय-विशेष की छाप नहीं है। यह तो सर्व सम्प्रदाय सम्मत आचार-सहिता है। इसके द्वारा किसी सम्प्रदाय विशेष के हित-साधन की अभीप्सा नहीं है। यो किसी सम्प्रदाय विशेष के व्यक्ति द्वारा चलाया जाने से ही इसमे सम्प्रदाय प्रवेश कर जाए तब तो अणुव्रत भी अपने आप मे एक सम्प्रदाय बन जाएगा। साम्प्रदायिक सकीर्णताओ से ऊपर उठाने के लिए ही भरसक प्रयत्न किया जा रहा है कि न तो यह अणुव्रत अनुशास्ता के सम्प्रदाय को सब पर लादे और न स्वय मे भी कोई खडा करे। यह तो सर्वधर्म सद्भाव का मच है। विशुद्ध धर्म की प्रतिष्ठा ही इसका उद्देश्य है। इसीलिए यह एक सार्वभौम धर्म है।

अणुव्रत और व्यसन-मुक्ति

"दीर्घ जीवन का रहस्य है— सिगरट शराब जुआ और पर-निदा से बचना।" यह सलाह किसी धर्मगुरु की नहीं है अपितु दुनिया के सबसे बुजुर्ग इसान जॉन इवास की है जिसने १९ अगस्त १९८९ को अपना ११२वा जन्म-दिवस मनाया था। सचमुच यह एक बहुत बडी चेतावनी है। नशा मनुष्य के लिए कितना नुकसानदेह है। यह बात आज किसी से छिपी हुई नही हे। फिर भी आश्चर्य है कि न केवल गरीब और अपढ लोग ही इसके चगुल म फस हुए हैं अपितु अनेक समृद्ध और पढे-लिख सभ्रात लाग भी इसकी चपट म ह। बदसगत शारीरिक कमजोरी तनाव विज्ञापन उन्माद आदि इसके अनेक निमित्त कारण ह। पर यह निश्चित हा चुका है कि मनुष्य के लिए इसका उपयोग लाभप्रद नहीं है। तन मन तथा चरित्र बल्कि पारिवारिक जीवन को बिगाडने म भी इसका पहला स्थान है। इतना ही नहीं आज यह दुनिया की समस्या नम्बर एक बन गया है। जब भी दुनिया के शीर्षस्थ लोग बडी-बडी समस्याओ पर विचार करने लिए बैठते हैं तो नशे पर अनायास चर्चा शुरू हो जाती है। पूरी दुनिया इससे आक्रात है। एशिया म भी तीव्रता से इसका प्रसार हो रहा ह। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सगठन के एक अनुमान के अनुसार अकले भारत म इस समय ५० लाख लोग नशीली दवाइया का सेवन करते हैं। सगठन का कहना है कि सातव दशक के प्रारम्भ तक एशियाई महाद्वीप मे नशीली दवाइयो का व्यापार नहीं के बराबर था पर आज वह व्यापक स्तर तक फैल चुका है। कहा जा रहा है कि कवल मादक द्रव्यों की तस्करी धन्धा ही ३०० अरब डालर तक पहुच गया है। ये तो प्रकट आकडे ह। वास्तविक आकडे तो क्या हाग यह कहा भी नहीं गया है। ये तो प्रकट आकडे हैं। वास्तविक आकडे ता क्या होग यह कहा भी नहीं जा सकता। सवाल केवल पेसे का ही नहीं है। सवाल उन सहायक बीमारियो का भी है जिनस न केवल युवा पीढी का स्वास्थ्य ही चोपट हो गया है अपितु समाज-व्यवस्था को भी गहरा आघात पहुच रहा है।

कभी रोब-रबाब तथा अमीरी का प्रतीक-शोक आज हजारो-हजार लोगो के लिए जानलेवा बन गया है। न तो उनसे इस छाडते बनता है और न चालू रखते

बनता है। और अब तो विदेशा से भी इतनी नशीली दवाइया आन लगी हैं कि अफीम तो पिछड गया है। अब चोरी-छिप अफीम की खती का ही सवाल नहीं रह गया है। वह तो होती ही है पर आज तो बडे-बड शहरा म बल्कि छोटे कस्बा म भी नशीली दवाइया का जाल फैल चुका है। स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय परिसर इसक मुख्य अड्डे बन गए है। कुछ असामाजिक लाग अपन तुच्छ अर्थ-लाभ के लिए बच्चा की जिन्दगी के साथ खिलवाड कर रहे हैं। इसके लिए मुख्यत मेथाकोलोन गालिया का प्रयाग किया जाता है। अब तो इसके और भी अनेक रूप सामने आ गए हैं। दो-तीन स शुरू होने वाली य गालिया अतत पन्द्रह-बीस तक पहुच जाती हैं। परिणाम यह होता है कि इन्ह खाने वाल क युवावस्था म ही हाथ-पाव कापन लगते ह आर मस्तिष्क नियन्त्रण से बाहर हो जाता है। शुरू-शुरू म ता इसस बडी ताजगी अनुभव होती हे दुनिया बडी रगीन दिखाई देती है पर अतत हालत इतनी खराब हा जाती है कि आदमी न केवल अपराधा की आर बढ जाता है अपितु आत्महत्या के दरवाजे तक भी पहुच जाता है। स्वास्थ्य और शील ता कभी के बिक चुक होते है। आय दिन इस तरह के समाचार मिलते रहत हैं कि ऐस नशेबाज लागा का सिवाय नशे के और कुछ सूझता ही नहीं है। उनकी चिन्तनशक्ति तो क्षीण हा ही जाती है अपितु शरीर भी कमजोर हा जाता है हमेशा बुखार रहने लगता है ओर अतत वे असमय म मृत्यु के मुख म चल जाते हैं।

शराब और नशीली दवाए

प्रारम्भ म नश का विशेष रूप से शराब म ही पहचाना जाता था। थोडे-बहुत लोग अफीम भी खा लेते थे। पर महावीर के जमाने मे तो शायद शराब का नशा ही ज्यादा था। उस समय सभवत तम्बाकू भी प्रचलित नहीं थी। शराब उस समय का प्रचलित प्रिय पय था। अनेक साम्राज्य इसकी आदत से धूल-धूसरित हा गए। अनेक लाग इसके अभ्यस्त थे। इसीलिए महावीर को 'अमज्ज मसासि' कहकर बार-बार इस पर तीव्र प्रहार करना पडा। पर आज ता इतनी तेज दवाइया का आविष्कार हो चुका हे कि एक बार जा इस जाल म फस जाता हे वह फिर फसता ही जाता हे। थ्रिल की चाह से आज पूरी दुनिया का युवक हेरोइन मेक्सिकन केक्कटस मथा मफडाइन टमिस कोकीन गाजा तथा नारकोटिक ड्रग्ज पेथेडीन बारबिचुरेटिस ट्रक्वेलाइजर्स आदि अत्यन्त घातक दवाइया के चगुल म फसा हुआ हे। इससे न केवल अपराधा की सख्या म ही वृद्धि हुई है अपितु तस्कर व्यापार के रूप म अनक देशा की अर्थ-व्यवस्था भी अस्त-व्यस्त हो गई है। इसीलिए अमेरिका जैसे दशा मे ता इसकी रोकथाम के लिए करोडा रुपया का बजट निर्धारित

किया जाता है।

नशेबाजों का एक-एक वर्ग नशीले इंजेक्शनों का भी दिवाना है। मुख्य रूप से पैथाड्रीन, मारफीन, लारजेक्टिकल एवं गारडिनौल जैसे इंजेक्शनों का प्रयोग नशेबाजों द्वारा किया जाता है। शुरू-शुरू में इन इंजेक्शनों का आदी व्यक्ति इन्हें किसी डॉक्टर या कम्पाउण्डर से लगवाता है, पर अधिकांश मामलों में देखा गया है कि जब दो-तीन इंजेक्शन बेअसर होने लग जाते हैं तो अधिक मात्रा में इंजेक्शन लगाने का काम वह खुद ही करने लगता है। न जाने कितने ऐसे लोग हैं जो अपनी जिन्दगी को नशे की भेंट चढाकर जिन्दगी के चौराहे पर गुमराह होकर भटक रहे हैं। कुछ नशेबाज संखिया (जहर) की लकीर सलेट या जमीन पर खींचकर उसे जीभ से चाट जाते हैं। ऐसा नशा छोटे-मोटे नशों के बेअसर होने पर ही किया जाता है। यह नशा कभी-कभी जीवन में घातक भी हो जाता है। ऐसा समझा जाता है कि हेरोइन का नशा मारफीन जैसे इंजेक्शनों से हजार गुणा तेज होता है। परन्तु नशे के कुछ अभ्यस्त लोग कभी-कभी हेरोइन के नशे से भी प्रभावित नहीं होते।

नशे के आदी युवक-युवतियों पर जब सभी नशे बेअसर हो जाते हैं तो वे सर्पदंश लेने के लिए भी तैयार हो जाते हैं। बम्बई के रेड लाइट एरिया में ऐसा ही एक मौत का अड्डा है जिसे पीली कोठी के नाम से पुकारा जाता है। वहां मिट्टी के छोटे-छोटे बर्तनों में जहरीले सांप पाले जाते हैं। यह कोठी नशेबाजों का स्वर्ग समझा जाता है। इसकी कहानी बडी रहस्यमय है। इसकी चौकसी के लिए भी कुछ प्रशिक्षित एवं खतरनाक गुंडे रखे जाते हैं। उनके पास भयंकर किस्म के शस्त्र होते हैं। यह एक सच्चाई है कि इस कोठी में प्रवेश करने वालों की या तो लाश ही बाहर आती है या फिर वे इस दंश को पचाने के आदी हो जाते हैं। कभी-कभी सर्पदंश बर्दास्त न कर पाने से नशेबाज की मृत्यु भी हो जाती है। चुपचाप उनकी लाश को कहीं दूर एकांत में फेंक दिया जाता है। कहते हैं ऐसे लोग कभी-कभी तो स्वयं भी इतने जहरीले हो जाते हैं कि उनका दंश लेने पर स्वयं सर्प भी मौत के घाट उतर जाते हैं। सचमुच यह एक ऐसी खतरनाक कहानी है जिसे अनेक देशों में वास्तविक रूप से जीया जाता है। इसीलिए वहां की सरकार बडी चिंतित है तथा इसकी रोकथाम के लिए बड़े तीव्र प्रयत्न कर रही है। नशा विरोधी अभियान समिति के वरिष्ठ सदस्य एवं प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. के. एल. गोयल के अनुसार भारत में तमाखू सहित नशाबाजों की संख्या १४-१५ करोड़ से ऊपर है।

पान-पराग

नशे के अनेक रूप हैं। सबसे पहला रूप है— पान-पराग। शुरू-शुरू में लोग

शौकिया तरीक स इसस जुडते हैं पर यह दखा गया है कि पैसा कमाने की चाह से व्यापारी लाग इसमे ऐस पदार्थो का मिश्रण कर दते है जो पेट मे जाकर जम जात हें। आदम बढने पर मुह खुलना भी कम हो जाता है वल्कि कहा ता यह जाता है कि पान-पराग से कॅसर का राग सभव है।

धूम्रपान

उसके बाद नम्बर आता है— धूम्रपान का। पूरी दुनिया इस बीमारी से आक्रात है। पूरी दुनिया भर म ८५ अरब डालर धूमपान पर खर्च हा जाते हैं। इस राशि स काई ५००० अरब सिगरट खरीदी जा सकती है। यदि हम यह सख्या का प्रति व्यक्ति के रूप मे विभाजन करे ता एक व्यक्ति क पल्ले १००० सिगरेट आती है। वसे इस समय लगभग १००००००००० स ज्यादा लाग सिगरट पीत हैं। तथा इसे पीने वाले शौकीना की सख्या दा प्रतिशत अनुपात स बढ रही है। तम्बाकू की खपत २० वर्ष पहले की खपत से ७३ गुना ज्यादा हो गई ह।

विश्व स्वास्थ्य सगठन के अनुसार हर वर्ष दुनिया म कम-स-कम १०००००० लाग धूम्रपान और तम्बाकू क कारण असमय म मर जाते हें। दुनिया म हर वर्ष ७००००० मामले फफड के कैसर के सामने आते हें। इनम से अधिक मामले धूम्रपान की देन है। ७५ प्रतिशत मामले क्रॉनिक व्रान्काईटिक के २५ प्रतिशत हृदय-रोग के मामल भी धूम्रपान की वजह से हाते है। एक सिगरेट आदमी की १४ सेकण्ड आयु कम करता है।

इतना ही नहीं कि धूम्रपान करने वाले लोग ही उमसे प्रभावित होते हैं अपितु उनके सम्पर्क म रहने वाले लाग भी उससे प्रभावित हुए बिना भी नहीं रहते। एक अध्ययन के अनुसार पति-पत्नी म स एक के धूमपान करने ने दूसरे के फेफडे के कैसर से प्रभावित हाने के दुगुने-तिगुने अवसर रहते हैं। धूम्रपान के कारण वच्चा पर भी घातक पडता है। दुनिया भर म कम-से-कम ३० लाख शिशु अपनी माताओ की धूमपान की आदत के कारण जानलेवा रसायनो के चक्कर मे फसते हैं। हर साल हजारा बच्चे इसलिए मर जाते हैं चूकि उनकी माताए धूम्रपान करती हैं। गर्भस्थ बच्चा पर माता क धूम्रपान का गहरा असर हाता है। सिगरेट का धुआ पर्यावरण को भी दूषित करने म अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

धूम्रपान से रक्त-सचालन म गडवडी हो जाती है तथा इससे अधेड आदमी का पौरुष भी विघटित हो जाता है। डॉक्टरा एव वैज्ञानिको का कहना है कि सिगरट पीने से मनुष्य के गुर्दे फेफडे और यकृत बुरी तरह से प्रभावित होते हैं। इसके पीने से मुख्य रूप से टी बी कॅसर दमा और तरह-तरह के मूत्र-विकार तथा गैस

सम्बन्धी बीमारिया हाती हैं। यूरोप और अमेरिका म कैंसर से मरन वाला की कुल सख्या ८० प्रतिशत सख्या सिगरेट पीने वालो की है।

जवामर्दी क सबूत क रूप म हाठ से लगी बीडी का धुआ फफडा को इसका आदी बना देता है। इसके बाद शुरू होता है बर्बादी की बेल का फैलना। सुबह आख खुलते ही यह नाटक शुरू होता है जिस लेट्रिन से लकर भाजन की टेबल तक आदमी करता रहता है। इस जहरीले धुए को निगलते हुए लाखा लोग कैंसर तक न्यौता दे रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय कैंसर उपचार परिषद के अध्यक्ष बाइजेली ग्रेने अपनी एक रिपार्ट म बताते हैं कि भारत मे इस पर प्रतिबध नहीं लगाया गया तो यहा थाड ही वर्षों मे लाखा-कराडा लाग फेफडे क कैंसर से ग्रसित हो जायगे।

नशा और अपराध

धूम्रपान के बाद नश की यह मात्रा मयखाना के द्वार पहुचती है। दी ओहिया स्टेट युनिवर्सिटी के श्री वाल्टर सी रेलेक्स ने अपनी पुस्तक 'दी क्राइम प्रोब्लम' म शराब पर मागापाग अध्ययन प्रस्तुत किया है। उन्हाने कहा है— अपराध से तीन बात मुख्य रूप मे जुडी हुई ह। शराब पीना नशीली दवाइया लेना तथा अस्वाभाविक यान-भावना। वेश्यागमन जुआ परिवार का बिखराव गर्भपात भिखारीपन आदि अनेक समस्याए भी इसके साथ जुडी हुई हैं। शराब इन सारी समस्याआ का नाभिक-बिन्दु है।

अमेरिका की एक जाच समिति ने १२ राज्या के १७ कारागृहा आर सुधार-गृहा मे १३४०२ कैदिया पर परीक्षण कर यह तथ्य निकाला है कि उनम से ५० प्रतिशत अपराध शराब के कारण किए गए। यह कहना शायद सही नहीं होगा कि हर शराबी अपराधी ही होता है पर यह सच है कि शराब ओर अपराध-कर्म मे गहरा अनुबध है। शराबी व्यक्ति अपने सामाजिक-पारिवारिक दायित्वा का भी ठीक मे निर्वाह नहीं कर पाता। वह आसत आदमी की तुलना मे ज्यादा अपराध करता है।

फौजदारी अदालत के सम्मुख सुनवाई के लिए उपस्थित व्यक्तिया मे से ७० प्रतिशत लोग मादक शराब के आदी होते हैं। उनम से सामान्य आदमी की अपेक्षा आत्महत्या का दर ८ प्रतिशत अधिक आका गया है। इमी तरह उनका यान अपराधा म ६० प्रतिशत चोरी म ६५ प्रतिशत जालसाजी म ६६ प्रतिशत हथियार सबधी अपराधा म ८५ प्रतिशन जेबकतरी म ९५ प्रतिशत गोली चलाने म ८३ प्रतिशत और बलात्कार म ३९ पतिशत भाग रहता है।

बाल-अपराध तथा अवेध-सताना की उपज का मुख्य अड्डा सुरागृह ही

होते हैं। ९० प्रतिशत अवैध सतान उन परिचया का ही परिणाम होती हैं। एस मामलो स सम्बन्धित युवक-युवतिया की उम्र अक्सर १६-२२ वर्ष के बीच की होती है। डॉक्टर हीले के अनुसार अल्प मात्रा म किया जान वाला सुरापान भा किशोर युवतियो को चरित्र की दृष्टि स गिरा दता है। अनक खाजा स यह बात अत्यन्त स्पष्ट हो गई है कि सुरापान की अवस्था म महिलाए अपना विवक खो देती है। बल्कि गर्भवती नारी यदि शराब पीती है तो उसक गर्भस्थ बच्च म भी विकृतिया आ जाती हैं।

तलाक सम्बन्धी मामला के सम्बन्ध म अपना अनुभव सुनाते हुए श्री मक ने कहा कि ७५ प्रतिशत मामला म झझट शराब से ही शुरू हाता है, जिनका अत तलाक म होता है। निश्चय ही यह प्रत्यक दृष्टि से नैतिक-पराभव का परिचायक है।

१८ अप्रैल १९६८ मे रूस के प्रमुख समाचार-पत्र प्रावदा म कहा गया है कि वहा १४ से १६ आयुमान के अनेक किशोरो द्वारा किए गए अपराधा का एकमात्र कारण शराब पीना रहा। उसके लिए उन्हे बार-बार चारी करनी पडी। बाल अपराधियो की कॉलानी मे रहने वाले ९० प्रतिशत बच्चा न अपनी गिरफ्तारी से पूर्व शराब-पान किया था।

यह केवल रूस अमेरिका का ही सवाल नही है हर देश मे बच्चे आज व्यसना से बहुत तीव्रता से आक्रात हो रहे है। भारत म भी यह समस्या बहुत तेजी से बढ रही है। दिल्ली सामाजिक विकास परिपद् द्वारा किए गए सर्वेक्षण स पता चला है कि न केवल लडका म ही अपितु लडकियो मे भी यह बुराई बहुत तीव्रता से बढ रही हे। दिल्ली के कॉलेजो म जहा ५० प्रतिशत लडके नशो मे फसे हुए हैं वहा शराब और बीयर पीने वाली लडकिया का प्रतिशताक ११ ६ रहा है। सहशिक्षा वाले कॉलेजो म तो वह प्रतिशताक २१ २ रहा है। परिपद का अभिमत है कि सम्पन्न घरानो की लडकिया यह प्रतिशत ज्यादा है।

महिलाओ मे बढता प्रवाह

अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान मस्थान के डॉ डी मोहन के अनुसार कवल दिल्ली मे ही ७५ ००० महिलाए धूमपान करती हैं। अन्य व्यसनो मे भी भयकर वृद्धि हो रही है। भाग-गाजा आदि नशीले पदार्थ भी अच्छी मात्रा म काम आ रहे हैं। इन मादक पदार्थों का बुरा असर शरीर के सभी अगा पर पडता है। इनक सेवन स मानसिक असतुलन उत्तेजना मायूसी तथा मास की तकलीफ आम बात है। हा सकता है इनसे एक बार आदमी अपने आपको तनावमुक्त महसूस करे पर अतत

ये जितने तनाव आदमी पर लादकर चले जाते हे उनकी कोई सीमा ही नही रहती। गाजा, चरस पीने वाला की मस्तिष्क की काशिकाए जल्दी ही निष्क्रिय निर्जीव एव नष्ट हो जाती हैं। दिमाग चिडचिडा रहने लगता है विवेक क्षीण हो जाता है और आदमी जघन्यतम अपराधो से जुड जाता है।

इस तरह हम दखते हें नशा हमारी दुनिया की एक भयकर समस्या वन जाती है। अणुव्रत के अन्तर्गत व्यसन-मुक्ति एक विशेप लक्ष्य है। आदमी का सकल्पवान बनाकर नश स मुक्त रखना तो एक तरीका है ही, पर व्यसनग्रस्त लोगा को प्रेक्षाध्याय के द्वारा व्यसनमुक्त करन का एक अभियान भी अणुव्रत क अन्तर्गत विकसित हो रहा है।

नशा और विज्ञापन

नशीली चीजा का विज्ञापन भी एक भयकर समस्या बनती जा रही है।

१५ जून १९९२ का इडिया टुडे मरे सामने है। जब मैंने आकर्षक कवर पेज को पलटकर देखा तो उसम फोर स्क्वेयर सिगरट का विज्ञापन दिखाई दिया। उसी अक के आखिरी कवर पज को उलटकर देखा तो वहा भी गोल्ड फ्लेक सिगरेट का विज्ञापन ता सिगरट का ही था। मै माचने लगा— भारत म प्रचुर मात्रा मे पढ जाने वाले इस प्रतिष्ठित पत्र म जहर का यह विज्ञापन क्या? यह साचना गलत होगा कि अखबार वाला को धूम्रपान के घातक परिणामा का पता नहीं होगा। अवश्य ही कुछ भोले लाग खतर के इस सिगनल का नहीं पहचानते। पर क्या प्रबुद्ध प्रकाशक मण्डल धूम्रपान के विज्ञापन पर छपी इस वैधानिक चेतावनी को आखे मूद कर छापते हैं कि सिगरेट पीना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

स्तरीय पत्रा से लोगों को आशा रहती है कि व देश के स्वास्थ्य की चिन्ता अवश्य कर। ऐसे पत्र तो देश की बारीक मे बारीक बीमारी की सूचना देने वाले अक्षर-एक्स-रे हाते हैं। पर जब साधारण एव बेबस आदमी की तरह इन्हे भी चादी के डण्डे से हाका जाना स्वीकार हो तो फिर शिकायत किस अदालत में की जाए?

यह शुक्र है कि मैं नियमित अखबार नहीं पढता। मै नहीं जानता इडिया टुडे म ऐसे विज्ञापन सदा ही छपते हैं या नहीं। यदि सदा छपते ह ता इतने आकर्षक तरीके से छापे गए इन विज्ञापनो का क्या कोमल मना पर प्रभाव नहीं पडता है? प्रभाव न पड तो शायद दूसरी बार इन्ह विज्ञापन भी न मिल। आज जा धूम्रपान का प्रचार बढ रहा है उसके मूल मे विज्ञापना का बहुत बडा हाथ है। जनता का स्वास्थ्य के साथ खिलवाड करने वाले लोग ही मोटी रकम देकर ऐसे विज्ञापन छपवाते हैं। सामान्य आय वाला आदमी शायद इतने महगे विज्ञापन नहीं दे सकता। जब उन्हे

अनाप-शनाप आय होती है तभी वे थोड़ा पैसा विज्ञापनों के लिए फेंक देते हैं। यह सही है कि इसमें केवल अखबार वालों का ही दोष नहीं है। उन्हें यदि इससे मोटी रकम धूम्रपान के विरोध में मिले तो वे उस विज्ञापन को भी छाप देंगे। यह धूम्रपान नहीं करने का विज्ञापन कौन दे? इस धंधे में जुड़े हुए लोगों का अपना स्वार्थ होता है। अतः वे विज्ञापन देते हैं। बिना स्वार्थ के कौन विज्ञापन दे? पर लगता है कुछ दिनों कुछ ईमानदार लोगों को यह कदम भी उठाना पड़े।

पर यदि थोड़ी जिम्मेदारी अखबार वाले महसूस करें तो शायद उनकी कलम स्वयं कांप जाएगी। यह कहना महत्त्वपूर्ण नहीं है कि आप आदमी धूम्रपान करता है तो फिर उसके विज्ञापन को कम क्यों किया जा सकता है? अखबार आम आदमी को राह दिखाने वाले होते हैं। वे बड़े चाव से इस अखबार पढ़ते हैं। मैंने भी तो रियो डी जनेरो में प्रदूषण के सन्दर्भ में होने वाले पृथ्वी सम्मेलन की रपट पढ़ने के लिए ही इस अखबार की प्रतियां विशेष रूप से प्राप्त की थीं। मैं वह रपट पढ़ना भूल गया और इसी विचार में उलझ गया कि क्या तम्बाकू का धुआं प्रदूषण नहीं फैलाता है? अवश्य ही ओजोन परत के नष्ट होने के अपने बड़े खतरे हैं पर जो आदमी धूम्रपान करता है वह तो तत्काल उसके प्रदूषण से प्रभावित होता ही, यह ही नहीं उसके आस-पास बैठने वाले लोग भी उससे प्रभावित होते हैं ऐसी स्थिति में समझाना तो आवश्यक है कि धूम्रपान एक खतरनाक खेल है। पर हो उलटा रहा है। विज्ञापनों के माध्यम से हम इस रूप में परोसा जा रहा है कि आदमी में ज्यादा से ज्यादा सिगरेट पीने की चाह जागे। लोगों के सौन्दर्य बोध का अनुचित लाभ उठाने के लिए जैसे विज्ञापन छापे जाते हैं निश्चय ही वे मानव-संस्कृति के लिए घातक हैं।

यह सही है कि अखबार भी एक धंधा है। पर यदि उसके सामने से उचित-अनुचित सही और गलत की कसौटियां गिर जाती हैं तो फिर उन्हें भी बिड़ी बेचने वाले लोगों से ऊंचा नहीं माना जा सकता।

तड़पती छातों की पुकार को सुनना जरूरी है पर असल में तो आदर्शशील लोगों को विज्ञापन की इस पूरी संस्कृति से ही जूझना होगा। आज हमारे पर्यावरण को सबसे बड़ा जो खतरा है वह ऐसे उद्योगों से ही है जो अपने उत्पादनों को खपाने के लिए विज्ञापनों के रूप में भरपूर पैसा बांटते हैं। पहले भरपूर नाम कमाया। और फिर कृत्रिम भूख जगाने के लिए भरपूर पैसा बांटना यह एक ऐसा धंधा बन गया है जिसमें पूरा पर्यावरण बिगड़ रहा है। उसके लिए केवल उद्योग-धन्धों और पत्रों-विज्ञापनों को कोसने से भी काम नहीं चलेगा। यदि आदमी ने संयम से जीना नहीं सीखा तो मानना चाहिए, वह उसी डाली को काट रहा है जिस पर स्वयं बैठा है।

भल ही आधुनिकता-वाध स भावित लाग सयम क नाम स नाक-भौंह सिकोड पर भोगवाद यदि एस ही वढता गया तो वह प्रलय को आमत्रण देकर वुलान जैसा हागा। इस अभियान म एसे पत्रा की महत्त्वपूर्ण भूमिका से भी इकार नहीं किया जा सकता जो न कवल स्वय सयमित रहत हैं तथा असयम का वायुमण्डल पैदा करन म भी मुख्य सहभागी वनते हैं। सचमुच दुनिया केवल मीठी गोलिया से नहीं वच सकती। यदि उस वचना है ता सयम क कटु सत्य का भी पचाना हागा। आज सयम कारा धार्मिक उपदश नहीं रह गया है अपितु एक हकीकत वन गया है। इस जितना जल्दी समझ लिया जाए, उसी म पूरी दुनिया का फायदा है। सिगरट जितनी दर आदमी की अगुलिया म कसी रहती है उतना ही जिदगी को क्षीण करती है। वास्तव म समुद्र म डूबकर जितन लोग नहीं मरत उतन लोग नश म डूवकर मर जाते हैं।

विज्ञापन का एक दूसरा दृश्य भी मर सामन ह।

अजमर की एक आम सडक आम चौराहा। सामने एक आकर्षक विज्ञापन लगा हुआ था। एक सुदर्शन युवक गवार्ली अदा म हाथ की अगुलिया म सिगरट थाम खडा था। सामन लिखा हुआ था— 'सच्चे लाग सच्चा आनद।' म साचने लगा— क्या सिगरट पीने वाले लाग ही सच्च हात हैं और क्या सच्चा आनन्द सिगरट स ही मिलता है। एक साथ अनेक प्रश्न मेरी चतना का झकझार गए।

मरस पहला प्रश्न ता यह था कि एस सार्वजनिक और भीडभाड वाल स्थान पर ऐसे भडकील विज्ञापन लगाना क्या दुघटनाआ को आमत्रित करना नहीं ह? ऐस स्थल वास्तव म इतन सवेदनशील क्षेत्र हात हैं कि आदमी एक क्षण चूका और गया जीवन स। सभवत हर वड नगर म एस अवसर आते हा रहत हैं जहा दुघटनाआ का मूल कारण इस तरह क लुभावन विज्ञापन होते हैं। निश्चय ही सिगरट पाना खतरनाक है, उसका इस तरह विज्ञापन करना ता और भी अधिक खतरनाक ह। माना कि विज्ञापन करने-करान वाल ने नगर-परिषद् का पूरा पैसा दिया है पर नगर-परिषद् का भी सोचना हागा कि वह नागरिका को रक्षक है भक्षक नहीं। यदि उसके थाडे से लाभ क कारण एक भी दुर्घटना घट जाती हे ता वह राष्ट्र की अपूरणीय क्षति है। निश्चय ही उस क्षति का रुपये-पैसा स नहीं भरा जा सकता। यह ठाक हे कि आदमी का स्वय सभलकर चलना चाहिए, अपना सतुलन नहीं खोना चाहिए, पर सवाल ता यही है कि एस स्थानो पर एसे विज्ञापन लगाए ही क्या जाए? एस विज्ञापन केवल तम्बाखू के ही नहीं होत अपितु सिनेमा के भीमकाय और लुभावन विज्ञापन आउट कट आदि तो इस दृष्टि स दुर्घटनाआ को सीधे आमत्रण होते हैं। असल म ता एसे विज्ञापन हमारे सास्कृतिक मूल्या पर सीधे प्रहार हाते ह

पर आज विज्ञापन की एक सस्कृति-शैली ही ऐसी वन गई है कि उसका नुकसान पूरी पीढी को भुगतना पड रहा है भुगतना पडेगा। सौन्दर्य वाध का यह प्रदर्शन राष्ट्र की गरिमा पर करारा प्रहार है। लगता है अनेक रूपाकारा म हान वाला यह प्रहार मनुष्य की एक नियति वन गई है। आज उसके विरोध म आवाज उठाना भी जैसे गुनाह हो गया है। थोडे से रूपजीवी और रुप्यजीवी लोग आज जो कुछ न कर ल वही थोडा है।

फिर मैं साचने लगा— सिगरेट पीन वाले लाग सच्च कैस हो सकत ह? सच्चे तो वे लोग होत ह जा किसी प्रकार का नशा नहीं करत। नशा चाह छाटा भी क्या न हा पर जा लाग उसस जुड जात हैं व एक प्रकार से अपन अस्तित्व का ही वच देते हैं। फिर उसके लिए उन्ह कस-कैस पापड वलन पडते हैं उस वतान के लिए उदारहणा की कमी नहीं ह। आचार्य भिक्षु क गृहस्थ जीवन की घटना इस प्रसग पर वडा अच्छा प्रकाश डालती है। एक बार व एक ऊट पर सवार हाकर एक गाव स दूसरे गाव जा रहे थे। सध्या का समय निकट था गाव दूर था। इसी बीच ऊट वाहक राजपूत को तमाखू की तलब लगी। सयाग-वश पास म तम्वाकू नहीं था अत सुस्त हाकर धीर-धीर ऊट का हाक रहा था। भीखणजी न कहा— "ठाकर साहब! थोडी तेजी कीजिए ताकि हम सुरक्षित रूप स अपनी मजिल पर पहुच जाए।" ठाकरसाहव न अपनी विवशता बताते हुए कहा— "कुछ भी कह मेर से तो तमाखू के बिना आगे नहीं चला जाता।" भीखणजी न स्थिति को भाप लिया। चतुराई से काम लेते हुए उन्हाने कहा— "आप आगे चलते रहिए। मैं कहीं स आपक लिए तमाखू की व्यवस्था करता हू।" ऐस कह उन्हान ठाकर साहब को आगे कर दिया और स्वय पीछे रह गए। पीछे उन्हाने एक कडा लिया और उसका बारीक पीसकर एक पुडिया मे बाध लिया और आगे जाकर ठाकर साहब को दत हुए बोले— "अच्छी तमाखू ता नहीं मिली है ऐसी ही मिली है आप देखिए शायद काम चल जाए।" ठाकर साहब ने उसे सूघते हुए कहा— "काई बात नहीं काम चल जाएगा। और वे तेजी से आगे चल पडे।"

सचमुच भीखणजी न तरकीब स काम नहीं लिया हाता ता शायद वह रात उन्हे जगल मे ही व्यतीत करनी पडती। तरकीब स इसलिए कि नशे वाला बहुत बार नश का भ्रम पालता है। नशा करने वाले लोग किसी न किसी रूप म अपनी सच्चाइ का वच ही देते ह। मने दखा है वड-वडे त्यागी लोग भी छोटे स चाय क नशे की खातिर इतने नीच उतर आत ह जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसीलिए अच्छे और सच्च आदमी वे नहीं हा सकत जो नशा करते हैं अपितु व ही हो सकते है जा उसस मुक्त होते हैं। वास्तव म नशे की यह यात्रा तमाखू मे

ही होती है जो आगे बढती-बढती नशीली दवाइया की मजिल तक पहुच जाती है। आज दुनिया मे इसका जो भयकर जाल फैल गया है, वह वास्तव म सारी व्यवस्थाआ के लिए एक चुनौती बन गया है।

और फिर नशे से प्राप्त होने वाला आनद तो सच्चा हो ही नहीं सकता। एक बार ऐसा लग सकता है कि नशे से आदमी का स्फूर्ति प्राप्त हाती है, पर वास्तव म वह स्फूर्ति उससे कई गुणा अधिक सुस्ती लेकर मनुष्य पर उतरती है। अवश्य ही घोडे को चाबुक मारकर एक बाल चलाया जा सकता है, पर धीरे-धीरे वह उसका अभ्यस्त हा जाता है कि फिर तेज मार की भी परवाह नहीं करता। जहा तक तमाखू का सवाल है प्रारम्भ म यह बडी बात नहा लगती थी। पर इस पर जा अनुसधान हुआ है वह बताता है कि इसस कैंसर जैसी जानलवा बीमारिया हो जाती हैं। अमरीका की नागरिक स्वास्थ्य सेवा क एक वरिष्ठ चिकित्सक डॉ सी एवरएट कूप ने अपनी वार्षिक रिपार्ट म कहा है— अमरीका म केवल धूमपान स प्रतिवर्ष ३००००० स ज्याद लोगो की मृत्यु होती है। धूम्रपान के इन भयावह दुष्परिणामा को दखते हुए अमरीका म लाखा लोगा ने धूम्रपान छोड दिया है। वहा १९७६ म ७७ प्रतिशत लोग धूम्रपान करत थे जो घटकर १९८४ म केवल ३९ प्रतिशत रह गय। बल्कि वहा की स्वास्थ्य-परिषद् ने तो सार्वजनिक स्थला स्कूल-कॉलजा पार्कों रेस्तराआ वाचनालयो आदि मे धूम्रपान करने पर पाबन्दी भी लगा दी है। आवश्यकता तो इस बात की है कि धूम्रपान के विरोद म एक सशक्त वातावरण बनाया जाये पर आज तो उल्टा हो रहा है। व्यापारी स लेकर नगरपालिकाए तथा सरकार भी अर्थ के लालच मे आकर इसका ज्यादा से ज्यादा विज्ञापन कर रही है। दुनिया म सिगरेट क विज्ञापनो पर ही होने वाले खर्च विश्व स्वास्थ्य सगठन के बजट से भी ज्यादा है। जगह-जगह यह विज्ञापन देखन का मिलेगा— "ह न चारमीनार पीने वाला की बात ही कुछ और ह।" यह सही ह कि अनेक लोग तमाखू पीते हैं। उनको लुभाने के लिए ऐसे विज्ञापन अपी एक भूमिका निभाते हैं पर जहा तक मानवीय-सवेदना का प्रश्न है इस तरीके को उचित नहीं कहा जा सकता। बडे लाग तो इससे आकर्षित होते ही हैं छोटे बच्च भी ऐस विज्ञापना से बडप्पन की एक कल्पना अपने मन म बसा लेत हैं और फिर उनकी जीवन-यात्रा का बहाव उसी आर मुड जाता है। हो सकता है प्रारम्भ मे व अधजले सिगरट के टुकडो से अपनी ख्वाहिश पूर करते हा पर अतत यही काफिला नशीली दवाइयो के दरवाजे पर पहुचता है। इससे राष्ट्र की आर्थिक हानि तो हाती है पर सबसे बडा हाता है चरित्र का पतन। पता नहीं कब यह सूरज उगेगा जब आदमी इस महामारी के चगुल स मुक्त होगा।

आरक्षण रोग की आंतरिक चिकित्सा

समस्याए शाश्वत हैं और समाधान भी शाश्वत हैं। पर कठिनाई यह है कि अक्सर उन्हं सामयिक समझ समाधान भी सामयिक हा खाजे जाते ह। ऐलापथिक दवाआ की तरह एक बार तो उनस समस्याए दब जाती है, पर प्रतिक्रियास्वरूप पे दूसर रूप मे फिर उभ जाती ह। फिर दवा की जाती है फिर पनिक्रिया पैदा होता है और यह परम्परा सतत चलती रहती है।

समस्याए आत्मगत

असल म दखा जाए तो समस्याए आत्मगत हैं। हम उनकी चिकित्सा भातिक रूप म करते हें। इसीलिए वे मिट-मिट कर फिर खडी हो जाती ह। पूरा भारत आरक्षण की समस्या से जूझ रहा ह। कहने को यह पिछडे लोगा को आग आने का अवसर प्रदान करन की बात है पर कौन नहीं जानता हे कि इसकी पृष्ठभूमि म चुनावी राजनीति काम कर रही हे। यदि सही तरीक से पिछडा को आग लाने का प्रयत्न हाता तो शायद उसकी इतनी भयकर प्रतिक्रिया नहीं हाती। एक आर से जब स्वार्थ खडा हाता है तो दूसरी आर से उसका प्रतिरोध भी खडा हा जाता है। एक ओर म जब वाट बटारने क लिए इसे हथियार बनाया जाता है ता दूसरी आर स सत्ताच्युत करने के लिए भी प्रयास शुरू हा जात हैं।

वास्तव म ता गाधीजी ने इस समस्या का सही समाधान ढूढा था। उन्हाने पिछड लागा का ऊपर उठाने के लिए स्वय पिछडपन का अपन ऊपर आढा था। उन्हान न कवल गरीबी का ही अपनाया था पर गदी बस्तिया म रहकर हरिजना आदि पिछड वर्गों म एक नया विश्वास जगाया था। गाधीजी से पहल भगवान् महावीर आर बुद्ध न भी एसा ही किया था। उन्हाने भी गरीबा की चेतना का जगा क लिए न कवल अपन राज्य-वभव का ही ठुकरा दिया था अपितु उनकी बस्तिया म भी जाकर ठहरत थ। उस जाति-वर्ग क लागा क साथ जाकर उन्हान यह साबित कर दिया था कि मनुष्य-मनुष्य क बीच घृणा की दीवार खींचना मानवता का अपमान है। गाधीजी न भी उसी इतिहास का दोहराया था। आज का हमारा राज-

वर्ग पिछडे लोगो क साथ सहानुभूति तो दर्शाता है उनक लिए आरक्षण की भी व्यवस्था करता है पर ऐसा कौन नता ह जा स्वय उनके साथ जीने के लिए तेयार होता है। स्वय ता वह अपन आपको आभिजात्य की तरह उनसे दूर रखता है केवल दूसरा को उनसे प्रेम करने की बात सिखाता हे।

पिछडे लोग कैसे आगे आए

पिछडे लागा को आगे लाना एक मानवीय दृष्टि है। शायद इसके साथ किसी का विरोध भी नहीं हा सकता। पर उसक लिए आरक्षण की बात करना भी समस्या का सही समाधान नहीं है। क्याकि आरक्षण की ओट मे एक ओर ता स्वार्थी तत्त्व उसका फायदा उठात हैं दूसरी ओर अपन आपका पिछडा मानकर मानकर वह वर्ग भी हमशा पिछडा ही रह जाता है। भल ही तात्कालिक रूप म कुछ फायदा दिखाई देता हो पर गहराई म दखा जाए तो वह समस्या का सटीक समाधान नही है। जो थाड लाग इससे आग आते है व भी अपने पिछडे भाइयो के प्रति कितन हमदर्द रहते हैं यह भी नहीं कहा जा सकता।

पिछडे लोगा का हमदद बनना बुरा नहीं है। वास्तव मे यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण कदम है। पर जब हमदर्दी केवल वाचिक हा या उसकी आच मे अपनी खिचडी पकाने की तजवीज की जा रही हो तो निश्चय ही सुधार का लक्ष्य स्वय ही पिछड जाता हे। उसकी प्रतिक्रिया असभाविनी नहीं हे। इसका यह मतलब नहीं है कि प्रतिक्रिया अच्छी हे। प्रतिक्रिया भी समस्या का सही समाधान नहीं बन सकती। वह भी अपने आपमे किसी स्वार्थ के खूटे से बधी हुई होती है। प्रतिक्रिया की आग को भडकाना महज हे उसे समेटना बडा मुश्किल है। बिना ही मतलब उसम कुछ निरपराध व्यक्तिया का सर्वस्व होम हो जाता है।

आज यह सोचने का मौका हे कि इस समस्या का सही समाधान क्या हो? फिर यदि सामयिक समाधान ही सोचा गया तो वह भी पार नहीं पडेगा। हो सकता है परिस्थिति-वश कुछ सामयिक विकल्प भी सोचे जाए, पर यदि लक्ष्म मे शाश्वत समाधान की बात नहीं रही तो सामयिक समाधान फिर किसी न किसी रूप म आग को भडका सकता है।

हीनभाव-अहभाव मिटे

इसम तो कोई सदह नहीं कि यह बीमारी बहुत गहरी है। शरीर म उभरने पर भी हर बीमारी की जड आत्मा म होती हे। अत उसे केवल मलहम लगाकर नहीं मिटाया जा सकता। उसे मिटाने के लिए ता जडमूल स समाधान सोचना होगा।

वह स्थायी समाधान तो आयुर्वेदिक औषधि की तरह पूरे शरीर-तत्र का परिष्कृत करना ही हो सकता है। कवल शरीर-तत्र ही नहीं अपितु आत्मा का भी पवित्र बनाना हागा। जब तक समाज म हीन भाव या अह-भाव रहगा तब तक इस समस्या का हल नहीं निकल सकता। आवश्यकता इस बात की है कि पिछड लाग अपने हीनभाव का छोड तथा उच्च लाग अपन अहभाव का छोड। बल्कि पिछड वर्ग को उठाने क लिए उच्च वर्ग को स्वय पर पिछडेपन का ओढना होगा। यह स्वीकृति किसी भी प्रकार के दबाव से सभव नहीं हा सकती। यह तो स्वय-स्वीकृत हागी तब ही काम चलगा। जरूरत ता यह हे कि सभी लाग इस दिशा म अपने चरण उठाय पर उन लागा क लिए ता यह अत्यन्त जरूरी हैं हा जा इस दिशा म काम करने चाहते हैं अन्यथा पक्ष या विपक्ष म आदालन करना कवल छलावा है दिखावा हे।

नया सोच आवश्यक

आरक्षण आज एक हावा बन गया है। हा सकता है कुछ लागा को उसे प्रभावशाली बनाने का यह समय अनुकूल न लगा हा पर इस बात का ता कोई भी समर्थन नहीं कर सकता कि पिछडे लोगा को आगे नहीं लाना चाहिए। हर समझदार आदमी यह तो चाहता है कि पिछड लोगा को भी आग आने का अवसर मिलना चाहिए। यद्यपि सविधान मे इस बात की व्यवस्था हे कि निचल से निचला आदमी भी ऊपर से ऊपर तक जा सकता है बल्कि आरक्षण की भी व्यवस्था है। पर जहा तक ऐसे लोगो का सवाल है जा युग-युग से पीढी-दर-पीढी अधेरे गर्त म गडे हुए हैं उन तक प्रकाश की किरण कैसे पहुचे? इसम काई भी सदेह नहीं है कि सामती ओर उच्चतावादी मनोवृत्ति ने अपने सरक्षण के लिए कुछ लोगो का एसे गर्त मे धकेले रखा है जहा से प्रकाश देख पाना ही असभव है। लाखा ऐस लोग हैं जो पीढिया से मैला ढो रहे हैं। कुछ लोग चाहते ह कि उनकी पीढिया फिर हमारी पीढियो का मैला अपने सिर पर ढोती रह। क्या यह मानवता का दर्शन है?

इसमे काई शक नहीं हे कि अपन भाग्य का निर्माता आदमी स्वय हाता है। अपने शुभ आर अशुभ के लिए वह स्वय ही जिम्मेवार है। पर हर जिम्मेदारी का समझन क लिए परिस्थितियो की अनुकूलता और प्रतिकूलता की भी उपक्षा नहीं की जा सकती। बीज म असीम सामर्थ्य हान के बावजूद उसे उगने के लिए उवरा की अपेक्षा रहती है। इसीलिए पिछडे लागा के पिछड रहने म उनकी अपनी योग्यता का भाग तो रहा ही है पर अहवादी व्यवस्थाआ न भी अपन सरक्षण के लिए उन्ह दबाए रखने म कोई कमी नहीं रखी। यही कारण हे कि युगा-युगा तक वे पद-

दलित बने रहे हैं।

भारत म स्वतत्रता का सूरज उगा। सामतवादी व्यवस्था का अत हुआ और दलिता को भी ऊपर उठने का अधिकार मिला। पर असल म भारत की स्वतत्रता भी अभी तक सामतवादी मनोवृत्ति से मुक्त कहा हुई है? यही कारण है कि आजादी की अर्धशती बीत जाने के बावजूद दलित लोगा के घर स्वतत्रता का चिराग नहीं जला। यद्यपि उनका भी यह दाप है कि वे उस अवसर का उपयोग नहीं कर सके, पर इसमे भी कोई सदेह नहीं है कि कुछ लाग अपनी सुख-सुविधाओ के लिए हमेशा उनका उपयाग करते रहे। इसीलिए जब आरक्षण की बात सामने आती है ता उनक स्वार्थ फुफकार उठत हैं और राष्ट्र म ऐसी अराजकता का प्रदर्शन होन लगता है जिस देखकर अच्छे-अच्छे आदमियो की अक्ल गुम हो जाती है।

काशल का विकास कैसे हो?

तर्क दिया जाता है कि इससे अकौशल आगे आ जाएगा और कौशल आरक्षण के बाझ क नीचे दब जाएगा। पर सवाल ता यही हे कि क्या कौशल स्वय कभी अकाशल को ऊपर आने देगा? उसके पास बहुत सारे चिकने तर्क हैं। आज तक वह उसे दबात ही आया है भविष्य म भी भला वह उसे क्या ऊपर आन दगा? ऐसी स्थिति म क्या दलिता के भाग्य म यही लिखा है कि वे पीढी दर पीढी दलित ही बने रह? असल म इस प्रश्न पर बहुत गहराई से साचने की जरूरत हे। अच्छे लाग व नहीं हो सकत जो अपने स्वार्थ के लिए दूसरा को मोहरा बनाने रह अपितु व लाग हाते हैं जा दूसरा के उत्थान क लिए अपने हिता का भी उत्सर्ग कर सक। हा सकता है इस क्रम म एक बार अकौशल के परिणाम भी देश को भोगने पड। पर क्या व इतने भयानक होगे जा आज तक उस दबाए रखने से पैदा होत रहे हैं या भविष्य म भी उसे दबाए रखने पर उभर पडेगे? समझदारी का तकाजा यही है कि इस रास्ता दिया जाए। एक भूल को दबान के लिए दूसरी उससे भी बडी भूल की जाए, यह समझदारी की बात नहीं है। जिन किन्हीं राष्ट्रो ने विकास किया है उसम उनकी प्रजा की परिपूर्ण भागीदारी रही है। जो लाग अपन ही कराडा-करोड देशवासिया को दबाए रखना चाहते ह उन्हे राष्ट्र-भक्त कैसे कहा जा सकता हे? क्या कौसल क नाम पर आज तक कुछ लोगा-जातिया न ऐसे बर्बर नाटक नहीं रचे हे जिनके कारण पिछडे लाग ओर पिछडत चले गए? आज जबकि राष्ट्र म यह सम्यग् विचार जागा है तो सुलाने के लिए किसी प्रकार शामक दवाई नहीं दो जानी चाहिए। बल्कि अब तो शायद स्थिति भी यही बन गई हे कि अधिकार का बहुत समय तक दबाकर नहीं रखा जा सकेगा। जनतत्र की वोट की मान्यता न जिस

व्यवस्था का जन्म दिया हे वह अव उभरे बिना नहीं रह सकती। हा सकता हे एक वार जिन लागा के स्वार्थ पर ठेस लगती हैं वहा थोडी हलचल पैदा हो पर अब वहुमत की आवाज को राका जाना सभव नहीं है।

दुनिया म कौशल आर अकौशल हमेशा रहता आया है। वह भविष्य मे नहीं रहेगा ऐसा नहीं कहा जा सकता पर उसकी मात्रा म ता अन्तर सभव है ही। वही व्यवस्था सही कही जाएगी जो कौशल प्रदान करे तथा जाति धर्म लिग रग के भेदभाव की पर्तो को छेदकर मानवीय चेतना को प्रकाश से भरने मे अपना सहयोग प्रदान कर सके। वास्तव म भेदभाव को आरक्षण से नहीं मिटाया जा सकता। सविधान बनाकर भी नहीं मिटाया जा सकता। उसे तो तभी मिटाया जा सकगा जबकि आदमी के हृदय म मानवता का सूरज उगेगा। अपेक्षा है वह सूरज उगे और आदमी के हृदय का अधेरा दूर हा। कह अकौशल को कौशलता प्रदान कर। पिछडे लाग भी आरक्षण की चादर ओढकर आगे नहीं आ सकगे। इस दृष्टि से पूरे राष्ट्र म एक चेतना जागृत होनी चाहिए। सवमे परस्परता की भावना का उदय हाना चाहिए। ऐसा होगा तभी आरक्षण सफल बनेगा। ऐसा नहीं होगा तो आरक्षण आकर भी किसी का भला नहीं कर सकगा।

सदर्भ राष्ट्रीय एकता का

भारत एक विविधता भरा राष्ट्र है। भाषा-जाति प्रदश तथा सम्प्रदायो की विविधताओ क बीच भी इसकी अपनी एक राष्ट्रीयता है। धर्म-निरपेक्षता इसकी अपनी विशष पहचान है। यह निरपेक्षता इस दश पर किसी न लादी नहीं है अपितु यहा क नागरिको ने स्वय स्वीकार की है। स्वाभाविक तो यही था कि यहा का बहुमत अपन आपको हिन्दू राष्ट्र घोषित करता। पाकिस्तान जब अपने आपको इस्लाम राष्ट्र घोषित कर सकता था तो भारत भी अपने आपको हिन्दू राष्ट्र क्या नहीं कर सकता था? पर यहा के नागरिको ने उदारता दिखाई। धर्म-सम्प्रदायो को गौण कर धर्म-निरपेक्षता को स्वीकार किया। यह बात कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। पाकिस्तान के लोग इतनी उदारता नहीं दिखा सक। अपनी कट्टरपथिता क कारण उन्होन पूरे राष्ट्र को इस्लाम राष्ट्र घोषित कर दिया। स्वाभाविक हे इस्लाम राष्ट्र घोषित होन के बाद वहा मुसलमानो को तरजीह मिली। वह मिलती भी। पर भारत म ऐसा नहीं हुआ। यहा हिन्दुओ को नहीं मुसलमानो को तरजीह दी गई। हमशा ही उदारतावादी लोग रहे हैं। उन्होने अपनी सीमाओ के विस्तार के लिए विदेशो से कभी लडाई नहीं लडी। अपन विचार को भी इन्होंने कभी तलवार क बल पर नहीं फैलाया। पूरे पूर्वी एशिया मे भारत का बौद्ध धर्म समादृत हुआ इससे पूर्व मध्यपूर्व मे भी जैन धर्म का प्रचुर प्रचार हुआ था पर इसके लिए कोई लडाई नहीं लडी गई। अपनी आध्यात्मिक गरिमा क कारण ही वह अनेक राष्ट्रो द्वारा स्वीकृत-समादृत हुआ। बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म न वहा की सत्ता को भारतीय हाथो मे देने की चेष्टा नहीं की। असल म धर्म और राज्य दो अलग-अलग मुद्दे हैं। जब भी इन दोनो को मिलाने की कोशिश होती हे तो कट्टरता का जन्म होता है। उसके परिणाम राष्ट्रीयता के हित म नहीं होत। भारत ने उसी परम्परा को अक्षुण्ण रखते हुए स्वतत्रता प्राप्ति के बाद धर्म-निरपेक्षता को स्वीकार किया।

राष्ट्रहित प्रमुख

कोई राष्ट्र कितना ही धर्म-निरपेक्ष क्या न हो जाए पर वह अपने राष्ट्रीय हितो मे विमुख नहीं हो सकता। धर्म-निरपेक्षता का सकल्प सीधे राष्ट्र-व्यवस्था से जुडा हुआ हो इस दृष्टि से भारत की धर्म-निरपेक्षता के सामने कुछ ऐसे यक्ष-प्रश्न खडे हैं जो इसकी राष्ट्रीय एकता के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण बन गए हैं। अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी ने बिलकुल सही कहा है कि राष्ट्रीय एकता तब हो सकती है जब आदमी मे राष्ट्रीयता हो। भला जब राष्ट्रीयता ही नहीं होगा तो राष्ट्रीय एकता का तो सवाल ही खडा नहीं हो सकेगा। कावेरी नदी के पानी के उपयोग को लेकर यदि कर्णाटक और तमिलनाडु मे हिंसा भडकती है तो उसे राष्ट्रीयता नहीं कहा जा सकता। चडीगढ के उपयोग को लेकर यदि लाठिया और कृपाणे चमकती हैं तो उसे राष्ट्रीयता नहीं कहा जा सकता। असल मे राष्ट्रीयता तो एक अखण्ड अनुभूति है। जब वह टुकडा-टुकडा मे बिखर जाती है तो उसे राष्ट्रीयता कैसे कहा जा सकता है? कश्मीर मे यदि पाकिस्तानी झडा फहराया जाता है तो उसे राष्ट्रीयता कैसे कहा जा सकता है?

कश्मीर क्यो सुलग रहा है?

भारत के सविधान मे कश्मीर को जो विशेष दर्जा दिया गया था वह उसे राष्ट्र के साथ जोडे रखने के लिए दिया गया था। पर यदि कुछ कट्टरपथी तत्त्व उसे राष्ट्र से तोडने के आमादा हो रहे हैं तो उन विशेष धाराओ का क्या उपयोग रह जाता है? आश्चर्य तो यह है कि राजनीति की आच मे अपने वोटो की रोटी सेकने वाले तत्त्व तथा क्षुद्र सम्प्रदायवादी तत्त्व इस सारे हालात को समझने की कोशिश ही नहीं कर रहे हैं। यही सही है कि धर्म-निरपेक्षता भारत की स्वीकृति नीति है पर इसके लिए पैमाना को बदल-बदल कर क्या देखा जा रहा है? कट्टरपथी लोग भारत मे फिर एक पाकिस्तान क्या खोज रहे है? जनसख्या को भी इसका मुद्दा क्या बनाया जा रहा है? क्या यह राष्ट्रीय एकता है?

जनसख्या पर काबू पाना होगा

जनसख्या-प्रदूषण का विस्फोट आज पूरे विश्व की समस्या है। लेकिन भारत राष्ट्र की तो वह प्रबल समस्या है। जनसख्या के इस विस्फोट से प्राकृतिक ससाधनो पर भीषण दुष्प्रभाव हो रहा है। यही कारण है कि शुद्ध पानी बिजली आवास और यहा तक कि खाद्य पदार्थो की समस्या भी सुरसा का मुह बनाकर सामने खडी है।

इसके मुह मे जो कुछ डाला जाता है वह स्वाहा हो जाता है। आवासीय आपूर्ति के लिए कृषि योग्य भूमि निरन्तर छीजती जा रही है। सारी विकास योजनाए बिखरती जा रही हैं। यह कृत्य कितना नुकसानदेह है इसकी कल्पना तो सामने है, पर वोट की राजनीति के पैर आगे नहीं उठ रहे है। धार्मिक स्वतत्रता की ओट भी इसका मुख्य कारण चन रही है। भला जब परिवारो को सीमित करने की बात सबके सामने है तो एक आदमी का चार-चार शादिया करने का अधिकार केसे दिया जा सकता है? धर्म-निरपेक्ष राष्ट्र म इस प्रकार की राष्ट्र विघातक प्रवृत्तिया को कानून का सरक्षण देना तो ओर भी आश्चर्यजनक है। यह राष्ट्रीय एकता के लिए बहुत बडा खतरा है। सीमित परिवार दश की बहुमुखी विकास-प्रक्रिया का अनिवार्य अग है। यह साच बहुत पहले हो उभर जाना चाहिए था पर राष्ट्र-निर्माताआ को पहले इसका अहसास नहीं हो सका। आश्चर्य ता यह है कि लोग अब भी नहीं सम्भल रए हैं और समानता पर आधारित कोई कार्यक्रम तय नहीं कर रहे हैं। इसमे कोई शक नहीं है कि देश न अनेक बार ऐस अनेक निर्णय लिय है जब नागरिका को यह बहुत अधिक मानसिक परेसानी हुई है पर फिर भो उन्ह समय पर क्रियान्वित किया गया। व्यक्तिया और जातिया क तुष्टीकरण के लिए नीतिया का बदलना खतरनाक है।

राजनीति मूल्यपरक बने

धर्म-निरपेक्षता का सीधा सम्बन्ध धर्म-सप्रदाया स हे। इसीलिए तो इसका नाम ही धर्म-निरपेक्षता रखा गया है। यह ठीक है कि धर्म तो एक आर अखड ह। वह किसी को लडाता नहीं अपितु प्रेम करना सिखाता है। अत धर्म क स्थान पर सम्प्रदाय शब्द का प्रयाग करे ता और भी उत्तम होगा। पर यह सब समझन की बात है। सम्प्रदाय भी यदि सीमा में रहे तो कोई हर्ज नहीं है। जब भी सम्प्रदाया म कट्टरता पैदा होती है तो सतुलन बिगडता है। इसमे उत्तर और दक्षिण का सवाल नहीं हे। जब कट्टरता जागती है तो दक्षिण मे लडने के लिए उत्तर तैयार हा जाता है उत्तर स लडने दक्षिण तैयार हा जाता है। पर यह बात यहीं तक नहीं रहती है। कट्टरता जब जागती है तो उत्तर-उत्तर से लडने के लिए तैयार हो जाता हे तथा दक्षिण-दक्षिण से लडने के लिए तैयार हो जाता है। भाई-भाई स लडने के लिए तयार हा जाता हे। मत की बात बहुत सूक्ष्म है। थाडी-थाडी बाता पर झगडा हा जाता है। इसीलिए ता राजनीति इतनी ईमानदार है जा अपना मुख अपने दर्पण म दख सक? आज भी राष्ट्र म यदि राष्ट्रीय-एकता का खतरा है तो राजनीति का आर से ही ज्यादा हे। राजनेताआ के जैसे तवर हर दिन दखने का मिलते है वह आश्चर्य की बात है।

कभी वे किसी धर्मगुरु के तलवे चाटत हैं ता कभी किसी अन्य धर्म गुरु क मक्खन लगान से बाज नहीं आत। आज जिसका विरोध करते हैं कल उसका समर्थन करने म भी उन्ह झिझक नहीं आती। आवश्यकता है राजनीति को स्वच्छ और मूल्यपरक बनाया जाए। धम स भी यही अपेक्षा है, पर राजनीति स ज्यादा है। वह यदि मूल्यपरक तथा सिद्धातवादी बन जाए तो राष्ट्रीय एकता को साकार करने म ज्यादा परिश्रम नहीं करना पडेगा।

शिक्षा-क्षेत्र और अणुव्रत

राष्ट्र आज समस्याओ के जिस चक्रावात म फस गया है उसस मुक्ति बडी कठिन प्रतात हा रही है। सभी वर्ग इसकी चपट म हैं। ऐस गहन निराशा के समय म अणुव्रत न नतिक जागरण क रूप म आशा की एक किरण दिखाई है। पर इसक सामन भी सवाल यही ह कि जागरण क इस अभियान का कहा से शुरू किया जाए? पूरा राष्ट्र एक-दूसरे स इस तरह स जुडा हुआ है कि किसी वर्ग को अलग करक नहीं दखा जा सकता। इसीलिए अणुव्रत न एक व्यापक आचार-संहिता प्रस्तुत की है। फिर भी अणुव्रत अनुशास्ता का यह दृढ अभिमत रहा कि नैतिक क्राति का पुरस्कता-पुराधा यदि कोई वर्ग बन सकता है ता शिक्षक वर्ग ही बन सकता है। एक आर वह जहा बुद्धि का प्रतिनिधि है वहा दूसरी आर छात्र तथा उनके माध्यम से अभिभावका म भी उसका जीवन्त सम्पर्क रहता है। शहरा-नगरा से लेकर गाव-ढाणिया तक उसकी पहुच है।

पहला राष्ट्रीय अधिवेशन

इसी दृष्टि से पिछली साल अणुव्रत-वर्ष के अन्तर्गत शिक्षका मे इस अभियान को विशेष रूप से चलाया गया। अणुव्रत शिक्षक ससद के रूप म इसका एक प्रारूप भी सामन आया। उत्तर से लेकर दक्षिण तक तथा पूर्व से लेकर पश्चिम तक पूरे राष्ट्र म अध्यापका का एक समूह सामने आया। राणावास म शिक्षका का एक राष्ट्रीय अधिवेशन बुलाया गया। उस समय ८०००शिक्षका के ३५० प्रतिनिधि शामिल थे। सभी लागा के सहयाग से एक गहन कार्य शुरू किया गया। इसी का परिणाम था कि अगले वर्ष लाडनू म ५० ००० शिक्षका के ५०० प्रतिनिधियो ने द्वितीय राष्ट्रीय अधिवशन म भाग लिया। यह सही हा कि केवल सदस्य बना लेना ही पर्याप्त नहीं है। पर यह भी सही है कि इस सदस्यता अभियान मे हजारा-लाखा छात्रा-शिक्षका से सम्पर्क स्थापित हुआ। द्वितीय अधिवशन म इस बात पर गहराई स विचार करना है कि इस सेना की ऊर्जा का नियाजित उपयोग क्या हो?

अणुव्रत की सदस्यता रूपये-पैसे स नहा जुडी हुई है। निश्चित रूप से यह

एक आचार-सहिता से जुडी हुई है। जो भी शिक्षक इसका सदस्य बनाता है उसे शिक्षक आचार-सहिता का पालन करना आवश्यक होता है। किसी पर यह दवाव भी नहीं दिया जाता कि उस सदस्यता ग्रहण करनी ही होगी। हर आदमी स्वेच्छा से ही इसका सदस्य बनता है। फिर भी इस बात से इकार नहीं किया जा सकता है कि केवल व्रत ल लेना ही पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता है जो लोग सदस्य बने हैं उन्ह एक रचनात्मक कार्यक्रम से जोडा जाए।

नव-निर्माण मे शिक्षक आगे आए

कुछ शिक्षका ने अपने उज्ज्वल चरित्र से एक गौरवशाली इतिहास का निर्माण किया है। आज भी ऐसे शिक्षका की कमी नहीं हैं। ऐसे लोगा की भी कमी नहीं है जिनके कारण शिक्षा-जगत बदनाम हुआ है व्यावसायिकता ता आज पूरे जीवन पर हावी है। ऐसी स्थिति म आत्म-प्रबोध से भावित होकर शिक्षक-ससद ने यह सकल्प व्यक्त किया है कि वह शिक्षा म गुणात्मक-परिवर्तन क लिए प्रयास करेगी। अधिकारा के लिए लडते है। शिक्षको के अपने अनेकानेक यूनियन भी हो सकते हैं। व सरकार का भी हिला सकते हैं। पर शिक्षक-ससद कर्तव्य को उर्जस्वित करने मे विश्वास करती है यही इसकी विशेषता हैं। अक्सर कहा जाता है—छात्र दिशाहीन हैं आस्थाहीन हैं, उच्छृखल हैं। पर अभी जब २१ २२ २३ फरवरी ९२ को जैन विश्व भारती मान्य विश्वविद्यालय द्वारा महाविद्यालयो के छात्रो का त्रिदिवसीय अहिंसा प्रशिक्षण शिविर लगाया गया तो लगा उपरोक्त कथन पर थोडा चिंतन करना जरूरी है। यह सही है कि आज हमारे पूरे राष्ट्रीय स्वभाव म जा गतिहीनता तथा हताशा व्याप गई है उससे छात्र भी वचित नहीं है। पर इस शिविर मे जैसा उत्फुल्ल वातावरण और उत्साह नजर आया। उससे लगा कि छात्रा की दृष्टि से इस पूरे सदर्भ पर विचार करना जरूरी है।

शिविर म विभिन्न विश्वविद्यालयो तथा महाविद्यालयो के लगभग १२६ छात्रा न भाग लिया। गाधी दर्शन के प्रमुख जी के राधाकृष्णन इस शिविर क मूल कह जा सकते हैं। और भी अनेक लाग थे। पर जैन विश्व भारती ने जिस तत्परता तथा तन्मयता से इसे सफल बनाने म अपना योगदान दिया उसे स्पष्ट अनुभव किया जा सकता था। निश्चय ही यह सब आचार्यश्री तुलसी तथा युवाचार्यश्री महाप्रज्ञजी के दूरदर्शिनी दृष्टि का ही परिणाम था कि न केवल प्राध्यापक कार्यकर्त्ता इस कार्य को महत्त्वपूर्ण मानकर तन्मयता से जुडे हुए थे अपितु साधु-साध्विया की टोलिया भी सतत आशा ओर उत्साह का सचार कर रही थीं।

एसा लगा कि वास्तविक कमा छात्रा म नहीं है अपितु उन्हे प्रेरणा देने वाला

की है। अणुव्रत के अन्तर्गत निरतर इस सदर्भ मे ईमानदारी से सोचा जाता रहा है। राजसमन्द मे अहिंसक-प्रशिक्षण के बारे म एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन इस ईमानदारी का पहला सबूत था। फिर भी निरतर इस सदर्भ म चितन चलता रहा। यही कारण था जब इस छात्र-शिविर का प्रस्ताव सामने आया तो तत्काल उसे स्वीकार कर लिया गया।

यह सही है कि महात्मा गाधी ने अहिसा की दृष्टि से देश म एक आशाजनक वातावरण बनाया था। विनोबाजी ने उस प्रक्रिया को निरतरित रखन का प्रयास किया। पर उनकी अनुपस्थिति म इस प्रसग मे यदि कहीं दृष्टि ठहरती है ता आचार्य तुलसी पर ठहरती है। आपने अहिसा को शास्त्रा-सम्प्रदाया के घेरे से बाहर निकालकर प्रयोग-प्रतिष्ठित किया है। यही कारण है कि गाधीवादी कायकर्त्ता भी आज अणुव्रत के अधिक नजदीक आत जा रहे हैं। गाधीवादी कार्यकर्त्ता भी आज अणुव्रत के अधिक नजदीक आते जा रहे हैं। गाधी-दर्शन और जैव विश्व भारती की सहभागिता इस शिविर की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानी जा सकती है। श्री राधाकृष्णन ने इस शिविर को तीनो दिन अपना सदेह-साक्ष्य देते हुए यह स्पष्ट अनुभव अभिव्यक्त किया कि ऐसे शिविर बिरले ही होते हैं। ज्यादातर शिविर तो आर्थिक स्रोता का दोहन करने मे ही अपनी कृतार्थता का अनुभव करते हैं। कहीं यदि ईमानदारी से कार्य होता भी है तो वह बौद्धिक स्तर से ऊपर नहीं उठता। अणुव्रत ने अहिसा के विचार को भावनात्मक स्तर पर प्रतिष्ठित करन का जो प्रयास किया है वह एक रचनात्मक आयाम का उद्‌घाटन करता है। इसलिए जैन विश्व भारती के अन्तर्गत इस शिविर परम्परा को एक स्थाई कन्द्र के रूप मे परिवर्तित करने पर विचार चल रहा है। वास्तव मे अहिसा बौद्धिक व्यायाम हे भी नहीं। वह भावनात्मक परिवर्तन का ही एक सचेतन प्रयोग है। बुद्धि भी आदमी को प्रभावित करती है पर वह बहुत गहरे तक नहीं जाती। भावना मनुष्य के अन्तस्तल तक पहुचती है। इसलिए इस शिविर मे प्रेक्षा-ध्यान या जीवन-विज्ञान के जो प्रयोग करवाए गए उनका गहरा प्रभाव पडा। साधारणतया शिविरो म केवल भाषण हाते हैं। पर यह शिविर उस लकीर से हटकर प्रयोग-प्रतिष्ठित था। छात्रो न इसम पर भर भी बोरियत का अनुभव नहीं किया बल्कि कुछ लोग तो इतनी गहराई मे पहुच गए कि उन्होन पहली बार जीवन मे आत्मानन्द का अनुभव किया। इसलिए उन्हाने न कवल इस शिविर की अवधि बढाने का अनुरोध किया अपितु इस शृखला को आगे ले जाने मे अपना सहयोग व्यक्त किया।

विविध चर्चाआ के अन्तर्गत भी छात्रो ने अपनी आतरिक अभिरुचि का परिचय दिया। हर कार्यक्रम मे छात्रा की शतप्रतिशत उपस्थित इस बात का स्पष्ट

प्रमाण्य थी। कि वे सारे कार्यक्रम को अपने अन्दर उतार लन के लिए आतुर हैं। उन्होने न केवल आत्म-साक्ष्य से स्वय ही अणुव्रत पर चलन का सकल्प लिया अपितु अपने-अपने शिक्षा-सस्थाना म इसे मूर्त दने के एक व्रत-सकल्प भी ग्रहण किए।

यह है सही कि शिविर तीन दिन का था तथा उसने एक उत्साहशाल वातावरण का निर्माण किया। पर वास्तव म इतना ही पर्याप्त नहीं है। इस उत्साहशीलता को जीवित रखन के लिए भी सतत जागरूक रहने की जरूरत है। *उसके लिए एक नियाजित अभिक्रम की भी आवश्यकता है। जिस प्रकार अहिसा* क प्रशिक्षण क लिए अणुव्रत शिक्षक ससद का एक नियाजित तरीक स जाडन का प्रयत्न किया गया है उसी प्रकार अणुव्रत छात्र-ससद के रूप म क्या इस कडी को आगे नहीं बढाया जा सकता?

अहिसा क प्रशिक्षण का महत्त्व सदा रहा है। इस प्रशिक्षण की उपलब्धि को किसी बाहरी सख्या म नहीं दखा जा सकता। इसका परिणाम तो प्रशिक्षण दने वाले व्यक्ति का स्वय का ही मिलन वाला है। जो व्यक्ति इस प्रशिक्षण से गुजरता है उसका स्वय का जावन शातिमय आनन्दमय बनने वाला है। पर इसम भी कोई सदेह नहीं है कि एस व्यक्ति समाज और राष्ट्र के लिए भी कीमती बन सकते हैं। आज के युग म जबकि हिसा तीव्र बनती जा रही है आवश्यक है कि अहिंसा को भी उतना ही तीव्रतर बनाया जाए। जितने अहिसक व्यक्तित्व खड हाग समाज और राष्ट्र मे शाति उतनी ही गहरी बन सकेगी। इस दृष्टि स उक्त प्रशिक्षण शिविर को एक शुभ सकत शकुन मानना चाहिए तथा इसे विकसित करने क लिए ठास धरातल का भी निर्माण करना चाहिए।

अहिंसा-प्रशिक्षण बनाम अणुव्रत-प्रशिक्षण

१५ नवम्बर १९९१। रात्रि क ७ ३० बजे आचार्यश्री तुलमी के सान्निध्य म एक परिचर्चा प्रारम्भ हुई। विपय था अहिसा का प्रशिक्षण। युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ ने विपय-प्रवर्तन करत हुए कहा— "पिछली फरवरी म जब से राजससद के प्रशिक्षण के सन्दर्भ मे अन्तराष्ट्रीय सगोष्ठी सम्पन्न हुई है निरतर यह जिज्ञासा बलवती हाती जा रही है कि अहिसा के प्रशिक्षण का विधि क्या हो? अहिसा के स्वरूप और उसकी आवश्यकता पर दुनिया भर मे अनेक बडी-बडी कान्फ्रस हाती रही हैं, पर उनके प्रशिक्षण-पक्ष पर राजसमद मम्मेलन एक नयी शुरुआत थी। सयुक्त राष्ट्र-सघ तथा अनेक देशा और विश्वविद्यालया के दरवाजा तक इसकी दस्तक हुई है। वास्तव म विपय बहुत गम्भीर है पर उसकी आवश्यकता उससे भी ज्यादा गम्भीर है। अब अहिसा केवल उपदश का विषय नहीं रह गया अपितु एक जीवन सत्य बन गया है। इसीलिए उसकी प्रशिक्षण-विधि का स्पष्ट परिभापित करना अत्यन्त जरूरी है। हम अहिसा को किसी भी सम्प्रदाय के रग म नहीं रगना चाहत। हमार सामन एक व्यापक दृष्टिकाण होना चाहिए। हम न तो अहिसा की अति म जाए और न निराशा म हो। हम यह भी नहीं समझना चाहिए कि सारी दुनिया अहिसा म प्रशिक्षित हो जाएगी पर यदि हम इस दृष्टि से को विकल्प भी प्रस्तुत कर सके तो यह एक बहुत बडी बता होगी।

युवाचार्यश्री का वक्तव्य इतना साफ और स्टीक था कि तत्काल सामने बैठे प्रबुद्ध लोगा की प्रतिक्रिया सामने आने लगी। प्रश्न पर प्रश्न और विचार पर विचार सामन आने लगे। एक-एक कर इतने विचारणीय मुद्दे सामने उपस्थित हो गए कि सात दिना के गहन चिंतन-मनन के बाद एक स्पष्ट रूपरखा सामने आई। तदनुसार चार बातो पर विशेप महत्त्व दिया गया।

१ हृदय-परिर्वतन
२ दृष्टि-परिवर्तन
३ जीवन-शैला म परिवर्तन
४ व्यवस्था परिवर्तन

हृदय का साधारणतया अर्थ हर्ट Heart किया जाता है। पर प्रेक्षा-ध्यान की

भाषा मे हृदय-परिवर्तन का अर्थ है मस्तिष्क स्थित हृदय का परिवर्तन। यह एक भावात्मक परिवर्तन है। प्रेक्षा-ध्यान म इस विषय म काफी गहराई से विचार किया गया है। उसका पहला प्रयोग है— कायोत्सर्ग। कायोत्सर्ग से तनावा से मुक्ति हो जाती है। तनाव हिसा के प्रमुख घटक हैं। जब तनाव नि शेष हो जाते हैं ता हिसा भी नि शेष हो जाती है। फिर जो सस्कार शेष रह जात है उन्हे ध्यान तथा अनुप्रेक्षा के द्वारा मिटाया जा सकता है। ये सार प्रयोग हमारे शरीर म कुछ एसे रसायना का जन्म देते हैं जिससे हिसा के सस्कार मिट सकत हैं। वास्तव म अहिसा केवल शरीर की उपलब्धि नहीं है अत शरीर के ऊपर उठकर आत्म-सवेदना तक पहुचना ही उसका अभिप्रेत है। प्रक्षा-ध्यान के अन्तर्गत इसकी एक पूरी विधि न केवल सामन ही आ चुकी है अपितु उसके प्रयोग भी बहुत लाभप्रद रह हैं। इस विधि से किसी को यह उपदेश देने की आवश्यकता नहीं रहती कि हिसा मत करा अपितु सहज ही एक ऐसा रासायनिक उपक्रम उदित हो जाता है जिसस अपने आप आदमी के हृदय का परिवर्तन हो जाता है।

ब्रेन वाशिग मनाविज्ञान का ही एक रूप है। उसके द्वारा मनुष्य के मन का परिवर्तन सभव हे। अभय करुणा आदि सवगा को जगाने के लिए भी मनोविज्ञान अनुप्रक्षा का सहारा लिया जा सकता है। आत्मतुला का विचार भी हिसा की आच को मन्द करता है। जब आदमी म अद्वैत का भाव जाग जाता है तब हिसा अपने आप क्षीण हो जाती है। अपने लोगो के प्रति हर प्राणी म करुणा का भाव होता है। *आत्मौपम्य म जब कोई पराया रह ही नहीं जाता तो हिसा अपने आप झर जाती है।* साम्प्रदायिक हिसा को भी इस मनोभाव से मिटाया जा सकता है।

अहिसा के लिए यह भी आवश्यक है कि आदमी म सहिष्णुता का विकास हो। असहिष्णु आदमी कभी भी अहिसक नहीं बन सकता। मानसिक सहिष्णुता तो आवश्यक है ही पर अहिसा के विकास के लिए शारीरिक सहिष्णुता का विकास भी आवश्यक है। मनौवैज्ञानिक प्रयोगो के द्वारा आदमी को सहिष्णु बनाकर उसे अहिसा के पथ पर अग्रसर किया जा सकता हे।

दृष्टि-परिवर्तन क लिए अनेकात का प्रयाग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उसी से अनाग्रह सापेक्षता समन्वय सह-अस्तित्व की भावना का जागरण होता है।

अहिमक व्यक्ति के लिए सयम-प्रधान जीवन-शैली अत्यन्त आवश्यक है। सुख-सुविधाआ म जीन वाले व्यक्ति से अहिसक आचरण की अपेक्षा बहुत कठिन है। आज जो पर्यावरणीय असतुलन प्रकट हो रहा है उसके बीज भी सुविधाआ म ही निहित है।

इसीलिए सयम प्रधान जीवन-पद्धति अहिसक प्रशिक्षण की आवश्यक शर्त

है। भोग-प्रदान जीवन जहा दूसरो के लिए सिर-दर्द बन जाता है वहा वह अप
प्रति भी कम खतरनाक नहीं होता। इसी से अमीरी-गरीबी की खाई चौडी होती है
विलासिता की राह अहिसा की मजिल तक नहीं पहुच सकती।

इसमे कोई शक नहीं कि जीने के लिए विश्राम भी आवश्यक है। पर यह १
निश्चित है कि श्रम के बिना सारी व्यवस्था चौपट हो जाती है। इसीलिए अहि
के लिए श्रम एव सयम-प्रधान जीवन-शैली बहुत जरूरी है। इस दृष्टि से अणुव्र
की आचार सहिता एक प्रकाश दीप का काम कर सकती है। अणुव्रत का पूरा दर्श
सयम प्रधान जीवन-शैली का ही एक सुसगत उदाहरण है। एक जमाना था ज
अहिसा को परम धर्म कहा गया था पर अहिसा और अपरिग्रह की दीवार इत
एकात्मक हैं कि उन्हे अलग नहीं किया जा सकता अहिसा के लिए सबसे बड़
कठिनाई है आज की व्यवस्थाए। समाज राज्य, व्यापार आदि की जो व्यवस्था
आज प्रतिष्ठित हा चुकी है वे अहिसक जीवन के बहुत अनुकूल नहीं है। आज पू
जीवन अर्थतत्र पर केन्द्रित हो गया है। समाज तथा शासन-व्यवस्था भी उससे इत
प्रभावित हो गए हैं कि अहिसक समाज-रचना एक स्वप्न बन गई है। इस दृष्टि
से यह आवश्यक है कि व्यक्ति समाज तथा राज्य के सामने व्यवस्था के कुछ ऐ
सूत्र प्रस्तुत किए जाए जिससे अहिसा के अनुकूल वातावरण का निर्माण हो सके

अहिंसा की प्रशिक्षण विधि

अहिसा के प्रशिक्षण के साथ-साथ उसकी प्रयोग-विधि पर भी सूक्ष्मता से
चितन किया गया। यह सोचा गया कि इसे शिक्षा-पद्धति के साथ जोडा जाए। इसके
लिए प्राथमिक कक्षा से लेकर स्नातकोत्तर कक्षाओ तक के लिए ऐसा साहित्य तैया
किया जाए जो नियमित पाठ्यक्रम का अग बन सके। वह केवल सैद्धान्तिक ही नहीं
हो अपितु प्रायोगिक भी हो। इसके लिए शिक्षा-विभाग से भी सम्पर्क स्थापित किय
जाए। जीवन-विज्ञान के पाठ्यक्रम मे भी अहिसा-प्रशिक्षण का सन्दर्भ अनिवार्
माना गया।

चूकि जैन विश्व भारती मान्य विश्वविद्यालय अहिसक प्रशिक्षण का प्रयोग
केन्द्र बन रहा है अत यहा उसे इस तरह से रूपायित किया जाए कि न केवल
समाज की शिक्षण-सस्थाए ही इसके नाभिक बन जाए अपितु यहा से प्रशिक्षित
लोग अन्य शिक्षा-केन्द्रो मे भी इस पद्धति के प्रशिक्षण म पुरोधा बन सके।

इस दृष्टि से आधुनिक प्रचार तत्र mass media का उपयोग भी वाछित
माना गया। समाचार-पत्रो रेडियो टेलीविजन आदि पर अहिसक जीवन-शैली के
प्रयोगो का इस तरह प्रतिबिम्बित किया जाए जिससे प्रशस्त वातावरण का निर्माण

हो सके। आज मिडिया ने जैसा रूपाकार ग्रहण कर लिया है उसस हिसा के निमित्तो का ही ज्यादा प्रात्साहन मिलता है। नयी पीढी इसस जिस तरह दिग्भ्रात बन रही ह यह एक चिता का विषय हे। आवश्यकता है इसका समुचित उपयोग किया जाए।

अहिसा के प्रशिक्षण के लिए समय-ममय पर शिविर-समायाजना का भी आवश्यक माना गया।

हथियारो की होड में विकास की उपेक्षा

भारत की प्रधानमत्री तथा गुटनिरपक्ष आन्दालन की अध्यक्ष श्रीमती इदिरा गाधी क शब्दा म 'विकास आजादी निरस्त्रीकरण तथा शाति अविभाज्य हे।' पर अत्यन्त दु ख की यात है कि विश्व क अनक दश जनता का आवश्यक सुविधाए देने की कीमत पर विकास की उपेक्षा की उपक्षा करत हुए भी हथियारा को हाड का बढा रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-काष की एक विज्ञप्ति के अनुसार एशियाई देश रक्षा पर वार्पिक वजट का २० प्रतिशत खर्च कर रह हैं जबकि शिक्षा नथा सामाजिक कल्याण पर क्रमश ८ आर ३ प्रतिशत खर्च कर रहे हैं। ऐसा अनुमान है कि विश्व म प्रति वर्ष एक सैनिक पर १८३०० डालर खर्च किया जाता है जबकि एक स्कूली बच्चे पर ३८० डालर खर्च किया जाता हे।

विश्व मे एक लाख आबादी पर ५५६ मैनिक हैं पर डॉक्टर केवल ८५ हैं। अविकिसत दशा म २५० आबादी पर एक सैनिक है जबकि ३७०० की आबादी पर एक डॉक्टर है। रूथ लगर सीवट के अनुसार १९८३ म हथियारो के निर्माण पर ६६० अरब डालर खर्च किया गया। पर आज विश्व मे ६० करोड लाग बेराजगार हैं ९० करोड लोग निरक्षर हैं, ५० करोड लोग गभीर बीमारिया से ग्रस्त हैं १०० करोड लाग गरीबी की रेखा से नीचे जी रहे हैं और समुचित चिकित्सा तथा भोजन के अभाव म प्रतिदिन चालीस हजार बच्चे मौत के शिकार हा रहे हैं।

हथियारा की होड पर भारी फौजी खर्च ने न केवल तीसरी दुनिया क देशा को आवश्यक विकासगत वित्तीय जरूरता से वचित कर दिया है बल्कि लोगो के मनो म अपने राष्ट्र तथा विश्व के भविष्य के बारे मे भी निराशा उत्पन्न कर दी है। बताया जाता है कि अभी विश्व म पचास हजार से भी अधिक नाभिकीय हथियार हैं और उनमे हजारा डिलीवरी प्रणाली से सबद्ध हैं। इनकी विभीपिका क बारे मे सहज ही अनुमान लगाया जा मकता है। यदि नाभिकीय युद्ध होता है ता उसका अकल्पनीय परिणाम होगा और हमार भूमडल का परिस्थितिकीय सतुलन

भी इतना बिगड गया है कि वह मानव जीवन के लिए रहने लायक नहीं रह जाएगा।

१९७५-८३ के दौरान विश्व सैनिक खर्च मे २५ प्रतिशत से भी अधिक वृद्धि हुई। सयुक्त राष्ट्र एजेन्सिया क अनुसार १९८० म विश्व सैनिक खर्च अफ्रीका एव लेटिन अमरीका के कुल राष्ट्रीय उत्पादन के बराबर था और वह विश्व के उत्पादन के कुल मूल्या के ६ प्रतिशत क बराबर था। यह अनुमान है कि विश्व म हथियारा तथा सैनिको पर प्रति घटा ७ ४ कराड डालर खर्च किया जा रहा है। १९९० के लिए विश्व सैनिक खर्च का अनुमान १५४५ अरब डालर है।

आज तीसरी दुनिया म ऐसी अनेक सरकार है जिन्ह अपनी ही जनता का बडा दुश्मन कहा जा सकता है। ये एस शासक है जो अपने ही नागरिका के खिलाफ अपने को हथियार वद कर रहे हैं। तीसरी दुनिया के दश अजाने ही महाशक्तिया की प्रतिद्वद्विता म अपने का घसीट लेते ह। १९७९ की कीमता पर तीसरी दुनिया के देशा म १९८१ म यह रकम ८१ अरब डालर हो गयी। इस तरह इस दशक क दौरान कुल विश्व खर्च म २५ प्रतिशत वृद्धि हुई जबकि तीसरी दुनिया के देशा का हिस्सा ७ ९ प्रतिशत बढकर १५ ६ प्रतिशत हो गया।

आज अविकसित विश्व क करीब ३० दश हथियारा का उत्पादन करते हैं। १९७९ म इन दशा म करीब ५ अरब डालर मूल्य के सैनिक ओद्योगिक वस्तुआ का उत्पादन हुआ था। अविकसित दशा म १ ५ करोड लोग नियमित सशस्त्र सेना म हे जो विश्व के कुल नियमित सैनिक कर्मचारिया का ६० प्रतिशत है।

भारत ने १९८१ म सशस्त्र सनाआ पर ५७००००००० डालर खर्च किया। इनका सख्या १०९६००० थी। भारत का क्षेत्रफल ३२८७७८२ वर्ग किलोमीटर हे। आर १९८१ मे इसकी आबादी ६८५१८४६९२ थी। यहा प्रति एक हजार की आबादी पर १ ६ सैनिक हैं जो सबसे कम है। यह भी सतोष की बात है कि रक्षा पर कुल राष्ट्रीय उत्पादन का केवल ३ ५ प्रतिशत खर्च हुआ जा पाकिस्तान सऊदी अरब मिस्र तथा चीन की तुलना म भी बहुत कम है। इन दशा म सेना पर क्रमश ६ ७ २० ५ ७ ३ तथा १० प्रतिशत खर्च हा रहे हैं।

यह अनुमान है कि विश्व ने १९८३ के दौरान सेनिक अनुसधान तथा विकास पर ६००० करोड डालर खर्च किए। इनमे सावियत सघ तथा अमरीका का खर्च ८० प्रतिशत हे। इनके साथ ब्रिटन फ्रास चीन तथा पश्चिमी जर्मनी ने सनिक अनुसधान एव विकास पर ९० प्रतिशत खर्च किए। यहा यह उल्लेखनीय ह कि १९८४ म केवल अमराका न सैनिक अनुसधान एव विकास पर करीन ३२ अरब डालर खर्च किए।

हथियार और व्यापार

हथियारा के व्यापार म भी लगातार वृद्धि हो रही है। प्रतिवर्ष ३० अरब डालर का कारोबार होता है। अमरीका तथा सोवियत सघ कुल दो तिहाई हथियारा का निर्यात करते हैं।

हथियारो की होड के फलस्वरूप विश्व के सभी देशों के रक्षा बजट मे लगातार वृद्धि हो रही है। परिणामत वे अपनी जनता की आर्थिक तथा सामाजिक जरूरता पर बहुत कम ध्यान दे पाते हैं।

सैनिक खर्च म वृद्धि से तीसरी दुनिया के दश न केवल आवश्यक विकास खर्च से वचित हो रहे हैं बल्कि उसस तनाव भी वढ रहा है। इसका नकारात्मक प्रभाव पड रहा है क्याकि व्यापक बजट घाटे के आधार पर सैनिक-खर्च किए जाते हैं। इतने अधिक सैनिक खर्च की वजह स वित्तीय ससाधन कम हो रहे हैं। सैनिक-खर्च अविकसित देशा के कमजार अर्थतत्र पर एक वडा आर्थिक बोझ है।

खडित राष्ट्रवाद

आज मानवता की सवसे बडी समम्या है खडित राष्ट्रवाद। लोग विभिन्न स्वार्थों को लेकर अपने-अपने कुछ घर बना लेते हैं और फिर उनकी सुरक्षा के लिए आपस म झगडत रहत है। उदाहरण के तौर पर हम हिन्दुस्तान आर पाकिस्तान को ल। एक जमाना था जव दोना ही राष्ट्र एक ही शासन-व्यवस्था मे सचालित होते थे पर चूकि अव वे दो राष्ट्र बन गए हे तो दाना म अनक स्पर्धाए खडी हो गई हैं। अपने-अपन स्वार्थों की सुरक्षा के लिए दानो अस्त्रो की होड मे लगे हुए हैं। पाकिस्तान अपनी सुरक्षा के लिए शस्त्र खरीदता है तो हिन्दुस्तान को भी सतुलन बनाए रखने के लिए शस्त्र खरीदने पडत है। दूसरी ओर चीन जब शस्त्रास्त्रा का भारी विकास कर लेता है ता भारत को भी अपनी सुरक्षा-व्यवस्था क लिए युद्ध-सज्जा के रूप म भारी व्यय करना पडता है। रूस और अमेरिका में जिस स्टार वार की बात चल रही है उस पर १० अरब डालर खर्च होगे। यह तो केवल स्टार वार की ही बात है। पूरी युद्ध-सज्जा के लिए तो न जाने कितना खर्च हो रहा होगा। इसी तरह अन्य राष्ट्र भी एक-दूसरे की स्पर्धा म शस्त्रा पर इतना अनाप-शनाप खर्चा करत हैं कि यदि उतना खर्चा दुनिया के विकास मे लगाया जाए ता गरीबी वीमारी तथा अज्ञान के विरुद्ध एक सशक्त मोर्चा बनाया जा सकता है। पर चूकि सुरक्षा एक मौलिक मुद्दा है। अत कुछ एक विकसित राष्ट्रा को छोडकर अशप अविकसित राष्ट्रा को अपना पेट काटकर भी युद्ध सामग्री खरीदन के लिए विवश होना पड रहा है। एसी स्थिति म यदि सभी अणुव्रत क इम व्रत का कि 'मैं किसी पर आक्रमण

नही करूगा।' पालन करने लगे तो पूरी दुनिया की तस्वीर को बदला जा सकता है।

अणुव्रत क उद्देश्या म इसी बात को स्पष्ट करत हुए बताया गया है-- "जाति वर्ण देश और धर्म का भेद-भाव न रखते हुए मानव मात्र को सदाचार की ओर आकृष्ट करना।" सचमुच जब यह भेदभाव मिट जाता है ता पहली बात तो यह है कि खडित राष्ट्रवाद ही समाप्त हा जाता है। फिर यदि राष्ट्र स्वतत्र भी रहे तो उसके लिए झगड मिट जाते हैं। इस अर्थ म अणुव्रत आन्दालन पूरी दुनिया की शाति का एक सशक्त आन्दोलन है।

एक राष्ट्र म भी जाति, वर्ण प्रदश धर्म भापा आदि को लेकर अनेक विभक्तिया है। इन सभी विभक्तिया को लेकर समय-समय पर अनेक विवाद खडे हात रहत है। जैसा कि बताया गया है यदि मनुष्य के मन से भद की दीवार ढह जाए तो वे सारे अपने आप समाप्त हा सकते हैं।

हथियार आर प्रदूपण

आज की हमारी पूरी दुनिया की एक भयकर समस्या है-- प्रदूपण। इससे पूरा पर्यावरणीय सतुलन बिगडता है। इस सतुलन के बिगडने का प्रमुख कारण है परमाणु शस्त्रा का विस्फाट। पूरी दुनिया हीरोशिमा आर नागासाकी पर गिराए गए परमाणु बमा की सहार क्षमता से परिचित है। पर आज ता ऐसा अदाज है कि केवल रूस और अमेरिक के पास ही उससे ६४ हजार गुणा अधिक सहारक शक्ति सग्रहीत है। ऐसी स्थिति से बचने क लिए मैत्री ही एकमात्र हल दिखाई देता है जो अणुव्रत का महत्त्वपूर्ण सूत्र हे।

हिंसा एक समस्या

हर रोज अखबार खून से रगे हुए आते हैं। आखे जैसे उन धब्बा को पढने की अभ्यस्त हो गई हैं। दो-चार क मरने की बात तो आई-गई हो जाती है। जब वह सख्या ज्यादा बडी हो जीती है ता लगता है क्रूरता बढ रही है। लाग उस पर अफसोस जाहिर करते हैं। पर क्या अमल मे वह अफसोस करुणा-प्रेरित हैं। क्या कहीं कलेजे पर चोट लगी है? हो सकता है कुछ लोग करुणा से भी बात करते हा पर आज करुणा का स्रोत सूख गया है। ज्यादातर बात करने वाले वे लाग हैं जिनकी तिजोरिया के पेट मोटे हो रहे हैं जो सत्ता या सम्पत्ति के दलाल हैं या फिर उन लोगा की आखे गीली हाती हैं जो मरने वाला के सबधी हा। कायर लोग हमेशा रोने के लिए ही पैदा होते हैं।

इसम कोई शक नहीं कि हिसा पाप है पर क्या स्वार्थपूर्ण राजनीति पाप नहीं है? क्या अन्यायपूर्ण तरीके से पेसा अर्जित करना पाप नहीं है? जब तक इस पाप को नहीं समझा जाएगा तब तक क्या हिसा के पाप को समझा जा सकता है? इसीलिए कुछ लागा का ता कहना है— 'अपरिग्रह परमा धर्म ।' 'अहिसा परमा धर्म ' की जगह 'अपरिग्रह परमो धर्म ' क्यो हो गया? इसीलिए कि हिसा भी परिग्रह क लिए ही की जाती है।

प्राणवध ही हिंसा नहीं

हिसा केवल आदमी को मार देना ही नहीं है। उसके हजारा चेहरे हैं। कभी उसके चेहरे को पहचान लिया जाता है, कभी नहीं पहचाना जाता। केवल नरसहार से जुडी हिसा ही नहीं बल्कि नारी-अत्याचार शोषण अराजकता भ्रष्टाचार चारित्रिक गिरावट आदि अनेक हिसाए हैं, जिन्हे दूर करना हागा।

लोग कानून और व्यवस्था की बात करते हैं पर वे कानून-कायद बड-बड घोटाला को क्या नहीं देख पाते? उन सासदा और विधायका का क्या नहीं पहचानते जा चुनावा म धाधली करते हैं? उन अफसरो का क्या नही जान पात जिनक बड-बड फ्लैटा-फैक्टरिया की दीवार ऊची हाती जा रही है। लाग जात हैं छापा मारन

पूछताछ करन आर अपनी जब भरकर लौट आत हैं। वड-वड व्यवसायी कैस रातो-रात लखपति-कराडपति बन जाते हैं इस बात की खोज-खबर कानून-कायदे क्या नहीं करते?

अणुव्रत हिसा की निदा करता है। पर साथ ही साथ स्थिति के समाकलन की बात भी करता है। अमीर और अधिक अमीर हाता जाए तथा गरीब और अधिक गरीब हाता जाए वह व्यवस्था न्याय-सगत नहीं हा सकती। अपहरण करना एक पाप है फिराती मागना पाप है पर जिन लोगा न अपार पैसा कमाया है क्या वह न्यायपूर्ण तरीके म कमाया है?

हिंसा से हिंसा नही मिटती

यह सही ह खून रग हुए वस्त्र को खून स नहीं धाया जा सकता पर क्या यह भी सही नहीं है हिसा क चलते प्रतिहिसा को नहीं रोका जा मकता? यह हिसा का समर्थन नहीं ह अपितु न्याय और अन्याय के भेद को समझन की गुहार ह। जब इस गुहार का नहीं सुना जाता है तो भूखे आदमी की आखा म क्रोध उतर आना स्वाभाविक है। उसके हृदय म क्रूरता उतर आना भी स्वाभाविक ह। यह ठाक है कि सफेद कपडा पर खून के धब्बे नहीं होते पर जब आदमी की आख म क्राध उतर आता है तो उसे हर सफेदी लाल ही दिखाई देती है।

न्याय क्या है?

असल म जब समाज-व्यवस्था का काई मालिक नही हाता है तब विद्रोह जागता है। यह विद्रोह एक दिन मे नहा जागता इसका एक लम्बा इतिहास हाता है। वह धीरे-धीरे सुलगता है। जिन लोगा का पेट भर राटी नहीं मिलती जिन लागा के बच्चे दूध के लिए बिल-बिला रहे हा जिन लागा का पहनन के लिए कपडा नहा मिलता जिन लोगा को सिर छुपाने क लिए कच्ची फूस की छत भी नहीं मिलती— वे लाग न्याय आर व्यवस्था का जितना पालन करते है वह भी क्या कम ह? एक आर लाग शादिया म लाखा-कराडा रुपय खर्चत रह लाखा रुपया केवल लाइटिंग म प्रदशन आर दिखाव म खर्च करत रह दूसरी आर लाग भूख मरते रह यह न्याय है क्या? यह सहा ह कि गरीब की गरीबी का एक बडा कारण वह स्वय भी ह। पर वह समाज-व्यवस्था कभा भा आदर्श नहा हा सकती जा पिछली पक्ति म बठ आदमा क दु ख-दर्द का नहा समझ सकती। एक सीमा पर आकर जब दर्द असह्य हा जाता ह ता आदमी वभात हा जाता है। उस उभान अवस्था मे वह क्या कर रहा ह उसका उस स्वय भी पता नहा हाता। उस आग म गीले और सूख सभी जल जाते ह। आवश्यकता ह स्थिति का सही विश्लेषण किया जाए।

क्या यह करुणा है?

यदि अपहरणा और हिसा को कुचलने के लिए फौज पुलिस के नुकीले जूतो को तैनात किया जाता है ता क्या यह करुणा है? कुछ कोठियो को बचाने के लिए हजारा झापडिया पर बुलडाजर फिरा देना क्या न्याय है? क्या यह फैमला वे लोग कर सकते है जा गरीवा के रहनुमा कहलाते हैं। असल मे उनके मन मे करुणा नहीं होती। अपनी स्थिति को मजबूत बनाने की अपनी गोट बिठाने की ही बात होती है। बल्कि सच ता यह है कि उस हिसा के साथ कुछ बहुत सफेदपाश लोगा की माठ-गाठ हाती ह।

आतकवाद नक्सलवाद अलगाववाद तथा उग्रवाद भी गरीब के कहा तक हमदर्द हैं यह नहीं कहा जा सकता। हाता तो यह है कि कुछ मुखिया लोगो का पेट भर जाता है आर सारे वाद सो जाते हैं। इन वादो के पास भी करुणाशील अनुभूति कहा है? हो सकता है कुछ लाग भावनाशील हा हो सकता हे कुछ लोग प्रवाह म भी आ गए हो पर प्रतिहिंसा के पास स्थायी समाधान नहीं हो सकता। उसकी प्रतिक्रिया और अधिक खतरनाक हो सकती है। स्थायी समाधान उन लोगा के पास है जो अपनी क्रिया में रत हा हर स्तर पर प्रामाणिक और ईमानदार रहते हा। उनके मन मे ही करुणा का असली स्रोत फूट सकता हे जिस समाज मे ऐसे लागो की सख्या ज्यादा होगी वह हिसा को जन्म नहीं देगा। उसके मन म समस्त के प्रति पीडा का भाव हागा। आज ऐसे ही लोगा की जरूरत है, वे ही समस्या का स्थायी समाधान दे सकते हैं।

स्थायी समाधान की आवश्यकता

यह ठीक है कि उग्र बीमारी के तात्कालिक चिकित्सा उपाय खोजे जाए, पर उससे भी ज्यादा जरूरी है कि उसका स्थायी इलाज किया जाए। स्थायी इलाज नहीं हुआ तो फिर प्रतिक्रिया पैदा होगी और समाज-व्यवस्थाओ तथा राज्य-व्यवस्थाओ के किला को ढहन से नहीं बचाया जा सकेगा। तात्कालिक चिकित्सा बुरी नहीं हे पर यदि वह आतरिक राग का नहीं मिटाती है तो अन्दर ही अन्दर सडाध पेदा करती हे। आवश्यकता हे तात्कालिक नथा स्थायी दोनो तरह के उपायो का काम मे लिया जाए। जा व्यवस्था पूर्णाग चिकित्सा पर ध्यान नहीं देती वह स्वय अपने विनाश का इतजाम करती है। आज दश मे बुनियादी क्राति की आवश्यकता हे। उस क्राति के वाहक लोग व ही हा सकत ह जो स्वय चरित्रवान इमानदार तथा करुणाशील हा।

हिसा हिसा हिसा उत्तर स दक्षिण और पूर्व स पश्चिम चारो आर ये ही स्वर गूज रह हे। पर क्या कवल आवाज से हिसा मिट जाएगी? यह ठीक ह

कि घर म चोर आ जाए ता वह शोर मचाने से भाग सकता है। पर क्या डाकू शोर से भाग जाएगे? नहीं डाकू शार स नहीं भाग सकते। वे तो पूरी तैयारी करके डाका डालने के लिए आते हैं। उनसे पास शस्त्रास्त्र हाते हैं। मरने-मारने मे उनका कोई हिचक नहीं होती।

आजकल उग्रवादी भी अधेरे मे नहीं आते। आतकवादी भी डर-डरकर नहीं आत। सामान्य आदमी तो उनका सामना करे ही क्या पुलिस भी उनके सामने आने म घबराती हे। कैसे किया जाए उनका सामना?

असल म आज हमारे लागा के पास सामना करन का एक ही उपाय है—हिसा। पर हिसा से ता प्रतिहिसा जागती है आज जा हिसा बढी है उसका भी मूल कारण यही है कि हमारा प्रेम का दरिया सूख गया है। हिसा केवल बन्दूक चलाना ही नहीं हे। बन्दूक की हिसा का तो सब समझते हैं पर शापण की हिसा का कौन समझता ह? यदि इस हिसा को नहीं समझा गया न राका गया ता बदूक का हिसा को नहीं रोका जा सकेगा। आवश्यकता है अहिसा को समझा जाए। उसका व्यवस्थित प्रशिक्षण दिया जाए।

आतकवादिया उग्रवादिया का हिसा का व्यवस्थित प्रशिक्षण दिया जाता है। वे महीनो कठिन प्रशिक्षण से गुजरते हैं पर अहिसा के लिए क्या कोई प्रशिक्षण व्यवस्था है? हिसा की ट्रेनिग म अपार श्रम और अर्थ खर्च हो रहा है पर अहिसा प्रशिक्षण की काई व्यवस्था नहीं है। केवल अहिसा अहिसा कहने से अहिसा की प्रतिष्ठा नहीं हा सकती।

आज यदि कोई अहिसा के प्रशिक्षण की बात करता भी है तो लोगा का ध्यान उधर नहीं जाता। सरकार भी उस ओर से उदासीन हैं। ऐसी स्थिति म अहिसा की प्रतिष्ठा केसे हो?

पुराने जितने नेता थे उन्हे अपने-अपने परिवारा तथा सप्रदाय-स्रोता से भी अहिसा का प्रशिक्षण मिलता था। गाधीजी ने भी अहिसा का व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया। उनके आस-पास जो लोग खडे हुए थे तपे-तपाये थ। समाज का वातावरण भी अलबत्ता आस्थाशील था। आज वह सारी बात धुधली पड गई है। बाप का हिसा म विश्वास हा तो वह बटे का क्या अहिसा की बात कह? शिक्षक स्वय हिसा का समर्थक हो ता छात्र को वह क्या अहिसा की शिक्षा दे? धर्मगुरु स्वय जब सम्प्रदाय की आग फैलाते हा तब तत्र वे अहिसा की बात कैसे कर? एसा लगता है जैसे चारा ओर अनास्था का साम्राज्य हो गया है।

ऐसी स्थिति म अणुव्रत ने अहिसा के प्रशिक्षण की एक आवाज उठाई हे। वह न केवल शिक्षा म ही अहिसा की बात करता है। अपितु समाज का भी अहिसा म प्राशक्षित करने की बात करता है।

अहिंसा ही विकल्प है

अहिंसा एक शाश्वत सत्य है। यद्यपि समय-समय पर इस पर सदेह के बादल भी मडराते रह हैं और ऐसा भी लगता रहा है कि हिंसा ही समस्या का समाधान है। पर कुल मिलाकर देखा जाए तो अतत विजय अहिंसा की ही हुई है। पिछले पचास वर्षों से हमारी दुनिया मे युद्ध-देवता के चरणो मे चढाने के लिए जो नैवेद्य तैयार किया गया था वह सचमुच ही बडा भयकर था। मजे की बात यह है कि युद्ध की यह तैयारी भी शाति के नाम पर होती रही। रूस और अमेरिका की अगुवाई मे इस दिशा मे जो चरण बढाए गए वे सचमुच ही रोमाच पैदा करने वाले थे।

पहला कदम

पर भला हो रूसी नेता श्री गोर्बाचोव का कि जिन्हाने शस्त्र-सज्जा के विरोध में साहस भरा कदम उठाने की पहल की। अमेरिकी नेता जार्ज बुश तथा दोनो देशो के कुछ पूर्व नेता भी धन्यावाद के पात्र हैं कि जिन्होन निरस्त्रीकरण के सम्बन्ध म कुछ प्रारभिक चर्चाए शुरु कीं। शस्त्रों मे कटौती की। या तो यह चर्चा १९८२ मे ही शुरू हो गई थी पर कोई निर्णायक बात सामने नहीं आ सकी। बहुत सार लोग इस दृष्टि से निराशावादी ही बन गए थे। युद्ध को एक नियति माना जाने लगा था। तरह-तरह की भविष्यवाणिया पढने-सुनने को मिलती रहती थीं। पर ३१ जुलाई १९९१ को मास्को मे श्री गोर्बाचोव तथा श्री बुश ने परमाणु प्रक्षेपास्त्रो के बम वर्षको में ३० प्रतिशत की कटौती के प्रस्ताव के जिस समझौते पर हस्ताक्षर किए उसे विश्वशाति के लिए एक नयी पहल के रूप में देखा जा सकता है। यद्यपि अभी भी दोनो महाशक्तियो के पास जो शस्त्र-भडार भरे पडे हैं वे पूरी दुनिया की तबाही के लिए काफी पर्याप्त है। पर फिर भी उस सीमा के ४९०० बैलिस्टिक प्रक्षेपास्त्रो तक पहुच जाने पर भी हवा की एक ठडी लहर पूरी दुनिया मे व्याप गई है।

वास्तव म शस्त्रो के कम होने की अपेक्षा भी शस्त्रा की निरर्थकता की बात समझ म आ जाना ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। यह इस स्वीकृति का प्रतीक कदम है कि

शस्त्र से शाति को नहीं न्यौता जा सकता। श्री मिखाइल गार्बाचाव ने ठीक ही कहा है— "हमारा अगला लक्ष्य इस पहल का भरपूर फायदा उठाकर निरस्त्रीकरण का एक अपरिवर्तनीय स्वरूप प्रदान करना है।" श्री जार्ज बुश ने ठीक ही कहा है— "यह सन्धि हमारी सुरक्षा और विश्व-शान्ति के लिए बहुत बडा कदम है।"

अशस्त्र ही समाधान

वास्तव मे जैसा कि भगवान् महावीर ने कहा था— "अत्थि सत्थ परण पर।" शस्त्र मे प्रतिस्पर्ध है। उससे शस्त्र की परम्परा आगे बढती है। यही वह वजह थी जिसने दोना महाशक्तियो को अपनी आयुधशालाओ को सजाने की प्रेरणा दी। फलत पूरी दुनिया विनाश के कगार पर पहुच गई। इस प्रतिस्पर्धा ने यह सावित कर दिया कि शस्त्रा से शाति स्थापित नहीं हो सकती। शाति तो अशस्त्र से ही स्थापित हो सकती है। गौतम बुद्ध ने भी ठीक ही कहा था— "नहि वरेण वराणि सम्मति ध कदाचन"— वैर से वैर का शमन नहीं किया जा सकता। उस तो मैत्री से ही निषिद्ध किया जा सकता है। यद्यपि आज भी ऐसे जगखोर लोगो की कमी नहीं है जो शस्त्र-परिसीमन को कमजोरी मानने से बाज नहीं आते। इस सारे हिसाब को भी बडे प्लस-माइनस की कसौटी पर कसा गया है पर जिन लोगो ने साहस के साथ कमद उठा लिया वे निश्चय ही साधुवाद के पात्र हैं।

कुछ लोगो का जैसे यह मानना है कि शस्त्र ही शाति-सतुलन को बनाए रख सकता है वैसे ही कुछ लोगो का यह मानना भी है कि अशस्त्र ही शाति का अमोघ उपाय है। यदि हम हिसा और अहिसा की अतियो मे जाएगे तो बात बहुत उलझ जाएगी। सामान्य आदमी न तो एकमात्र हिसक बन सकता है और न एकदम अहिसक। राष्ट्र के स्तर पर भी हिसा और अहिसा की बात बहुत सूक्ष्म है। फिर भी यदि इन दोना के बीच कोई सतुलन पैदा किया जा सके तो वह मनुष्य जाति के बहुत ही सौभाग्य की बात होगी।

नक्शा ही बदल जाता

आज तक शस्त्रा के विकास मे जो शक्ति, समय और अर्थ खर्च किया गया यदि उसका शताश भी शाति के लिए किया जाता तो दुनिया का नक्शा ही कुछ और होता। कितना अज्ञान दूर हो सकता था। कितने प्राकृतिक साधन-स्रोतो को मानव-हित के साथ जोडा जा सकता था। एक जगुआर की ८ करोड की कीमत से ५ करोड स्कूली बच्चो को दो-दो कापिया दी जा सकती थीं। एक पनडुब्बी की कीमत से २ लाख गावो को पीने के पानी की सप्लाई की जा सकती थी। ५ एम

बी टी टैंका की २५ करोड की कीमत मे १२५०० गावा म प्राथमिक स्कूल खोले जा सकत थे। २ आई ए एफ हलीकाप्टर की २ कराड ४० लाख की कीमत से १२००० स्कूली टीचरा का वार्षिक वेतन चुकाया जा सकता हे। ८०० हवाई जहाजो पर वार्षिक रूप से खर्च किए जाने वाले २०० करोड रपया के एवज मे १० लाख टन गेहू खरीदा जा सकता था। इन सार उदाहरणा का बहुत विस्तार किया जा सकता है पर यह सब चिन्तन तब तक निरर्थक है जब तक युद्ध का ही शाति का उपाय माना जाता रह। आज १० खरब डालर से भी ज्यादा धन सैनिक गतिविधिया म खर्च किया जा रहा है।

युद्ध के उन्माद स कवल बड और धनी देश ही ग्रसित नहीं हैं अपितु पूरी दुनिया ही इसकी चपट म है। खासकर अविकसित तथा विकासशील देशा की हालत तो बहुत ही पतली हा गई। क्षेत्रीय समीकरणा का बनाए रखने क लिए उन्हे अपना पट काटकर भी शस्त्र खरीदने पड रहे हैं। आशा की जानी चाहिए कि ३१ जुलाई को प्राणवायु का जो ताजा झाका आया है उससे पूरी दुनिया प्रभावित होगी और एक मगल सुप्रभात उदित होगा। यह केवल दा राष्ट्रा के प्रधाना की ही विजय नहीं है अपितु विश्व के उन समस्त शाति कर्मियो की विजय है जो इसके लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे हैं।

अणुव्रत की हमेशा यह मान्यता रही है कि शाति यदि स्थापित हो सकती है तो अहिसा से ही हो सकती है। इसीलिए अणुव्रत समवाय के रूप मे निरन्तर प्रयास होते रहे हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि शस्त्र-समर्थक लागा का भी अहिसा की ताकत का मगल दर्शन हुआ है। आशा की जानी चाहिए कि यह समझ दिनो-दिन आगे बढती जाएगा और पूरी दुनिया खुशहाली से भर जाएगी।

विश्व-शांति मे अणुव्रतो का योगदान

शान्ति मनुष्य की सवाधिक प्रिय कामना है। वह जीवन म जितने भी काम करता हे व सारे शान्ति-केन्द्रित हाते हैं। इसीलिए आगमो म कहा गया है—

जे य बुद्धा अइक्कता, ज य बुद्धा अणागया
संति तेसि पइट्ठाण, भूयाण जगइ जहा॥

—दुनिया म जितने भी महापुरुष हुए हैं आगे जितने भी हागे उन सबने शाति को एक आधार भूत सत्य माना हैं। जिस तरह पृथ्वी सब जीवा का आधार है उसी तरह शाति मनुष्य के जीवन का आधार है।

झगडे की जड

पर कठिनाइ यह है कि मनुष्य जितनी शाति चाहता है उतनी अशाति बढती जा रही है। दूसरे शब्दा मे कहे ता अशाति जितनी बढ रही ह मनुष्य की शाति-कामना भी उतनी ही बढती जा रही हे। देश-काल ओर परिस्थितिया इसके अनेक कारण ह। हो सकता है पृथ्वी के विकिरण ही कुछ ऐसे हो गए हा कि आज यहा किसी भी कोने मे रहने वाला मनुष्य सहज भाव से अशात है। वैस हमार यहा छह आरो की व्यवस्था की गई है उसका काल-मूलक विभाजन सुख-दु ख की सामूहिक अनुभूति ही रही है। एक समय था जब मनुष्य सहज शात था। धीरे-धीरे वह शाति कम होती गई। आज शाति कम है अशाति ज्यादा है। इसीलिए इस पचम आरे का नाम ही दु षम आरा (कलियुग) हे। इसमे कोई शक नहीं कि प्राकृतिक शक्तिया मनुष्य को प्रभावित करती हैं। हो सकता हे हम उसका ठीक से आकलन न कर पाए, पर फिर भी यह सच हे कि मनुष्य आज अशात है। सामूहिक अशाति के जिन कुछ कारणा का आकलन हम कर पाते हैं उसके आधार पर व्यापार सत्ता ओर वाद का प्रमुख रूप से गिनाया जा सकता हे। पुराने जमाने मे जर जोरू जमीन और मत ये चार कारण झगडे क मूल माने जाते थे। आज जोरू को लेकर झगडे नहीं होते यह ता नहीं कहा जा सकता यह कोई बडा झगडा नहीं होता यह कहा जा सकता है। पर शेष तीन कारण— व्यापार सत्ता ओर वाद के

रूप मे उसके मूल अवश्य माने जा सकते हैं। युद्ध झगडे का चरम रूप है। वही अशाति का चरम रूप है।

सोना और शाति

सोना हमेशा ही सम्पदा का मूर्त रूप रहा है। पुराने युग मे भी यह आकर्षण का कन्द्र रहा है आज भी इसी के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय बाजार म उतार-चढाव आता रहता है। इसी से मुद्राआ का मूल्य-निधारण होता है। पुराने जमान म लूट-खसाटकर साना एकत्र किया जाता था। यद्यपि लूट-खसाट ता आज बाकायदा आक्रमण कर राष्ट्र को परास्त कर ऊटा पर भर-भरकर सोना लूटकर ले जात थे आज वह रूप बदल गया है। आज तस्कर लोग इस लूट के मुख्य भागीदार हैं।

शस्त्र और शाति

बल्कि आज तो सारा व्यापार ही सोने के आसपास घूमता हे। आज कोई भी देश पर आक्रमण कर लूट-पाट कर सोना नहीं ले जाता अपितु अपने उत्पादना क द्वारा भिन्न-भिन्न देशा म अपनी मडिया स्थापित कर वहा से सोना एकत्र कर ले जाता है। पूरी दुनिया के विकसित देश आज इस प्रकार अविकसित राष्ट्रा का दोहन कर उन्ह परनिर्भर बनाए रखना चाहते हैं।

और व्यापार का आज जो एक सयम शोषक तरीका शुरू हुआ है, वह है शस्त्रा का व्यापार। कुछ देश अपनी वैज्ञानिक समझ का लाभ उठाकर शस्त्रा का प्रचुर उत्पादन करते हैं। फिर उन शस्त्रा को अविकसित देशा को बेचकर अपार धन-लाभ करते हैं।

अपने शस्त्रा की खपत के लिए वे दुनिया के कमजोर देशा को कृत्रिम भय खडा कर आपस म उकसाते और फिर सहयोग के नाम पर उन्ह अपने शस्त्र देने का अहसान लादकर आर्थिक दृष्टि से भी उन्ह दिवालिया बना देते हैं। बहुत बार तो ऐसा भी होता है कि उनके जो शस्त्र पुरान पड जाते हैं उनको खैरात मे बाटकर न केवल अपनी चौधराहट ही जमाते रहते हैं अपितु उनका आर्थिक शोपण भी करते हैं। एक ओर ता वे अपने व्यापारिक प्रतिद्वद्विया को समाप्त करने क लिए निरन्तर नये-नये शस्त्र बनाकर युद्ध का वातावरण बनाए रखत हैं तथा दूसरी आर शक्ति सन्तुलन क नाम पर अविकसित दशा पर भी अशाति लादने म सकोच नहीं करते है।

अशांति का दूसरा मूल कारण हे— सत्ता। पुरान जमाने म दूसरा की जमीन

हडपकर वहा अपनी सत्ता स्थापित की जाती थी अपना शासन स्थापित किया जाता था पर आज वह सम्भव नहीं है। आज किसी दूसरे देश पर आक्रमण सम्भव नहीं है। आज आर्थिक सत्ता स्थापित कर कमजार राष्ट्रा को अपने अधीन रखने का प्रयास किया जाता है। चुनाव सत्ता प्राप्ति का आज मुख्य हथियार है। पर चुनाव के अवसर पर जिस तरह के गलत तरीके काम म लिये जाते हैं उमसे भी मनुष्य की शाति भग होती है। एक जमाना था जब साम्राज्यवादी व्यवस्था के अनुसार परम्परागत रूप से राजा का बेटा बन जाता था। आज वह सम्भव नहीं है। आज चुनाव सर्वमान्य हो गए ह। पर चुनाव के जा तरीके आज बन गए हैं उनम भी बडे राष्ट्रा की दखलदाजी एक समस्या बन गई है।

वर्तमान अशाति का तीसरा मुख्य कारण हे— वाद। पुराने जमाने म धार्मिक मतवाद अशाति का मूल कारण बनते थे। इसीलिए पूरी दुनिया का धार्मिक इतिहास खून की स्याही स लिखा हुआ है। आज धार्मिक मतवादा के स्थान पर इज्म (वाद) अशाति का मूल कारण बना हुआ है। पूरी दुनिया कुछ खेमा मे बटी हुई हे। कुछ बडे राष्ट्र छोटे राष्ट्रा को अपनी शरण देकर वादा के रूप मे एक-दूसरे को लडाने का नाटक खेल रहे हैं। आवश्यकता ता यही है कि बडे राष्ट्र व्यापक शाति के लिए अपने आपको तैयार करे। सयम ही उसका सही मार्ग हा सकता है।

युद्ध का मूल मन मे

यह सही है कि अशाति का मूल आदमी का मस्तिष्क हे। इसीलिए सयुक्त राष्ट्र सघ क घापणा पत्र म कहा गया है—

"युद्ध पहले मनुष्य के दिमाग म पैदा होता है फिर वह समरागण म जाता है।" वडे राष्ट्र भी इस अशाति से अछूते नहीं हैं। बल्कि वडा की अशाति भी वडी है। व लाग भी अपने मन का शात कर समस्या का समाधान खोजे यह जरूरा है।

सचमुच यह एक बहुत वडा सत्य है। जिस आदमी की भय की ग्रन्थि शिथिल हा जाती है वह भयकर आपदाआ म भी अशात नहीं होता। अणुव्रत क अन्तगत प्रेक्षाध्यान क माध्यम म इस प्रकार मनुष्य की आतरिक अशाति का मिटान का एक सुनियाजित प्रयत्न चल रहा है।

जब मन शात हाता है तभी आदमी अन्य समस्याआ का सार्थक हल खाज सकता है। कुछ लाग परिस्थितिया तथा मन की माग का पूरा करन म ही शाति की कल्पना करत हैं। पर वास्तव म शाति परिस्थितिया की अनुकूलता या मन की

माग का पूरी करने म ही नहीं है। यह सही है कि इसस क्षणिक शाति मिलती है। पर आतरिक शाति तो तभी मिल सकती है जब आदमी मे सयम की वृत्ति जागती है।

अणुव्रत आन्दोलन तो सयम की बात सिखाता है। सयम वास्तव म विचार-परिवर्तन की ही दिशा नहीं है अपितु विभिन्न ग्रन्थियो पर ध्यान केन्द्रित कर उनके स्राव के द्वारा हृदय-परिवर्तन की एक दिशा भी है। इस तरह वर्तमान युग म अशाति के जा कारण हें उनके लिए अणुव्रत का 'सयम खलु जीवनम्' नारा ही शाति का एक महत्त्वपूर्ण पैगाम है।

व्यक्ति से व्यवस्था तक

व्यक्ति और समाज म गहरा सम्बन्ध है। व्यक्ति की शुद्धि के बिना र
व्यवस्था सुचारु रूप से नहीं चल सकती आर सुचारु व्यवस्था के अभाव
ईमानदार नहीं रह सकता। भले ही इस अन्योन्याश्रय दोष माना जा सक
इसम कोई सन्देह नहीं कि व्यक्ति और समाज म परस्परता है। भले ही कु
विषम सामाजिक व्यवस्थाआ म भी अपनी प्रामाणिकता की सुरक्षा कर ले
लोग बहुत थोडे हात हैं। ऐसे लोग सदा समाज से ऊपर होते हैं। व र
मार्गद्रष्टा होते हैं। समाज के लिए उनका महत्त्व है पर आम आदमी उ
तक नहीं पहुचता। वह तो समाज-व्यवस्था से प्रभावित होता ही है।

शासन की सीमा

राज्य भी समाज-सीमा का ही विस्तार है। कुछ विचारक लोग अन्ति
पर जाकर शासन-व्यवस्था को न केवल गलत मानते हैं अपितु अनावश
मानते हैं। मार्क्स ने इसी बात का समर्थन करते हुए कहा है— "राज्य का
उद्देश्य शासक-वर्ग के हिता की सरक्षा और अन्य वर्गों का उत्पीडन अत्या
दमन करता है।" उनका अभिमत है कि वर्तमान पूजीवाद व्यवस्था र
पूजीपतिया का सगठन है। इसका उद्देश्य मजदूरो का शोषण करना है। इस
की पूर्ति के लिए वह अपनी सम्पत्ति एव हितो की रक्षा की दृष्टि से का
निर्माण करता है। कम्युनिस्ट घोषणा पत्र मे राज्य को पूजीपतिया की कार्य
कहा गया है। इसीलिए अन्त मे जाकर मार्क्स शासन-व्यवस्था के पक्ष म न
वे साम्यवादी शासन को भी अन्त मे अस्वीकार करते हैं और शासन मुक्त
की तरफदारी करते हैं। उसी व्यवस्था की ओर सकेत करते हुए एजल्स ने
है कि— वह युग आने वाला है जब राज्य सग्रहालया म रखी जाने योग्य
वस्तुआ— चर्खे या फामे-कुहाडे की भाति अतीत काल की वस्तु बन जा

पर आज तो वह स्थिति नहीं है। हो सकता है आदिकाल म जब जन
बहुत कम थी मनुष्या की आवश्यकताए भी कम थीं साधना की सुलभ

उनमे राग-द्वेष की बहुत तीव्रता नहीं थी। शायद उसी स्थिति का लक्षित कर कहा गया है—

न राज्य न राजासीत्, न दडो न च दाडिक ।
धर्मेणैव प्रजा सर्वा, रक्षिता स्म परस्परम्।।

उस समय न तो कोई राज्य था न राजा था न दड था न कोई दडित ही था। धर्म से भी सारी प्रजा परस्पर हिल-मिलकर रहती थी। पर आज के युग म ता शासन-व्यवस्था के बिना काम चलना असम्भव लगता ह। बल्कि भविष्य म भी एसी व्यवस्था तभी आ सकगी जब आबादी कम हागा तथा परस्पर के स्वार्थ टकराने की स्थिति नहीं हागी। आज ता मनुष्य अधिक स्वतन्त्र होने की अपक्षा शासन का पुर्जा मात्र बनता जा रहा है। एसी अवस्था मे शासक के बिना काम चल सक यह सम्भव प्रतीत नहीं हाता।

राज्य साध्य नही

यह ठीक है कि आदमी अपन पर अनुशासन स्थापित कर ल तो उसके लिए शास्ता की उपस्थिति विशेष प्रभावक न हो पर यह एक आध्यात्मिक दृष्टि है। कुछ लाग भले ही अपन पर एसा अनुशासन स्थापित कर ल पर पूरी मानव जाति आत्मानुशासन से भावित-प्रभावित बन जाए यह जरा दुरूह कल्पना लगती है।

फिर भी शासन का यह अर्थ ता नहीं होना चाहिए कि वह आदमी को कानून म जकड ले। अरस्तू ने कहा है— "राज्य का उद्देश्य मनुष्य क जीवन को उत्तम बनाना तथा पूर्ण रूप मे विकसित करना है। राज्य की सत्ता इसलिए है कि उसमे प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्रतापूर्वक अपना उच्चतम विकास कर सके। वह सबक सहयोग से सामान्य-हित के कार्य करने वाला समुदाय है।" इस अर्थ म राज्य की अपनी उपयोगिता से इन्कार नहीं किया जा सकता। पर इतना स्वीकार कर लेन के बाद भी यह तो नितात अपक्षित है कि शासन दड का कम-से-कम उपयोग करे। असल मे देखा जाए तो राज्य अपने आप म साध्य नहीं है अपितु व्यक्ति की अच्छाइया का उभारने का साधन मात्र ह। व्यक्ति राज्य क लिए नहीं होता अपितु राज्य व्यक्ति के लिए हाता है। राज्य का प्रधान कार्य व्यक्तियो का अधिकतम हित-सम्पादन करना है। जब भी राज्य साध्य बन जाता है तो ऊपरी तोर पर तो वह शोषण का कम-से-कम करके लाभ पहुचाता ह— शोषको को दडित कर शोषिता के हितो की रक्षा करता ह पर जब जीवन मे उसकी दखलदाजी बढती है तो वह आदमी क व्यक्तित्व को खडित कर मानव जाति को हानि पहुचाए बिना नहीं रह सकता। शोषण जितना कम हागा व्यक्ति उतना ही स्वतन्त्र हागा।

सर्वोपरि महत्त्व

अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी ने कहा है— "किमी भी समाज क निर्माण मे राजनीति और अर्थ का प्रमुख हाथ होता है। इसलिए हर व्यस्था म सबसे पहल इन्हीं दा की ओर ध्यान जाता है। इनम ही नय-नय प्रयाग हात हैं और इन्हीं के आधार पर सामाजिक विपमताआ और समस्याआ का सुलझाने का प्रयत्न होता है। अणुव्रत भी इनके महत्त्व को स्वीकारता है। किन्तु इनको सर्वोपरि महत्त्व नहीं दता। उसका एसा विश्वास हे कि आज तक व्यवस्थाआ म राजनीति और अर्थ-नीति मे सशोधन अवश्य हुए हैं किन्तु उनको सर्वोपरि महत्त्व दने स समस्याए दिन-प्रतिदिन उलझती ही जा रही हें। मनुष्य का जीवन अधिक-स-अधिक यात्रिक और मामाजिक नियत्रणमय हाता जा रहा है।"

सच्चा तत्र कौन?

सच्चा लोकतत्रीय शासन उसी देश मे हो सकता है जहा राज्य का हस्तक्षेप कम-से-कम हो प्रजा अपने आप अपने दायित्व का वहन कर। इसीलिए गाधीजी ने कहा था— "में राज्य-सत्ता म वृद्धि को बहुत भय की दृष्टि से देखता हू। क्योंकि ऊपरी तौर पर तो वह शोपण को कम-से-कम करके लाभ पहुचाती है परन्तु मनुष्यो के उस व्यक्तित्व को नष्ट करके वह मानव जाति को अधिकतम हानि पहुचाती ह, जो सब प्रकार की अवनति की जड हे।"

शासन तत्र के बारे म आजकल अनेक शब्दा का प्रयाग हाता है। साम्यवाद समाजवाद लोकतत्र प्रजातन गणतत्र अधिनायकवाद साम्राज्यवाद आदि-आदि। पर यदि हम इन्ह दा शब्दा म समेटना चाह तो व शब्द हागे— प्रजातत्र और राजतत्र। बाकी सारे शब्द इन्हीं की परिक्रमा करत प्रतीत होते हैं।

इतिहास के आदिकाल म सब लोग स्वतत्र रूप से रहते थे। पर जब जनमख्या बढने लगी तथा भोग-सामग्री अल्प होने लगी तो सुव्यवस्था के लिए राजा को एक माध्यम बनाया गया। उस समय राजा आत्मानुशासित था। शायद उसी को ध्यान म रखकर प्लेटो ने कहा था— शासक मे उच्चतम प्राकृतिक गुण होते ह और वह इनका अधिकतम उपयोग करता है। वह सत्य का अन्वेपक है और तब तक अपना प्रयत्न जारी रखता है जब तक उसे सच्चा ज्ञान प्राप्त नहीं हो जाता। उसमे तृष्णा तथा ऐन्द्रिक विपया को भोगने की लालसा नहीं हाती है। उसम सुन्दर आत्मा के सभी गुण होते हैं। वह मृत्यु स भी नहीं डरता। उस न्याय सौन्दर्य और सयम क विचारा का परम सत् के विचार का और मानवीय जीवन के अन्तिम प्रयोजन या कार्यों का ज्ञान होता है।

असल मे राजा होता ही— प्रकृति रजनात्— प्रजा की भलाई से था। कौटिल्य ने कहा है—

प्रजा सुखै सुख राजा, प्रजाना च हिते हितम्।
नात्यप्रिय सुख राजा, प्रजाना च सुखे सुखम्।

प्रजा का सुख ही राजा का सुख होता है। प्रजा का हित ही राजा का हित हाता है। राजा का अपना अलग काई सुख और हित नहीं होता।

इस दृष्टि से राजा की एक बडी प्रशस्त भूमिका क वर्णन से अनक ग्रन्थ भरे पड है। जिनम राजा के जीवन को सब प्रकार के व्यसनो से मुक्त तथा प्रजा के सवक क रूप म चित्रित किया गया है। पर धीर-धीर राजा का वह रूप धुधला होता गया। प्रारम्भ मे राजा जा अपन गुणा से आग आता था वह विना योग्यता के भी वश-परम्परा से राज्यारूढ हान लगा और राजतत्र के पति सर्वत्र एक घृणा का भाव जाग गया। हमारी इस शताब्दी म राजतत्र का छत्र प्राय खडित हो चुका है। सचमुच राजा शब्द इतिहास की चीज बनता जा रहा है।

शासन और रामराज्य

शासन व्यवस्था की दृष्टि से हमारे यहा रामराज्य शब्द का प्रयाग होता है। यद्यपि रामराज्य की चर्चा म राम एक व्यक्ति के रूप मे हमारे सामने आते हे। फिर भी प्रजातत्र क इस युग म भी यदि राम हमारी चेतना से निष्कासित नहीं हो पा रहे हैं तो इसका यही कारण है कि उनका राज्य एक कल्याणकारी राज्य था। उनके राज्यकाल मे प्रजा म अमन-चैन था। सब लोगा को अपनी योग्यता के अनुरूप काम मिलता था। लोग भय-मुक्त थे अपराध भी बहुत कम होते थे। यदि प्रजा म कोई अपराध हा भी जाता था तो राजा राम यह विचार करते थे कि इस दोष की कडी स राज्य तो जुडा हुआ नहीं है? असल मे देखा जाए तो रामराज्य का अर्थ ही है— आदर्श राज्य। भले ही उसम सत्ता-सूत्र सम्भालने वाला व्यक्ति एक ही था पर वह अध्यात्म स इतना भावित था कि उसका तत्र प्रजातत्र से कम नहीं लगता। उसमे अमीरी-गरीवी रग-जाति तथा मत-मतातरा के आधार पर कोई महल खडा नहीं हो पाता था।

निरकुश-शासक

आज हमार मना मे राजतत्र के प्रति जा विभीषिका अकित हे उसका कारण नादिरशाह औरगजेब जैसे कुछ निष्ठुर राज्यो के अकित क्रियाकलाप ही हैं। उनकी निरकुशता ने हमारे मना म इतनी घृणा भर दी है कि राजतत्र का नाम आते ही

कुशासन का एक रेखाचित्र हमारे सामने उभर आता है। पर यदि हम प्रजातत्र की भी बात कर तो क्या हिटलर तथा उसके सहयोगियो सडोल्क हेल्स आहकमान जैस व्यक्तियां का उदय भी क्या प्रजातत्र की ही दन नहीं थी? हिटलर की महत्त्वाकाक्षाओ ने न केवल हमारी दुनिया पर दूसरा महायुद्ध ही थोप दिया था अपितु लाखा-लाखा यहूदियो का जिस तरह क्रूर सहार किया था उसे सुनकर रोमाच हा आता है। गैस चेम्बरा म लाखों-लाखो निर्दोष व्यक्तियां को फूक दना निश्चय ही उच्चतम दर्जे की निर्दयता थी। इसीलिए जब कभी हम थाडी भी राजकीय यत्रणाआ से गुजरते हैं ता अपने भाप हमारे अधरा पर हिटलरशाही का नाम गूजने लगता हे। व्यक्ति जब पूर्णरूप स निरकुश हा जाता है ता उसस एस अनर्थ घटित होते ही हैं। असल म सवाल राजतत्र या प्रजातत्र का नहीं है। सवाल है योग्य शासक का। शासक यदि योग्य हे तो उसका राज्य रामराज्य बन जाता है और शासक जब निरकुश होता है ता उसका राज्य हिटलरशाही बन जाता है।

फिर भी इन दोना मे एक फर्क है। राजतत्र ने जबसे वश-परम्परा का रूप ल लिया ता उसम अयाग्य शासक भी सहज ही शास्ता बन जाता है। उसके परिणाम भी हमारे इतिहास ने अनेक बार भोगे हैं। प्रजातत्र मे शास्ता एक बार अयोग्य भी आ जाता हे तो बदला जा सकता है। उसके बदलने के कुछ उदाहरण ता एकतत्र मे भी उपलब्ध होते हैं। पर फिर भी यह सही है कि वश-परम्परा के साथ जुडकर राजतत्र कुछ विकृत होता है। इसीलिए आज क युग म साम्राज्य की बात नहीं की जा सकती। एक अणुव्रत विचार परिषद म अपन विचार प्रकट करते हुए कामरड राजेश्वर ने कहा था— "साम्राज्यवाद के दिन अब लद चुके। अब यह बात बिलकुल स्पष्ट हो चुकी है कि हमे साम्राज्यवाद नहीं चाहिए।" फिर भी यह सवाल तो है कि हम प्रजातन्त्र कैसा चाहिए। असल मे तानाशाही मानवाधिकारा की शत्रु होती है तथा लोकतन्त्र मानवाधिकारा की गारटी। तानाशाही की ताकत विध्वसक तथा दमनकारी शस्त्रो मे होती है लोकतन्त्र की ताकत जन-चेतना व सविधान म होती है। ससार भर म जन-चेतना का विस्तार तथा सविधानवादी राजनीति की स्थापना ही उसका लक्ष्य रहता है।

यद्यपि आज बहुत सारे देशा म कहन का तो प्रजातन्त्र है पर वहा प्रजातन्त्र के नाम पर सामान्य आदमी पर जा बीत रही है उससे कौन अनभिज्ञ है। प्रजातत्र के लागा म अपना तथा अपनी पार्टी के घर भरने के घृणित कारनामा स तग आकर लोग पुरान राजे-महाराजा तक का याद करन लग हैं। प्रजातन्त्र क लिए जो सत्ता-सघप हाता है उनक प्रति भी विचारवान व्यक्तिया म वितृष्णा पैदा हाने लगती है। प्रजातन्त्र म भी आखिर शक्ति ता सीमित हाथा म कन्द्रित रहता है। उन हाथा की

शिराओ मे बहने वाला खून यदि नीति-निर्मित नहीं होगा तो उससे होने वाले दुष्परिणाम भी कैसे बच सकते हैं। यद्यपि प्रजातन्त्र मे सत्ता पर वशाधिकार नहीं होता, यह उसकी राजतन्त्र से होने वाले दुष्परिणामो से एक बचाव की स्थिति है पर उसके लिए प्रजा की योग्यता भी एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा बनती है। यदि प्रजा सुशिक्षित सच्चरित्रवान न हो तो प्रजातन्त्र मे उभरने वाला नेतृत्व कल्याणकारी कैसे बन सकता है? इसीलिए प्रजातत्र मे भी चरित्र-सम्पन्नता एक अनिवार्य शर्त है। प्रजातन्त्र को हाकने वाले व्यक्तिया मे न्यायप्रियता नीति-कौशल, नैतिक आचरण, सेवाभाव तथा उदार दृष्टिकोण नितात अपेक्षित है। यहा आकर चरित्र एक बहुत व्यापक अर्थ ग्रहण कर लता है। अणुव्रत कोई राजनीति नहीं है। उसका शासन से तत्रात्मक कोई सम्बन्ध नहीं है पर फिर भी शासन को सन्मार्ग दिखाने की एक भूमिका बन सकती है।

कुछ विचारका ने व्यक्ति पर ज्यादा बल दिया उससे धर्म-अध्यात्म के विचार का विकास हुआ। कुछ विचारका ने समाज पर ज्यादा बल दिया उससे राजनीति के विचार का विकास हुआ। पर जब राजनीति आदमी पर सवार हो जाती है तो उससे व्यक्तिगत स्वतत्रता का दम घुटने लगता है। तथा जब व्यक्तिगत महत्त्वाकाक्षाए उग्र बनती हैं तो राजनीति की समन्वित विचार-व्यवस्था का विकास होता है। न तो व्यक्ति इतना ऊपर आ जाए कि उससे राजतन्त्र को फलने-फूलने का मौका मिले और न राजनीति इतनी ऊपर आ जाए कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का गला घुट जाए। अणुव्रत इसी विचार की व्याख्या-विश्लेपण है। अणुव्रत न तो आदमी को सन्त बनाना चाहता है और न साम्राज्यवादी या तानाशाह। अणुव्रत का मूल केन्द्र है व्यक्ति-चेतना की जागृति। इसीलिए यह ऐसी निरकुश प्रभुसत्ता का समर्थक नहीं है जिसके अनुसार व्यक्ति का प्रधान कर्त्तव्य आख मूदकर राज्य की आज्ञा पालन करना मात्र होता है। यह तो विशुद्ध नैतिक सत्ता पर आधारित जनता की प्रभुसत्ता में विश्वास करता है। यह नैतिकता का विरोध करने वाले सभी कानूना का प्रतिरोध करने का व्यक्ति को न केवल अधिकार ही प्रदान करता है अपितु उसका कर्त्तव्य समझता है।

विकेन्द्रित सत्ता

राजनीति क क्षेत्र मे शक्ति का केन्द्रीकरण ही सब बुराइया की जड है, इसीलिए उसका जितना विकेन्द्रीकरण हो सके उतना ही अच्छा है। पर इससे पहले कि सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो यह आवश्यक है कि लोक-चेतना जाग्रत हो उसे थामन वाले हाथ भी उतने ही मजबूत हो। इस दृष्टि से प्रजा जितनी जागृत होगी

वह शासन को भी उतना ही विकेन्द्रित करेगी। तव सत्ता केवल केन्द्रीय या प्रदेशा की राजधानिया म कुछ एक लोगा के हाथा म केन्द्रित न होकर असख्य गावा म असख्य लागा क हाथ म विखर जाएगी। उसके अन्तर्गत रहन वाला नागरिक एक-दूसरे को काटना या गिराना नहीं चाहेगा अपितु वह एक-दूसरे से सहयोग-सम्बन्ध बनाने म ज्यादा विश्वास करेगा। यही वह स्थिति है जो अणुव्रत के अन्तर्गत कुछ नियमा व्रता द्वारा परिभाषित हाती ह। अणुव्रत काई राज्य-व्यवस्था नहीं है, वह ता एक व्रत-व्यवस्था है। स्वेच्छा से स्वीकृत इन व्रता से सहजभाव से एक भूमिका का निर्माण हाता है जा शासन-व्यवस्था के लिए भी एक अनुकूलता का सर्जन करती है।

मध्यम मार्ग

निश्चय ही अणुव्रत व्यक्ति का प्रधानता देता है किन्तु इसका यह अर्थ नहीं हे कि वह बेन्थम मिप्र आदि पश्चिम विचारका के व्यक्तिवाद म विश्वास करता है या महावीर या बुद्ध के सुधारवाद म विश्वास करता है। व्यक्ति पर जार के दा प्रति-फल हमार सामन आत हैं। या ता उससे एकातिक स्वाथवाद पुष्ट हाता है या फिर एकातक आध्यात्मवाद। समाज धारणा क लिए इन दाना म स एक मध्यम-मार्ग निकालना आवश्यक है। अणुव्रत उसी भूमिका पर आधारित है।

उज्ज्वल चरित्र की अपेक्षा

शासन को स्वच्छ रखने के लिए उज्ज्वल चरित्र की नितात अपेक्षा है। यद्यपि चरित्र एक व्यापक शब्द है तथा इसम पूरे जीवन का समावेश हो जाता है पर चुनाव तो प्रजातत्र को सीधा प्रभावित करता है। इस दृष्टि से अणुव्रत में '*चुनाव के सम्बन्ध मे अनैतिक आचरण नहीं करूगा* यह नियम अपनी एक विशेष महत्ता रखता हे। यदि इस व्रत का सही तरीके से अनुगमन कर लिया जाए ता पूरे प्रजातत्र की छवि मे निखार आ सकता है। सच म देखा जाए तो प्रजातन्त्र की जन्मकुण्डली ही चुनाव है। चुनाव मे यदि पेसा चलता हो चुनाव म यदि धाँसपट्टी-हिसा चलती हो तो सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि उस वेदी पर प्रजातत्र की प्रतिमा नहीं बैठ सकती। अरस्तू न ठीक ही कहा ह— राजनीति म सामान्य जनता का निर्णय उसी प्रकार वैध ओर महत्त्वपूर्ण होता है जैसे सगीत की प्रतियागिताआ और सहभाजा म सगीत के कलाकार ओर खाना बनान वाले नहीं अपितु सगीत सुनन तथा भाग खान वाले। इस बरे है अपना निर्णय देने के लिए सर्वोत्तम समझ जाते हैं। इस दृष्टि स आम राय का जानन क लिए चुनाव एक कसाटी

है। उस पर जो शासक खरा उतर सकता है वही योग्य शासक हो सकता है। पर इसके साथ-साथ जन-चतना का जागना भी आवश्यक है। जहा लोक-चेतना जागृत होती है वहीं शासन-व्यवस्था स्वच्छ बन सकती है या बनी रह सकती है।

शिक्षा स्वास्थ्य भाजन और अभय या आश्वासनपूर्ण वातावरण जीवन की ये चार अनिवार्य आवश्यकताए हाती हैं। जो राज्य व्यक्ति को इतनी समुचित व्यवस्था दता है वह उन्नत समाज कहलाता है। जहा कडे अनुशासन ओर नियत्रण म से यह व्यवस्था आती है वहा इन अनिवार्यताआ की पूर्ति ता हो जाती हे किन्तु व्यक्ति की स्वतत्र चेतना कुठित हो जाती है। वह राज्य-क्षेत्र का एक पुर्जा मात्र बनकर रह जाता है।

शोषणविहीन समाज-रचना म व्यक्ति का आत्म-निर्भर बनाना भी आवश्यक होता है। क्याकि व्यक्तिगत स्वतत्रता जितनी अक्षुण्ण रहेगी राज्य की सुचारुता उतनी ही अधिक मात्रा म कायम रहेगी।

भले ही अन्त म पूरी दुनिया की एक सरकार बन जाए पर फिर भी भिन्न-भिन्न एतिहासिक तथा भागोलिक कारणा को लेकर जा राष्ट्रीय विभक्तिया यनी हुई हैं उन्ह ताडना कठिन लगता है। यदि यह सम्भव हुआ भी तो तभी हो सकेगा जब मनुष्य म विश्व-बन्धुत्व का भाव जाग जाए। उसका चरित्र इतना निर्मल हो जाए कि वह दुनिया के दूर देशा मे होने वाल अन्याय ओर उत्पीडन का प्रतिबिम्ब अपने हृदय म देख सके। अणुव्रत का मानना है कि यह स्थिति तभी आ सकती है जब पूरी दुनिया क लोग सयम की ऊचाई पर अवस्थित हो सके।

संयम ही समाधान है

म अभी-अभी एक भाई से बात कर रहा था। बातचीत का विषय था भारत सरकार द्वारा अकाल ग्रस्त राज्य सरकार को ५० कराड रुपयो की सहायता। मैंने कहा— "यदि सहायता का सदुपयाग हो जाए ता गरीब लागा का कितना भला हा सकता है?" भाई ने कहा— "आपकी बात तो ठीक है पर सरकार का तत्र ठीक हो तब न? सरकारी हिसाब से यदि ५१ प्रतिशत सहायता भी सही लोगो तक पहुच जाए ता बहुत बडी सफलता है। पर यहा तो ऊपर से नीचे तक एक जैसे लोग भरे पडे हैं। सारे इसी ताक मे रहते हैं कि हमे भी खाने का अवसर मिले। गरीब आदमी धरे रह जाएगे और वे भ्रष्ट सरकारी अफसर मजा उडाएगे। इस बीच यदि कोई एक-आध आदमी ईमानदार मिल भी जाएगा तो उसकी शामत आ जाएगी। उस पर झूठे आरोप लगाकर उसे तग किया जाएगा। उसे ऐसी जगह पर धकेल दिया जाएगा कि वह बेचारा जीवन भर पछताता रहेगा।"

मैंने कहा— "तो फिर ऐसी स्थिति म काग्रेस के कार्यकर्ताआ का कर्त्तव्य हा जाता है कि व मौके पर जाकर चौकसी कर कि भ्रष्टाचार न हो गरीब आदमी का सहयोग हो।"

भाई ने कहा— "पर काग्रेस मे भी ऐसे ही अवसरवादी लोग हैं जो ऐसे ही अवसरो को तलाशते रहते हैं। आज तो ऐसे ही लोग आगे आ रहे हैं जो पार्टी की सीढी पर चढकर कोटा-लाइसेंसेसा तक पहुचने का प्रयास करते हैं।"

मैंने कहा— "तो फिर विरोधी पार्टियो के लिए यह अवसर है कि वे सत्ता तथा सेवा के नाम पर होने वाली इस धाधली को खत्म करन के लिए आगे आकर अपनी-अपनी पार्टिया के लिए जनता का मन-मत जीते।"

भाई— "पर विरोधी पार्टिया मे भी यह रचनात्मक दृष्टि हो तब न? वे भी तो इस खैरात-समारोह मे भिखमगे की तरह मडरायगे।"

नेतिकता का अकाल

में सोचने लगा यह है आज देश की हालत। एक ओर जहा नेतिकता का

भयकर अकाल है वहा दूसरी ओर हम नैतिकता की बात करते हैं। क्या इसका कोई फलितार्थ होगा? फिर मैं सोचने लगता हू— अधेरा जब गहरा होता है तब ही तो प्रकाश की आवश्यकता होती है। जब दिन उग आता है तो चिराग की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। पर जब तक अधेरा रहता है तब तक एक चिराग भी बहुत बडी राहत बनता ह। सवाल यह नहीं है कि चिराग कितना तेजस्वी है, सवाल यह है कि कम से कम वह अधेरे म प्रकाश की याद तो दिलाता है।

इसका यह अर्थ नहीं है कि तज प्रकाश नहीं होना चाहिए। प्रकाश तेज होगा ता लाग उसस अपने पथ की सभाल करग। रास्ते मे यदि कोई ककर-पत्थर होगा या जगह ऊची-नीची हागी ता वे उससे बचने का प्रयास करगे। पर फिर भी प्रकाश चाह कितना ही क्यो न हो जाए, आखिर अधेरे का अत तो सूरज निकलने पर ही होगा। सूरज निकलने पर भी यदि कोई आदमी आख मींचकर चलने की कसम खाता है तो उसे प्रकाश बलात् मार्ग नहीं दिखा सकेगा।

अतिभाव की समस्या

अधरा आज हमारे युग को कई तरह से घेरे हुए है। कुछ लोगा का विचार है कि आदमी कवल अभाव म ही स्वभाव-भ्रष्ट होता है। इसलिए उनका विचार है कि गरीबी मिट जाए तो आदमी अपने आप प्रामाणिक बन जाए। पर वास्तव म क्या स्थिति ऐसी ही है? आज तो सुबह ही सुबह जब आदमी अखबार खोलकर पढता है तो उसमें किसी न किसी की हत्या का समाचार अवश्य मिलता है। जब भी हॉकर अखबार देने आता है तो पूछने का मन होता है कि भाई आज किस की हत्या का समाचार लेकर आए हो? केवल हत्या का ही क्या ऐसा दिन कम ही जाता होगा जब बलात्कार या छात्रो की हुल्लडबाजी या साम्प्रदायिक दगो आदि का समाचार नहीं आता हो। एसा नहीं है कि देश में अच्छाइया बिल्कुल ही नहीं है पर आज बुराइया जिस गति से बढ रही हैं उस गति से अच्छाइया बढ रही हैं या नहीं, यह एक चितन का विषय है। मनुष्य की विलासिता ने न केवल आर्थिक प्रतियोगिता का रूप ले लिया है अपितु प्रदूषण का खतरा भी भयकर आतक पैदा कर रहा है। पूरी दुनिया उससे त्रस्त है। प्रदूषण का एक सिरा विलासिता को छूता है तो दूसरा सिरा अणु-आयुधों के प्रयाग-परीक्षणा से जुडा हुआ है। पूरी दुनिया मे युद्ध के बादल मडरा रहे हैं, ऐसे क्षण मे अणुव्रत की अपनी एक अक्षम उपयोगिता है।

प्रभावी समाधान की आवश्यकता

यह सही है कि समस्याए जितनी गहरी हें उनके समाधानो को भी उतना ही

प्रभावी होना चाहिए। इस दृष्टि से अणुव्रत को भी अपने आपको सन्नद्ध-सक्रिय होना है। दुनिया म अवसरा का कोई पार नहीं है। आवश्यकता उन्ह पकड पाने की है। जिन लोगा की चेतना सुपुप्त है, उनके लिए सारे संकेत निरर्थक हैं। जो लाग जागते हैं उनके लिए ही सकेता की सार्थकता है। आज जो समस्याए हमार सामन हैं उनका समाधान सयम मे ही है। भले ही लोगा को सयम की बात अच्छी नहीं लगती पर इसके बिना समाधान भी सभव नहीं है।

राजनीतिक स्वतंत्रता से ऊपर

स्वतत्रता एक बहुत प्यारा शब्द है। दुनिया का कोई भी आदमी परतत्र नहीं रहना चाहता। आदमी क्या कोई भी प्राणी परतत्र नहीं रहना चाहता। पर साथ ही साथ स्वतत्रता की अपनी एक कीमत होती है। जब तक आदमी वह कीमत नहीं चुकाता तब तक वही सही मान म स्वतत्र नहीं हो सकता तथा स्वतत्र नहीं रह सकता।

आज से ५० वर्षों पूर्व भारत ने स्वतत्रता प्राप्त की थी। १५ अगस्त १९४८ का वह दिन देश के लिए कितना आनन्द उल्लास का क्षण था। पूरे देश मे खुशिया मनाई गई थीं। पर लगता है हमारे लोगो ने स्वतत्रता को केवल राजनैतिक रूप मे ही समझा है। इसलिए ५० वर्ष बाद भी देश आजादी का सही स्वाद नहीं ले पाया है। इसमे कोई सन्देह नहीं कि आजादी के बाद देश ने अनेक क्षेत्रा म प्रगति की है। देशवासी आज अनेक दृष्टिया से खुशहाल हैं। पर क्या अभी तक हमारे लोगो का सामाजिक स्तर ऊचा उठा है? क्या लोगो की स्वार्थवृत्ति कम हुई है? क्या वे छोटे-छोटे घेरा से ऊपर उठकर बड परिपेक्ष्य म देखने के अभ्यस्त बने हैं? जब तक आजादी को राजनीतिक महत्त्व से ऊपर उठकर उसके सामाजिक, आध्यात्मिक अर्थ को समझने का प्रयास नहीं किया जाएगा तब तक कोरी राजनीति आजादी से देश को खुशहाल नहीं बनाया जा सकता। आवश्यकता है इस दृष्टि से कुछ मुद्दा पर विचार किया जाए। व मुद्दे हैं—

आत्म-सयम

आजादी का यह अर्थ तो अवश्य है कि आदमी स्वतत्रता से जीए। पर उसकी स्वतत्रता दूसरा के लिए प्रतिबन्धक बनती है ता उसे स्वतत्र नहीं कहा जा सकता। ऐसे ता एक आदमी सडक के बीचाबीच सोने के लिए स्वतत्र हैं तो दूसरा आदमी उसकी छाती से ट्रक गुजारने के लिए भी स्वतत्र हो जाएगा। निश्चय ही ऐसी स्थिति मे जो अव्यवस्था पैदा हागी वह भयकर परतत्रता को जन्म देने वाली होगी। स्वतत्र आदमी वह नहीं हे जा मनचाह जैसा करे अपितु वह हे जो पर-पाडा का

भी समझे। दूसरा की पीडा को समझना ही अपनी पीडा को समझना है। वैसा आदमी उच्छृखल नहीं हागा अपितु अपन आप पर सयम स्थापित करने वाला होगा। हम देखते हैं कि जो आदमी खान की स्वतत्रता का अतिरिक्त प्रयोग करते हैं वे बीमार पड जाते हैं। यह स्वतत्रता की आत्मगत परिसीमा है। इसी प्रकार जब व्यक्ति अपन लिए बहुत ज्यादा सग्रह कर लेता है तो वह सामाजिक व्यवस्था को भी भग कर देता हे। एक व्यक्ति ज्यादा सग्रह करगा ता दूसरा व्यक्ति निश्चित रूप से भूखा मरेगा ही। यहीं से नि स्वार्थ भाव की शुरुआत हाती है। जा व्यक्ति आत्म सयत होता है वही क्षुद्र स्वार्थों का परित्याग कर उच्च भूमिका पर आरूढ हो सकता हे। इसलिए स्वतत्रता क सही उपयाग क लिए आत्म-सयम की अनिवार्यता का भी स्वीकार करना होगा। गाधीजी ने ठीक ही कहा था—`मरी स्वतत्रता मेरे घर की चारदीवारी तक सीमित है। उसके आगे मरे पडोसी की स्वतत्रता की सीमा शुरू हो जाती है।

स्वावलम्बन

जो व्यक्ति स्वतत्र रहना चाहता है। उसे स्वावलम्बन का पाठ भी पढना होगा। स्वावलम्बन का यह अर्थ नहीं है कि आदमी सारा काम स्वय ही करे, पर जो दूसरा के श्रम का शाषण करता है वह अपने लिए अधिक सुविधाए जुटाने का प्रयास करता है वह समाज व्यवस्था को रुग्ण किए बिना नहीं रह सकता। सच ता यह है कि शरीर क लिए भी श्रम की आवश्यकता है। जो आदमी उस श्रम-सीमा को नहीं समझता वह अपना ही शत्रु है। शरीर की ही तरह सामाजिक स्वास्थ्य के लिए भी श्रम की अपक्षा से इकार नहीं किया जा सकता। उसी स सामाजिक न्याय की प्रतिष्ठा हाती है।

अपना निर्णय

जो आदमी किसी निर्णय के लिए परापेक्षी रहेगा वह स्वतत्रता का पुजारी नहीं बन सकता। सामने वाला व्यक्ति मेर साथ जेसा व्यवहार करता है उसी आधार पर स्वतत्र व्यक्ति अपने कर्तव्य का निर्णय करता हे तो उसका निर्णय स्वतत्र कहा हुआ? सामने वाले व्यक्ति ने गाली दी और स्वतत्र व्यक्ति ने भी गाली दी तो वह स्वतत्र कहा रहा? वह तो दूसरा से बधा हुआ हे। उसका निर्णय अपना निर्णय नहीं हो सकता। यह तो दूसरो की दासता है। सामने वाला व्यक्ति तो अपनी वृत्तिया से दासता से सगसित है, इसलिए वह बेमतलब ही पत्थर फेक सकता है। वह वास्तव मे स्वतत्र है ही नहीं। पर जा व्यक्ति अपने आपको स्वतत्र समझता है उसका निर्णय

भी सामने वाले व्यक्ति के क्रिया-कलाप पर आधारित है तो वह स्वतत्र कैसे रह सकता है। निश्चय ही स्वतत्र व्यक्ति अपन निर्णयो का दूसरो से प्रभावित नहीं होने दे सकता। वह प्रतिक्रिया मे नहीं जी सकता। वह तो अपनी स्वतत्र सहज क्रिया म जीने वाला ही होगा। जिन लोगा का अपना निर्णय नहीं होता वे या तो अहभाव से ग्रसित हो जाते है या हीन भाव से ग्रसित हो जाते हैं। दोना ही प्रकार के लाग न अपने लिए कल्याणकारी होते हैं और न राष्ट्र के लिए ही कल्याणकारी होत हैं।

निर्भयता

अभयता स्वतत्र व्यक्ति का बहुत बडा गुण होता है। जा व्यक्ति डरता हे वह न ता स्वतत्र हो सकता है और न स्वतत्रता की रक्षा कर सकता है। जो लोग भय सग्रस्त होते हैं। वे ही दूसरा की चमचागिरी करते हैं। इसी से पार्टी तत्र जन्मता है। अभय का यह अर्थ नहीं है कि पार्टी से बगावत कर। पर जो दूसरो के डर से सत्य का प्रकट नहीं करता वह न पार्टी का भला करता है ओर न देश और अपना ही भला करता है। जो व्यक्ति दूसरा के भय से सत्य को प्रकट नहीं कर पाता वह निश्चय ही दूसरो की दासता का मसाला बन जाता ह।

समझे। दूसरा की पीडा को समझना ही अपनी पीडा को समझना है। वैसा
दमी उच्छृखल नहीं हागा अपितु अपने आप पर सयम स्थापित करने वाला
गा। हम दखते हैं कि जा आदमी खाने की स्वतत्रता का अतिरिक्त प्रयोग करते
व बीमार पड जाते हैं। यह स्वतत्रता की आत्मगत परिसीमा है। इसी प्रकार जब
क्ति अपने लिए बहुत ज्यादा सग्रह कर लता है तो वह सामाजिक व्यवस्था का
भग कर दता है। एक व्यक्ति ज्यादा सग्रह करेगा ता दूसरा व्यक्ति निश्चित रूप
भूखा मरेगा ही। यहीं से नि स्वार्थ भाव की शुरुआत होती है। जो व्यक्ति आत्म
यत हाता है वही क्षुद्र स्वार्थों का परित्याग कर उच्च भूमिका पर आरूढ हो सकता
। इसलिए स्वतत्रता के सही उपयोग क लिए आत्म-सयम की अनिवार्यता को
स्वीकार करना होगा। गाधीजी ने ठीक ही कहा था—_मेरी स्वतत्रता मरे घर की
रदीवारी तक सीमित है। उसके आग मरे पडोसी की स्वतत्रता की सीमा शुरू हो
ती है।

ावलम्बन

जो व्यक्ति स्वतत्र रहना चाहता है। उसे स्वावलम्बन का पाठ भी पढना होगा।
ावलम्बन का यह अर्थ नहीं है कि आदमी सारा काम स्वय ही करे पर जो दूसरा
श्रम का शोषण करता हे वह अपने लिए अधिक सुविधाए जुटाने का प्रयास
रता है वह समाज व्यवस्था को रुग्ण किए बिना नहीं रह सकता। सच तो यह
कि शरीर के लिए *भी श्रम* की आवश्यकता है। जो आदमी उस *श्रम-सीमा* को
ीं समझता वह अपना ही शत्रु है। शरीर की ही तरह सामाजिक स्वास्थ्य के लिए
श्रम की अपक्षा से इकार नहीं किया जा सकता। उसी से सामाजिक न्याय की
तिष्ठा होती हे।

पना निर्णय

जो आदमी किसी निर्णय के लिए परापेक्षी रहेगा वह स्वतत्रता का पुजारी
ीं बन सकता। *सामने वाला व्यक्ति मेरे साथ जैसा व्यवहार करता है उसी आधार*
: स्वतत्र व्यक्ति अपने कर्त्तव्य का निर्णय करता है तो उसका निर्णय स्वतत्र कहा
आ? सामने वाले व्यक्ति ने गाली दी ओर स्वतत्र व्यक्ति ने भी गाली दी तो वह
ततत्र कहा रहा? वह तो दूसरा से बधा हुआ है। उसका निर्णय अपना निर्णय नहीं
सकता। यह तो दूसरा की दासता है। सामने वाला व्यक्ति तो अपनी वृत्तियो से
सता से सग्रसित हे इसलिए वह बेमतलब ही पत्थर फेक सकता है। वह वास्तव
स्वतत्र है ही नहीं। पर जो व्यक्ति अपने आपको स्वतत्र समझता है उसका निर्णय

भी सामन वाले व्यक्ति के क्रिया-कलाप पर आधारित है ता वह स्वतत्र कैसे रह सकता है। निश्चय ही स्वतत्र व्यक्ति अपने निर्णयो का दूसरो से प्रभावित नहीं होन दे मकता। वह प्रतिक्रिया मे नहीं जी सकता। वह तो अपनी स्वतत्र सहज क्रिया मे जीने वाला ही होगा। जिन लागा का अपना निर्णय नहीं होता वे या ता अहभाव से ग्रसित हो जात है या हीन भाव से ग्रसित हा जात ह। दोना ही प्रकार के लोग न अपने लिए कल्याणकारी होते हैं और न राष्ट्र के लिए ही कल्याणकारी होते हैं।

निर्भयता

अभयता स्वतत्र व्यक्ति का बहुत बडा गुण हाता है। जो व्यक्ति डरता है वह न ता म्वतत्र हो सकता है और न स्वतत्रता की रक्षा कर सकता है। जो लाग भय सग्रस्त होते हैं। वे ही दूसरा की चमचागिरी करते हैं। इसी से पार्टी तत्र जन्मता है। अभय का यह अर्थ नहीं है कि पार्टी से ऽगावत कर। पर जो दूसरा के डर से सत्य को प्रकट नहीं करता वह न पार्टी का भला करता है और न देश और अपना ही भला करता है। जो व्यक्ति दूसरो के भय से सत्य को प्रकट नहीं कर पाता वह निश्चय ही दूसरा की दासता का मसाला बन जाता है।

मानवता का आन्दोलन

भले ही पेरिस म सीन नदी के किनारे स्थित पिजडे मे बन्द माहम्मद मुशी के नृत्य करते भालू मुन्ना का इसलिए छीन लिया गया हो कि वह पशुआ पर *अत्याचार* है पर क्या फ्रास अपने सहारक अणु अस्त्रा का समाप्त कर सकता है? भल ही वॉलस्ट्रीट जर्मन मे छपी खबर के अनुसार न्यूजर्सी के वकील एडवर्ड कपूर मेन ने अपन कुत्ते के इलाज के लिए एक लाख डॉलर खर्च कर दिए हा पर दुनिया मे आज जो करोडा आदमी भूख से बिलबिला रहे हैं युद्ध की तैयारियो म व्यस्त लोगा का वह क्या नहीं दिखाई देता है।

अखड मानव

फिर भी कुछ सभ्य लोगा द्वारा सकीर्ण राष्ट्रवाद को भेद कर युद्ध के विरोध मे स्थान-स्थान पर जोरदार आवाज उठ रही है। बर्टेड रसेल ने नाभिकीय युद्ध का विरोध करते हुए कहा था-- "नाभिकीय युद्ध का असर तो सपूर्ण मानव जाति पर पडगा। इसीलिए इस सदर्भ मे समूची मानव जाति के हित एक-से हैं।" बडे पैमाने पर उद्जन बम से हाने वाले विनाश को रोकने के इच्छुक लाग न किसी राष्ट्र से जुडे हैं न किसी वर्ग वाद या महाद्वीप के हित से। नाभिकीय अस्त्रो से उत्पन्न नयी समस्याआ पर यदि सही तरीके से विचार करना है तो हम एकदम अलग नजरिया अपनाना हागा। यह एक वैसा ही खतरा है जैसा कि किसी नयी किस्म की महामारी से पैदा हो जाता है।

मान लीजिए कि बर्लिन के कुत्ता म अचानक पागलपन की बीमारी फैल जाए। एसी हालत में क्या पूर्व और पश्चिम बर्लिन के लोग मिलकर इससे नहीं निपटग। मैं यह नहीं समझता कि काई ऐसे मौके पर यह कहेगा कि साहब! हम कुत्ता का सिर्फ इसलिए खुला छोड दगे कि वे हम कम और हमार शत्रुआ को अधिक काटग। आर यदि उन्ह खुला नहीं छोडना है तो उनक मुह पर तुरन्त खुल सकन वाली जाली लगा दी जाए ताकि जिस वक्त दुश्मन अपने कुत्ता का खोल उसे जवाब दिया जा सके। क्या पूर्व और पश्चिम बर्लिन के जिम्मेदार

अधिकारी यह बयान देगे कि दूसरी ओर के लोगो पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि वे अपने पागल कुत्तो को जान से मार देगे इसलिए हम भी प्रतिरोध स्वरूप पागल कुत्तो को बनाए रखना चाहिए। यह निहायत बेहूदी और अजीब किस्म की बात है कि गुटबाजी की राजनीति मे पागल कुत्तो को निर्णायक शक्ति मान लिया जाए।

एक और उदाहरण देखे। चौदहवीं शताब्दी मे पूर्वी गोलार्ध मे कालाजर फैला। पश्चिमी यूरोप मे करीब-करीब आधी जनसख्या कम हो गई। इतना ही विनाश पूर्वी यूरोप और एशिया मे हुआ। तब उस महामारी से लडने की गहरी जानकारी थी ही नहीं। आज अगर ऐसा हो जाता है तो सभी सभ्य राष्ट्रो मे यह समझ एक साथ आएगी कि इस समस्या से एकजुट होकर लडा जाए। तब कोई यह नहीं कहेगा कि इस महामारी से हमारे दुश्मन का ज्यादा नुकसान होगा और अगर कोई कहेगा भी तो उसे देवता नहीं राक्षस ही कहा जाएगा। इसीलिए मुझे भरोसा है कि जिस दृष्टिकोण से मैं युद्ध का विरोध करता हू उसे दोनो पक्षो के लोग समान रूप से स्वीकार करेगे।

गाधीजी ने तो बहुत पहले ही कह दिया था— "एक बात साफ है कि वर्तमान प्रतियोगिता इसी तरह चालू रही तो आगामी इतिहास मे एक दिन खूनखराबा हुए बिना नहीं रहेगा। उस कत्लेआम के अत मे कोई विजेता पीछे बच भी जाएगा तो उसे वह जीत नरक के समान प्रतीत होगी।"

सचमुच युद्ध एक नृशसता तो है ही और उससे अनेक लोग दु खित होते ही हैं पर वह मनुष्य के अपने लिए भी श्रेयस्कर नहीं है। इसीलिए अणुव्रत ऐसी राष्ट्रीयता मे विश्वास नहीं करता जो युद्ध को भडकाती है। किसी पर आक्रमण नहीं करना, आक्रामक नीति का समर्थन नहीं करना एव विश्व-शाति के लिए निशस्त्रीकरण के लिए प्रयत्न करना अणुव्रत के लिए सहज प्राप्त है।

जाति-भेद— रग-भेद से ऊपर

मानवता की भावना के अनुरूप अणुव्रत की समाज-व्यवस्था मे जाति-भेद रग-भेद आदि को भी कोई स्थान नहीं है। मानवीय भाव के अभाव मे ही अफ्रीका मे १६ प्रतिशत गोरे ८४ प्रतिशत काले लोगो पर मनमाना अत्याचार कर रहे है। अस्पृश्यता भी समाज-व्यवस्था के लिए एक भयकर कोढ है। हो सकता है कार्मिक कौशल की दृष्टि से कभी वर्ण-व्यवस्था को सामाजिक मान्यता दी गई हो पर आज तो उसने जैसा जातीय रूप धारण कर लिया है उससे समाज का एक बडा भाग रुग्ण हो गया है। जाति-विशेष के लोगो के साथ पशुओ से भी बुरा व्यवहार करना एक

क्रूर मजाक है अह भाव का प्रदशन है। मच म दखा जाए तो मनुष्य जाति एक है। जैसा रक्त सवर्ण आदमी की नसा म बहता है वैसा ही रक्त एक असवर्ण व्यक्ति की नसा म बहता है। यह ठीक है कि स्वच्छता-अस्वच्छता म एक फासला है पर जब वह जातीय रूप ल लेता है तो सामाजिक रुग्णता पैदा होती है। अस्पृश्यता का भाव मनुष्य जाति के सिर पर कलक का टीका है। असल म ऐसे लोगा से घृणा की नहीं सहानुभूति की आवश्यकता है। वही समाज आगे बढ सकता है जा समता पर अधिष्ठित हो।

यद्यपि आज सयुक्त राष्ट्र सघ, इन्टरनशनल लीग फोर ह्यमेन राईट्स इटरनेशनल कमीशन इटरनेशनल कमीशन फोर ज्यूरिष्ट्स एमनष्टी इटरनैशनल जैसी अनक मानव कल्याणकारी सस्थाए उदय म आई हैं। पर इसके बावजूद आदमी इतना पागल हो गया है कि वह अनेक भेदभावा क भवर म फसा हुआ है।

आदमी अकेला नहीं

व्यक्ति के अस्तित्व से इकार नहीं किया जा सकता। वह इस दुनिया की एक इकाई है। पर यह भी सच है कि इस दुनिया म वह अकेला नहीं है। भले ही अपने केन्द्र मे वह अकेला है पर उसकी परिधि म सारा विश्व है। यह सम्बन्ध ही व्यक्ति और विश्व को जोडता है। व्यक्ति का व्यक्तित्व तो कायम रहे पर साथ म विश्व भी क्षत-विक्षत नहीं होना चाहिए। यह विश्व की सुरक्षा का ही सवाल नहीं है व्यक्ति के अपने व्यक्तित्व की सरक्षा का भी सवाल है। विश्व सरक्षित रहेगा तभी व्यक्ति सरक्षित रहेगा। अद्वैत की यह एक पहली व्याख्या है— मनुष्य जब सबको अपने साथ इतना एकात्म कर देता है कि किसी को दूसरा समझा ही नहीं जाता तब पूरा विश्व अद्वैत की सीमा मे घिर आता है। ऐसे अद्वैत के लिए समाज और राष्ट्र की सीमाए अपने आप सकीर्ण बन जाती हैं। अत उसमे जीने वाला अपने आप विश्व-मानव बन जाता है। वह अपने पर स्वय कुछ ऐसी सीमाए बना लेगा कि वहा व्यक्ति और समाज मे विसगति नहीं रहेगी। अतिम सीमा मे जाकर यह अद्वेत सतत्व का अपने पर ओढ लेता है। वह फिर समाज का सदस्य नहीं रहता। सामान्य आदमी से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती। ऐसी अवस्था मे एक दूसरी रेखा आती है जो व्यक्ति और समाज म सतुलन स्थापित करती है। आर्थर मार्गेन न उसी रखा की आर इशारा करते हुए कहा है— ''वास्तव मे व्यक्ति का अपना अलग जीवन और व्यक्तित्व हाता है। समाज को उसे मानकर चलने की आवश्यकता है। जीवन की गुणवत्ता बढाने के लिए समाज मे छोट-छोटे समूहा की विशप भूमिका रही है। छोटे समूहो को साथ रखकर काम करने से निकटता बढती है। परस्पर विश्वास

भावना दायित्व तथा एक-दूसरे के सुख-दुख मे भागीदार बनने का मौका मिलता है। उससे एकत्व बढता है। उससे व्यक्तियो मे एक सामूहिकता का उदय होता है।

इस स्थिति मे निरपवाद मार्ग है प्रशस्त साध्य और साधन, अर्थात् हिसा के अल्पीकरण का। जिस समाज म हिसा की अल्पता की ओर गति हाती रहेगी उस समाज म दुर्भावना और दुश्चिन्ताए स्वय क्षीण होती जाएगी। क्रूर व्यवहार और प्राणिवध जैसी घटनाओं को प्रोत्साहन नहीं मिलेगा। अपने अह-पोषण के लिए दूसर के अस्तित्व को खतरा उपस्थित करने का मनाभाव नहीं रहेगा तथा न रहेगा महानवस्थान जैसा अस्पृहणीय विचार। अणुव्रत हिसा का जीवन का आधार कभी नहीं मान सकता और न ऐसा मानने से सामाजिक जीवन को आलम्बन मिल सकता है। समता मैत्री प्रेम सौहार्द और सामजस्य— ये सब हिसा के अल्पतर और अल्पतम हान से ही घटित हा सकते हैं।

स्त्रीत्व को सम्मान

मानवीय समाज व्यवस्था के बारे म विचार करते समय समाज मे स्त्री की भूमिका पर विचार करना भी सहज प्राप्त है। क्याकि जैसे पुरुष समाज का एक घटक है वैसे ही स्त्री भी समाज का उतना ही प्रमुख अग है। आदमी की ही तरह उसका अपना स्वतत्र व्यक्तित्व है। यद्यपि शरीर-रचना की दृष्टि से स्त्री और पुरुष मे थोडा अतर है तथा वह अतर उनके कार्य-क्षेत्र को भी प्रभावित करता है, पर इसका यह अर्थ नहीं हो सकता कि स्त्रिया का समाज म दूसरे दर्जे का अस्तित्व हा। भिन्न देश काला म स्त्रियों के अस्तित्व की स्वीकृति भिन्न-भिन्न रूप से रही है पर इसम काई सदेह नहीं कि अधिकाश दुनिया म स्त्री को समाज मे पुरुष के बराबर स्थान नहीं मिला है। प्रारम्भ से ही इस व्यवस्था के प्रति अनेक तर्क दिए जाते रहे हैं पर आज नारी-मुक्ति आदोलन के रूप मे इस दिशा मे एक सजीव आदोलन खडा हो चुका है। स्त्रिया के अधिकार की बात करते हुए अभी-अभी विश्वनारी सम्मेलन मे अपने विचार प्रकट करते हुए कारीन रेगन ने कहा है— "नारीवाद एक दर्शन है, एक विश्वास है कि नारी भी उतनी ही क्षमतावान् है जितना एक पुरुष। इसलिए बराबर अवसर मिलने पर वह अपने को पुरुष के बराबर साबित कर सकती है।

इसमें कोई सदेह नहीं कि इस आदोलन के चलते स्त्रियो की आवाज थोडी स्पष्ट हुई है। कुछ क्षेत्रा मे खासकर शिक्षा के क्षेत्र मे उन्होने अपने विकास को समय के फलक पर उट्टकित भी किया है। १९५० म जहा स्कूला-कॉलेजो म ९५००००००० लडकियों के नाम लिखाए गये वहा १९८५ मे वह सख्या

४१०००००० हो गई हैं। अन्य क्षेत्रा म भी स्त्रिया न अपनी प्रगति का प्रतिबिम्बित किया है। पर फिर भी जैसाकि सयुक्त राष्ट्रसघ के महासचिव श्री पराज डी कूलर ने अपना निष्कर्ष प्रस्तुत किया है— "यद्यपि इन १० वर्षों म स्त्रिया को पुरुषा क बराबर अधिकार दन क लिए कागजी कार्रवाइया की गई हैं ९० प्रतिशत देशा न बराबर काम के लिए बराबर वेतन का कानूनी प्रावधान स्वीकार कर लिया है मगर हकीकत इसस अभी कासा दूर है। वर्तमान युग म स्त्री की प्रतिष्ठा क लिए एक प्रश्न-चिह्न बना हुआ है। इसीलिए मिस्र की महिला नष्ट मारीन रगन ने ता यहा तक कह दिया है कि— "स्वग म भी पुरुषा का हमस ज्यादा अधिकार हाग और हम वहा जाकर भी अपनी लडाई लडनी हागी।" अब इसम कहा तक सफलता मिलती है यह तो भविष्य के गर्भ म छिपी हुए बात है, पर इसम काई सदह नहीं कि इसका समाज-व्यवस्था पर भी निश्चित प्रभाव पडगा। आज भी कई दशा म इस प्रभाव को पढा जा सकता है। इस समस्या क अनक पहलू हैं। विकास की जिन धारणाआ का आज आचरित किया जा रहा हैं उसस थाडी अव्यवस्था भी खडी हुई है। असल म नारीवाद का यह अर्थ ता नहीं हाना चाहिए कि वह हर क्षेत्र म पुरुष जैसा ही आचरण कर।

इससे पूरी मानवीय व्यवस्था म व्यतिक्रम पैदा हा सकता है। मनुष्येतर प्राणिया म भी नर और मादा के भेद का स्पष्ट दखा जा सकता है। नर का भी अपना महत्त्व है मादा का भी अपना महत्त्व है फिर भी उनकी प्राकृतिक स्वभावगत कुछ सीमाए भी हैं। मानव-समाज म भी यह तो उचित नहीं कहा जा सकता कि स्त्री को आदमी के पैर की जूती समझी जाए, पर यह भी क्या उचित हे कि वह हर बात म आदमी का अनुकरण कर। आत्म-सामर्थ्य की दृष्टि से स्त्री और पुरुष मे काई भेद नहीं माना जाना चाहिए। लेकिन कार्यक्षेत्र की विशेष क्षमताआ को देखत हुए स्त्री-पुरुष के भेद को पाटे जान का आग्रह भी नहीं हाना चाहिए। असल म स्त्री अपने व्यक्तित्व का अपने ढग से विकास करे और समाज मे उसको बराबर सम्मान प्राप्त हो यह सामाजिक व्यवस्था स्थापित हो यह भी जरूरी ह जब तक स्त्री को हय दृष्टि से देखा जाएगा तब तक दहेज की समस्या का नहीं मिटाया जा सकता।

समाज व्यवस्था की दृष्टि से विवाह सस्था भी एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा रही है। एक ओर वह जातिवाद स जुडी ह तो दूसरी ओर दहज आदि समस्याओ से भी बहुत तीव्रता स जकडी हुई हे। अणुव्रत से फलित होने वाली समाज-व्यवस्था ता सयम की भूमिका पर अवस्थित है। अत उसक सामने य समस्याए अपने आप निरस्त हो जाएगी। यद्यपि समाज की व्यवस्थाए समय-समय पर बदलती रहती हैं अत उन पर उचित-अनुचित का सीमाकन समय-सापेक्ष ह। फिर भी नतिकता

का एक सूत्र उन्ह सतत् जोडे रखता है। वह उसकी सार्वकालिकता का मूल्यवान पहलू है।

शुद्ध अह का विकास

अह आदमी क जीने की सबस बडी प्रेरणा है। पर साथ-ही-साथ सभी समस्याए भी वहीं स जुडी होती हैं। इसी से जाति वर्ण सम्प्रदाय देश और भाषा का भेदभाव खडा होता है। यो दीखने म राष्ट्रवाद का नारा बडा सुहावना लगता है पर वास्तव म बहुत सारी समस्याओ की जड भी यही है। दुनिया म आज जो अलगाव की दीवार खडी हैं व सारी इसी नार की ध्वनि स जन्म लेती हैं। असल म आदमी म अह अनेक तरह स फूटता है। युद्ध भी इसी अह की देन है। यो लडना आदमी का स्वभाव है। यद्यपि इसे सहज स्वभाव तो नहीं कहा जा सकता पर फिर भी यह आदमी का विकृत स्वभाव तो ह ही। सचमुच आदमी का लडने म बडा रस आता है। वह किसी भी बहान लडाई खाज हो लता है। आदमी की इस सहजता को दखकर ही श्रीकृष्ण ने गीता म 'तस्मात् युद्धस्व कौन्तेय'। कहकर अर्जुन को युद्ध क लिए उकसाया था। भगवान महावीर न भी कहा है— 'जुज्झारिय खलु दुल्लह' योद्धा बहुत दुर्लभ है। इसस पता लगता है कि युद्ध अह की एक अनिवार्य प्रेरणा है। हमार भौतिकवादी लाग युद्ध को भातिक विकास क लिए आवश्यक मानत हैं। अनक लागो न इस दृष्टि स अनक सजीले तर्क प्रस्तुत किए हैं। भौतिकवादी जहा इस दूसरो क साथ जोडत हैं वहा अध्यात्मवादी इसे अपन साथ जाडकर आत्मयुद्ध का आह्वान करत हैं। महावीर ने कहा है— अप्पणा चेव जुज्झाहि कि त जुज्झेण वज्झओ— अपने साथ लडाई करो दूसरो के साथ लडना व्यर्थ है। उन्हाने कहा है— "जो सहस्स सहस्साण सगामे दुज्जए जिणे एग जिणेज्ज अप्पाण एस मे परमा जओ।"

युद्ध क मैदान म लाखो आदमियो पर विजय प्राप्त कर लेने की अपेक्षा अपने आप पर विजय पाना बडी बात ह। इस सदर्भ मे अह की प्ररणा का स्रोत भी बदल जाता है। बाहरी युद्ध म जहा आदमी अपने विकृत अह का पोषण करता है वहा आत्मिक युद्ध म वह अपने अह को पवित्र बनाता है। अध्यात्म का अर्थ है आत्म-प्रवेश अतर की यात्रा। यहा अह समाप्त नहीं होता है अपितु पवित्र बन जाता है। इसस व्यक्ति म सयम का भाव जागता है। इसीलिए अणुव्रत भी आदमी को आत्म-सयम की प्रेरणा दता है। इसस बाहरी युद्ध तो निरस्त होता ही है शेष बीमारिया भी नि शेष हो जाती ह। भले ही कोई आदमी अध्यात्म म विश्वास करे या न करे पर अपनी समस्याओ के समाधान के लिए उस एक सीमा तक सयम म तो विश्वास करना ही पडगा।

धर्म का रथ राजनीति की राहो पर

भारत एक धर्म-निरपेक्ष गणराज्य है। धर्म-निरपेक्षता का अर्थ है कि इस देश की व्यवस्था के संचालन में किसी धर्म-विशेष का कोई हाथ नहीं रहेगा। वास्तव में धर्म-निरपेक्षता के स्थान पर यदि सम्प्रदाय-निरपेक्ष शब्द रहता तो ज्यादा सार्थक होता। क्योंकि धर्म के बिना कोई राष्ट्र चल नहीं सकता। भारत की राष्ट्रीय मुहर पर भी लिखा है— 'सत्यमेव जयते'। क्या सत्य धर्म नहीं है? इसी प्रकार मैत्री न्याय प्रामाणिकता आदि अनेक तत्त्व हैं जिनके बिना कोई राष्ट्र सुचारु रूप से नहीं चल सकता। ये सारे धर्म के ही रूप हैं। ऐसी हालत में धर्म-निरपेक्ष राष्ट्र का क्या अर्थ हो सकता है? फिर भी आजकल धर्म शब्द का उपयोग सम्प्रदाय के अर्थ में ही होता है। इसीलिए हम शब्द में नहीं उलझकर उसकी भावना को पहचानना चाहिए। भारत की धर्म-निरपेक्षता का अर्थ है सम्प्रदाय-निरपेक्षता।

साम्प्रदायिकता एक स्वार्थ

यह सब कुछ हो जाने के बावजूद भी यह सही है कि देश में स्थान-स्थान पर साम्प्रदायिकता उभर रही है। कहीं वह बाबरी मस्जिद व रामजन्म भूमि के रूप मे उभर रही है तो कही किसी विदेशी की पुस्तक के रूप में उभर रही है। या साम्प्रदायिकता के कोई सींग-पूछ नहीं होती वह एक सम्प्रदाय में भी फूट सकती है। हिन्दू-सिक्खो का आमना-सामना इसका एक उदाहरण है। पर फिर भी अनेक धर्म-सम्प्रदायो के सह-अस्तित्व वाले इस राष्ट्र में कुछ एक सम्प्रदायो में ही बार-बार टकराव होता है तो उसके बाहरी और आन्तरिक दोनो कारणो की समीक्षा करनी होगी। साम्प्रदायिक स्वार्थों की छाया मे न जाने कितने-कितने द्वेष-द्वन्द्व पनप रहे हैं। लोग हर छोटी बात को साम्प्रदायिकता का रंग-रूप देने के लिए तैयार बैठे है।

बहुमत-अल्पमत

पर वास्तव मे क्या ये सारे द्वेष-द्वन्द्व धर्म की ओर से पनप रहे हैं? नहीं एसा

नहीं है। लगता तो ऐसा है कि कुछ लोग अपनी राजनीतिक आकाक्षाओ की ओट मे चुन-चुनकर ऐसे प्रसग खड कर रहे हैं। एसा लगता है जैसे पूरे राष्ट्र के हित आज राजनीति की दुकान पर गिरवी रख दिए गए हैं। जा राजनीति से जुडे हुए हैं वे अपने ही हिसाब से मारी गोट बिठाते हैं और अपने ही चश्मो से उनका विश्लेषण करत हैं। बहुत चतुराई स कभी व ऐसे अवसरो को अराजकताओ के लिए सिर पर मढ दगे तो कभी अर्थ-व्यवस्था के साथ जोड दग। पर असल म देखना यह है कि अराजक तत्त्वा और पिछडे वर्ग के कमजोर लागा के गुनाहा को पनाह कौन द रहा है? कहीं तुष्टीकरण की नीति अल्पमत का बहुमत के सिरे पर ता नहीं थोप रही है या जोर-जबरदस्ती स बहुमत अल्पमत का सत्रस्त ता नहीं कर रहा है?

जो लाग राजनीतिक दला स जुडे हुए है व तो इसी म त्राण देखते हैं कि उनकी पार्टी ससद या विधान सभाआ म बहुमत प्राप्त कर। पर जिन लोगा का राजनीति से दुआ-सलाम भी नहीं है वे भी अपन धर्म, समाज या जाति का ज्यादा-से-ज्यादा ससद म पहुचान के लिए आतुर हैं। क्या है यह आतुरता? धर्म को तो राजनीति स ज्यादा-स-ज्यादा दूर रहना चाहिए था। पर आज उसम राजनीति इस तरह प्रवश कर गई है कि वह अपनी मूल धुरी स ही खिसक चुका है। यह सारी राजनीति की चतुराई है। राजनीति दल और सम्प्रदाय की नाव बैठकर सानन्द यात्रा कर रही है। धर्म-निरपेक्षता के लिए आवश्यक तो यह भी था कि राजनीति अपने सिद्धान्ता और सेवाआ क आधार पर ससद म पहुच। पर यह बात आज गौण हा गई है। अब कौन किससे कहे कि तुम स्वार्थ से ऊपर उठो। जो भी कोई कहता है उसे अपने स्वार्थ को बलि-वेदी पर चढाना पडता है। परमार्थ की बात तो बहुत दूर है आज ता आदमी परस्परार्थ को भी नहीं दख पाता। आज आदमी पूरी तरह से स्वार्थ के कीचड म फस गया है।

स्वार्थों से घिरा धर्म

राजनीति तो खैर स्वार्थपूर्ण होती ही है पर आज तो धर्म भी स्वार्थों के घेरे म घिर गया है। या तो राजनीति के चतुर खिलाडिया ने धर्म के लोगा को अपनी आर फाट लिया या फिर धर्म के लोग ही अपनी रोटी सेकने के लिए राजनीति के रसोईघर म पहुच गए। निश्चय ही आज जा बहुत सारे धार्मिक विवाद-उन्माद समय-समय पर सिर उठा रहे हैं उनके पीछे व्यक्तिया के अपने स्वार्थ है। ज्या-ज्या चुनाव नजदीक आते हे यह नाटक विविध रग-रूपा मे मचित किया जान लगता है।

असल म धर्म मे तो विवाद का कोई विषय ही नहीं है। धर्म तो आचरण का

विषय है। पर आज आचरण किसके पास है? आज तो धर्म के नाम पर सम्प्रदाय खड़े हैं और सम्प्रदायों के पास है पैसे का अटूट खजाना। झगड़ा उसी पर कुंडली मारकर बैठा हुआ है।

ऐसी स्थिति में सवाल यह है कि क्या धर्म को यह सब कुछ होते रहने देना चाहिए। क्या वह मूक-भाव से अपने शोषण को देखता रहे? नहीं, आज आवश्यकता है कि धर्म राजनीति को ललकारे कि साम्प्रदायिक समीकरणों के आधार पर आदमी को न बांटो। यदि धर्म में यह ताकत आई तो ही न केवल वह स्वयं बच सकेगा अपितु राष्ट्र को भी बचा सकेगा। वास्तव में यही धर्म का कर्तव्य है। उसका यह कर्तव्य नहीं है कि वह राजनीति में बह जाए। अणुव्रत इसी सार्वभौम धर्म का पालन करने के लिए तत्पर है। वर्षों से राजनीति से हटकर यह चरित्र-निर्माण का कार्य करता रहा है। आज भी कर रहा है।

अर्थ परमार्थ से जुडे

साधारणतया यही समझा जाता है कि अध्यात्म और अर्थशास्त्र म कोई सम्बन्ध नहीं है। इसीलिए एक आर जहा अध्यात्म-विचार अर्थशास्त्र स निरपेक्ष बनता गया वहा दूसरी आर अर्थशास्त्र का विचार भी अध्यात्म-निरपक्ष बनता गया। यह सही है कि अध्यात्म की ऊची कक्षा म प्रविष्ट हो जाने क बाद साधक पदार्थ स निरपक्ष बन जाता है। उस स्थिति म उसके लिए अर्थ बेमानी हो जाता है। पर यह एक ऐसी भूमिका है जिस पर हर काई आरूढ नहीं हो सकता। सामान्य आदमी के लिए अर्थ-सापक्षता अनिवार्य है ही। पर यह भी सही है कि अर्थ का यात्रापथ जब परमार्थ से बिछुड जाता है तो उसके परिणाम भी शुभकर नहीं हो सकत। इसी का परिणाम है कि आज स्वतत्र परमार्थवाद जहा सम्प्रदाय से घिर गया या गिरि कन्दराओं की आर दौडन लगा वहा स्वतत्र अर्थवाद भी सप्रभु बनकर सारी व्यवस्थाओ को छिन्न-भिन्न करने लगा।

खाई को पाटना जरूरी

अणुव्रत न इस सापेक्षता का समझने का प्रयास किया है। पैसे का चलन मनुष्य की सुविधा के लिए हुआ था। शुरू-शुरू म इसने अपनी सार्थकता भी दिखाई। पर धीरे-धीरे यह इतना महत्त्वपूर्ण बन गया कि सारी बागडोर ही उसके हाथ म आ गई।

भारी उद्योगा ने इस सतुलन का बिगाडने म महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यदि यह एसे ही चलता रहा तो अमीरी ओर गरीबी की खाई इतनी चौडी हो जाएगी कि फिर आदमी क लिए इस किनारे से उस किनारे और उस किनारे से इस किनारे तक पहुचना नितात असम्भव हो जाएगा।

इसम काई शक नहीं कि जीवन चलाने के लिए अर्थ की अपनी उपयोगिता है। पर यह भी सही है कि आजकल इसी वजह से नशीली-दवाइयो का धधा शस्त्रा का धधा चारबाजारी और तस्करी का बाजार गर्मा गया है। जब पैसा ही प्रभु बन जाता है ता फिर वस्तु के उत्पादन आर विनिमय मे सतुलन बिगडे बिना नहीं

रहेगा। भारी उद्योग एक आर आदमी का शापण तो करेगा ही पर प्रकृति के अधाधुध दोहन से पर्यावरण की सुरक्षा भी खतर म पड जाएगी। ऐसी स्थिति म आर्थिक सतुलन के लिए अणुव्रत के मुख्य चार सूत्र इस प्रकार हैं—

१ अनैतिक धधे नहीं करना
२ सग्रह नहीं करना
३ उपभाक्तावाद का नियत्रण करना
४ विसर्जन करना

आदमी क पास अक्ल है ता उसका उपयाग किया जाता है पर जब उसका दुरुपयोग हान लगता है ता मिलावट तस्करी काला-बाजारी आदि विकृतिया अपने आप पैदा हो जाती हैं। इसी से काला धन बढता है और एक आर अतिभाव बढता है ता दूसरी आर अभाव का सागर लहराने लगता है। आदमी का अपने टेक्निकल साधना का उस सीमा से आगे प्रयोग नहीं करना चाहिए जहा दूसर का शापण शुरू हो जाए।

मानवीय शापण का अन्त हागा ता न केवल मनुष्य के श्रम का ही अनुचित लाभ हे उठाया जाएगा अपितु भीमकाय उद्योग शस्त्रास्त्रा का अनर्गल उत्पादन और वितरण नशीली दवाइया तथा शराब जैसी बुराइया का भी अपने आप अन्त हो जाएगा।

यह अर्थ की सप्रभुता का ही परिणाम है कि आज न तो लोगो का इस प्रकार के धधे करने मे लज्जा आती है न सरकार का ऐसे उद्योगा को लाइसस देने म लज्जा आती है न इसका व्यापार करने वाला को लज्जा आती है न प्रचार-माध्यमा को इनका प्रचार करने मे लज्जा आती हे और न इसका उपभोग करने वाला का ही लज्जा आती है।

उपभोक्तावाद का विस्तार

उपभोक्तावाद आज इस कदर बढ गया है कि लोग नित नया उत्पादन कर ग्राहको को रिझाने म मशगूल है। एक जमाना था जब आदमी की आवश्यकताए अत्यन्त अल्प थीं। पर आज का नारा ही यह हो गया हे कि उत्पादन बढाओ और उसके लिए नयी-नयी-मडिया को खोजो। काई शक नहीं इससे मनुष्य का सुविधा तो मिली है पर उसका सुख छिनता जा रहा है। मुट्ठी भर लोगा के शरीर की चर्बी बढे तो इसे सामाजिक विकास नहीं कहा जा सकता। आवश्यकता हे आज एक नये अर्थशास्त्र निर्माण की।

अणुव्रत का आर स अहिसा और शातिबोध के अन्तर्गत अपरिग्रह को

अर्थव्यवस्था पर एक व्यापक प्रशिक्षण क्रम भी शुरू हो गया है यह क्रम केवल आकडा तक सीमित न रहे अपितु मनुष्य की भावना मे परिवर्तन आए वैसा प्रायोगिक स्वरूप भी सामने आ रहा है।

विसर्जन का सूत्र

निश्चय ही जब मनुष्य की भावना मे परिवर्तन हो जाएगा ता वह अर्थ से चिपककर नहीं रहगा। पहले तो जब उसके अर्जन के तरीके ही स्वच्छ हो जाएगे तो अधिक अर्थ सग्रहीत भी नहीं होगा। यदि उसके पास अनावश्यक पैसा आ भी जाएगा तो वह उसका विसर्जन कर देगा। विसर्जन का असली अर्थ दान नहीं हे अपितु अर्थ पर से ममत्व दूर करना ही विसर्जन है। ऐसे लोग पेसे पर कुडली मारकर नहीं बेठगे अपितु अपने आपको उमका कवल न्यासी मानेग। प्रभुता की भावना का उच्छेद करना ही नयी अर्थव्यवस्था का मूल्यवान सूत्र होगा।

कुछ साम्यवादी दशा मे अर्थ को स्टेट म केन्द्रित कर उसके समान विभाजन का प्रयाग किया गया था। पर यह स्पष्ट हो गया है कि वह व्यवस्था आज चरमरा गई है। आज एक ऐसी अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकता है जिसम मनुष्य की भावना म ही परिष्कार हो और वह एक-दूसरे के जीने के लिए स्थान छोडने का अभ्यास कर। यह ठीक है कि इस नयी व्यवस्था को जन्म देने मे आदमी को अपने आपको सवारना पडेगा पर यह भी निश्चित है कि यदि वह नहीं समझा तो सारी दुनिया एक दिन विनाश के ऐसे गर्त म फस जाएगी जहा सब कुछ शेष हो जाएगा।

गाधीजी ने इसी बात को लक्ष्य कर कहा था— "यदि स्वेच्छा से सम्पत्ति का त्याग नहीं किया जाता है और जा सम्पत्ति प्राप्त है उसे खुशी-खुशी नहीं छोडा जाता है और सम्पत्ति का उपयोग सबकी भलाई के लिए नहीं किया जाता है तो निश्चय ही देश मे खूनी क्रान्ति आएगी।"

प्राचीन काल म धर्म की ओर से परिग्रह के सन्दर्भ मे एक शब्द 'दान' के रूप म सुझाया गया था। पर दान म देने और लेने वाले के श्रेणिभेद ने अनेक समस्याए पैदा कर दीं।

ऐसी स्थिति म आचार्यश्री तुलसी ने अपरिग्रह के साथ विसर्जन की बात को जोडकर अहिसा को एक नया आयाम प्रदान किया है। विसर्जन का अर्थ देना नहीं है। इसम काई लेने वाला भी नहीं है। जब लेने वाला मामने होता हे ता दना एक अहकार बन सकता ह। सच्चा विसर्जन तो वही है जब आदमी अधिक ग्रहण न करे। पहले अधिक कमाओ ओर फिर उसे बाटो यह देयम् दर्जे की वात है। पहले दर्जे की बात असग्रह है। जब सग्रह हो जाता है तब विसर्जन की बात

सामने आती है। विसर्जन तभी घटित हो सकता है जब अर्थ के स्वामित्व का भाव हटे तथा किसी प्रकार का अहंकार पोषित न हो। ऐसी स्थिति में किसी को देना महत्त्वपूर्ण नहीं है। जब वस्तु एक जगह से छूटती है तो वह अपना दूसरा स्थान तो अपने आप बना लेगी।

सचमुच समाज-व्यवस्था का भी यह एक महत्त्वपूर्ण सूत्र बन जाता है। विसर्जन का लक्ष्य समाज-व्यवस्था की सुचारुता नहीं है। यह तो आत्म-शुद्धि का संवाहक है ममत्व का परिमार्जक है। आत्म-शुद्धि होती है तो समाज-व्यवस्था तो अपने आप प्रभावित हो जाती है।

अर्थ . कितना सार्थ? कितना निरर्थ?

अथ आज जीवन की मजबूत धुरी बन गया है। एसा नहीं है कि पैसे का मूल्य पहले भी न रहा हो। पर आज इतन जितनी प्रभुता प्राप्त कर ली है उतनी पहले कभी प्राप्त की या नहीं कहा नहीं जा सकता। आज तो 'अर्थ एव प्रधानम्' पैसा है तो सब कुछ है, अन्यथा कुछ भी नहीं है। पर यह भी सच है कि इससे अनेक समस्याए भी पैदा हुई हैं। आज की अधिकाश समस्याए पैसे के आस-पास ही घूमती हैं। कुछ उसक अभाव की हैं ता कुछ अतिभाव की। आवश्यकता है इसके लिए एक सम्यक् दृष्टि जागे। जब तक वह नहीं जागती है तब तक अर्थ का होना और न होना दोना समस्या बने रहगे।

ममत्व ही परिग्रह

पहली बात तो यह है कि पदार्थ अपने आप म परिग्रह नहीं है। सोना-चादी हीरे-जवाहरात भी अपने आप म परिग्रह नहीं हैं। अपने आप मे वे केवल पदार्थ हैं। जब ममत्व दृष्टि जागती है तो पत्थर भी परिग्रह बन जाता है। गृहस्थ जीवन मे पैसे की उपयोगिता स इनकार नहीं किया जा सकता। पर उपयोगिता जब ममत्व के नीचे दब जाती है तो उचित-अनुचित के सार पैमाने गिर जाते हैं। ऐसे क्षणो मे पैसे की कोई उपयोगिता नहीं रहती। आदमी केवल उसके ममत्व का भार ढोता है। आदमी के पास करोड रुपये हैं। क्या उपयोग है उस रुपये का? या तो वह तिजारिया म भरा पडा है या लॉकर मे बन्द पडा है। उस पर केवल ममत्व का ताला लगा पडा है। पुराने जमान मे धन को जमीन म या मकान की दीवारा म दबाकर रखा जाता था। पर उस धन का क्या अर्थ हुआ? जैसे जमीन मे पत्थर पडे हैं वैसे ही धन पडा है।

एक आदमी का बडा गर्व था कि उसका अपार धन जमीन म गडा पडा है। उसे समझाने के लिए एक सन्यासी ने एक उपाय किया? उसने अपने आश्रम म एक बहुत बडा गढा खुदाया। कुछ बड-बडे पत्थर मगवा लिये। एक दिन धनी आदमी ने महात्मा से पूछा— "आप यह क्या करवा रहे हैं?"

महात्मा ने कहा— "मैं इस गड्ढे में अपना खजाना सुरक्षित रखना चाहता हूं।"

धनी आदमी ने आश्चर्य में भरकर कहा— "आपके पास धन कहां है जो उसकी सुरक्षा करना चाहते हैं?"

महात्मा ने पास पडे पत्थरों की ओर संकेत करते हुए कहा— "यह रहा मेरा धन। मैं इसे गड्ढे में सुरक्षित रखूंगा।"

धनी आदमी महात्मा की नादानी पर हंसा और बोला— "ये तो पत्थर हैं धन कहां हैं?"

अब महात्मा के हंसने की बारी थी। उन्होंने कहा— "तुम्हारे धन और मेरे पत्थर में क्या अन्तर है? जैसे धन अन्दर पडा है वैसे पत्थर भी अन्दर पडे रहेंगे। जैसे तुम सोने-चांदी पर इतराते हो मैं इन पत्थरों पर अभिमान कर सकता हूं।"

धनी आदमी का मोह-भंग हो गया और उसने धन से अपना मुंह मोड लिया।

अर्थ की उपयोगिता

लॉकर या तिजोरियों में बन्द धन के भी कम खतरे नहीं। कभी कोई इन्कमटैक्स वाला आता है तो कभी कोई रेड वाला आ धमकता है। पैसे के लिए पग-पग पर आपदाएं हैं। पहले तो उसके लिए मजदूरों से झगडना पडता है। फिर अपने प्रतिद्वंद्वियों से झगडना पडता है। जब किसी के पास पैसा जमा हो जाता है तो उसके लिए अनेक प्रतिद्वंद्वी खडे हो जाते हैं। दुनिया में कोई किसी को झट से ऊपर नहीं आने देता है। अक्सर ऐसे किस्से सुनने में आते हैं कि किसी आदमी ने पैसे की दौड में जोर से दौडना शुरू किया तो दूसरे ने उसकी टांग खींच ली। सचमुच यह केकडावृत्ति बडी जबरदस्त है। जो गिरता है वह चोरा खाने ऐसा चित्त होता है कि जन्म भर उस पीडा को नहीं भूल सकता।

पैसे के लिए चोरों के डर से गुजरना पडता है। परिवार के लोगों से झगडा मोल लेना पडता है। पैसा एक आदमी कमाता है पर उसके दावेदार अनेक खडे हो जाते हैं। ऐसा बहुत कम देखने में आता है कि पैसा परिवार में विग्रह पैदा न करे। बाप के धन पर बेटे भी कम दावपेच नहीं खेलते। घर-घर में ऐसे झगडे देखने को मिल जाते हैं।

बौद्ध-साहित्य में एक कथा आती है। एक चील को कहीं से एक मांस का मोटा टुकडा मिल गया। थोडा मांस उसके खाने के उपयोग में आ गया। पर फिर भी काफी मांस बचा हुआ था वह उसे लेकर आकाश में उडी। इतने में अनेक चील

वहा इकट्ठी हो गई। व उस पर झपट्टा मारने लगीं। जबरदस्त आक्रमण-पतिरक्षण शुरू हो गए। कुछ देर तक तो उसने सामना किया। पर आखिर वह थक गई। एक दूसरी तगडी चील ने वह मास का टुकडा छीन लिया। अब सारी चीला ने पहली चील को ता छोड दिया दूसरी चील पर झपटने लगीं। उसने भी कुछ देर तक प्रतिराध किया। पर आखिर वह भी थक गई। एक तीसरी चील ने उससे वह टुकडा छीन लिया। इत तरह जिस चील के पास टुकडा जाता सभी उस पर झपट्टा मारने लगतीं। एक राजा ने यह तमाशा देखा ता उसे वराग्य हो आया। उस प्रतिबोध हो गया कि सारा झगडा स्वामित्व का है। आदमी के पास जब भी अतिसय पैसा इकट्ठा होता है ता उसे दूसरा के आक्रमण सहना ही पडता है। बहुत बार पैसे के लिए आदमी को प्राण भी गवा देने पडते हैं। गहना का लेकर एसे किस्से ता अक्सर सुनने को मिलते हैं। पर आदमी पर ममत्व का इतना गहरा पहरा हे कि वह उससे आसानी से मुक्त नहीं हो सकता।

सचमुच यह ममत्व उसके अपने लिए ही अलाभकर नहीं होता है परन्तु उससे पूरी समाज-व्यवस्था भी रुग्ण बनती है। इस आध्यात्मिक सच्चाई को समझ पाना बडा मुश्किल है। पर आज ता अर्थशास्त्र भी इस आध्यात्मिक सच्चाई को पहचानने लगा है। दुनिया की जितनी समस्याए हे वे अधिकाशत चोटी के उन लोगो स जुडी हुई हैं जिनके पास अपार धन है। वह धन उनके लिए भी बहुत सुखकर नहीं होता है पर जब तक आदमी को सम्यक्त्व प्राप्त नही हो पाता ममत्व की वह मूर्च्छा नहीं टूटती। यह सही है कि आदमी को जीवन-निर्वाह के लिए कुछ परिग्रह की आवश्यकता हाती है। इसीलिए अणुव्रतो मे उसका निपेध नहीं है। पर जब आवश्यकताए इच्छाए बन जाती है ता उनका पार पाना मुश्किल हो जाता है।

अपरिग्रह का सुख

एक राजा को यह सम्यक्त्व प्राप्त हो गया और वह साधु बन गया। साधुत्व मे वह इतना सुख अनुभव करने लगा कि दिन-रात जब-तब उसके मुह से 'अहोसुख-अहोसुख' की ध्वनि निकलने लगी। दूसरे साधुआ को सन्देह हुआ कि यह सन्यासी साधुत्व म रमा नहीं है हर क्षण अपने पूर्व राज-सुखा की स्मृति म 'अहोसुख-अहोसुख' की रटन लगा रहा है। एक दिन यह बात आचार्य के पास पहुच गई। आचार्य ने उससे पूछा— "क्या तुम्हारा मन अब भी पूर्व सुखा की स्मृति म उलझा हुआ है?" उसने उत्तर दिया— "गुरुदेव! पूर्व-सुख क्या मैं तो अपने वर्तमान-सुखो मे लीन हो रहा हू, पहले जब मैं राजा था ता मुझे अपने शत्रुआ स डर रहता था। अत मुझे सुरक्षा की पूरी व्यवस्था करनी पडती थी। फिर भी मैं रात

का निश्चित नहीं सो पाता था। अब मेरा कोई शत्रु नहीं है अत मैं जहा भी आश्रम म या वृक्षमूल म सो जाता हू तो मुझे निश्चित नींद आती है। सुबह मैं जागता हू तो तरोताजा होता हू। अत मेरे मुख से 'अहासुख' की ध्वनि निकलने लगती है। पहले मैं राजकाज की चिंताओं मे घिरा रहता था, अत भोजन भी आराम से नहीं कर पाता था। भोजन के बारे मे भी मुझे चिन्ता रहती थी कि उसमे कोई विष तो नहीं मिला हुआ है? पर अब मुझे जो भिक्षान्न मिलता है वह बिलकुल शुद्ध होता है। सात्त्विक होने से वह दुष्पाच्य नहीं होता। अत मैं दिन भर स्फूर्ति से भरा रहता हू। इसीलिए मेरे मुह से बार-बार 'अहोसुख' की ध्वनि निकलती रहती है।''

सचमुच परिग्रह की सार्थता और निरर्थता का यह एक बहुत ही प्रबोधक दृष्टात है।

टेक्सो की चोरी भी देश की अर्थव्यवस्था पर एक करारा आघात है। इसी से काला धन पैदा होता है। वह कुछ आदमिया के हाथा म पडकर शोषण का एक हथियार बन जाता है।

व्यापार का एक रोमाचक रूप जो आज उभर रहा है, वह है शस्त्रा का व्यापार। सचमुच कुछ विकसित देश अपनी वैज्ञानिक क्षमता का लाभ उठाकर तथा युद्ध का कृत्रिम व्यावसायिक वातावरण बनाकर सहारक शस्त्रा का इतना जबरदस्त धन्धा करते है कि गरीब और अविकसित तथा अर्द्धविकसित देशा का तो कचूमर ही निकल जाता है। उनक सामने अपने अस्तित्व का सवाल रहता है। अत गरीबी का ओढकर भी उन्हे शस्त्र खरीदने पडत हैं। यह सही है कि बड देशा की वैज्ञानिक क्षमताआ न उन्ह वह सामर्थ्य प्रदान किया है पर इसम भी काई सदेह नहीं है कि अविकसित राष्ट्र इसस बहुत तीव्रता स प्रभावित हाते हैं।

इसी प्रकार अनेक बहुराष्ट्रीय कम्पनिया भा मशीना के द्वारा बडी मात्रा मे अपने माल का उत्पादन कर पूरी दुनिया म अपना जाल फैला रही है। मशीन की उपयागिता को नकारा नहीं जा सकता। पर जब मशीन मनुष्य को पीसने लग तो उसे उचित कैस कहा जा सकता ह? इस आग म घी डाल रही है--आज की विज्ञापन-सस्कृति। रेडिया टी वी तथा पत्र-पत्रिकाआ म इतने लुभावने विज्ञापन आते हैं कि गरीब लोग भी उनसे लुभा जाते हैं और उपभाक्तावाद के चुगल में फस जाते हैं। स्थिति तो यह हे कि विज्ञापनो म जैसा दिखाया जाता है वह सही नहीं होता। स्वास्थ्य के लिए भी बहुत सारी चीज अनुकूल नहीं हातीं पर फिर भी कुछ लोग अपने स्वार्थ के लिए वैसा विज्ञापन करते हैं और प्रचार माध्यम (मीडिया) अपनी कमाई क लिए उसे प्रात्साहन देते है। जब आदमी बार-बार किसी चीज का देखता है ता स्वाभाविक रूप से वह उससे प्रभावित होता है। कोमलमति बच्चा क मन पर तो उसका और भी अधिक प्रभाव हाता है। सब कुछ भूलकर कर्ज लकर भी आदमी उनमे फस जाता ह। इसीलिए आज की दुनिया का बहुत बडा भाग कर्जदार है।

व्यापार-शुद्धि और सयम

फिर मिलावट कम तौल-माप अच्छी के स्थान पर बुरी चीज देना आदि अनेक बुराइया भी है जो व्यापार की प्ररणा को ही हल्के स्तर पर ला पटकता हैं। जब तक आदमी मे प्रामाणिकता की भावना नहीं आती तब तक वह जघन्य काम करने म भी नहीं हिचकिचाता। इस दृष्टि से व्यापार शुद्धि के लिए अणुव्रत का महत्त्व असदिग्ध है। अणुव्रत एक सयम का आन्दोलन है। अत आवश्यकताआ

का अल्पीकरण इसकी सहज स्वीकृति है। कुछ लोगा का विचार है—आवश्यकताए बढगी ता उत्पादन भी बढेगा। उससे सहज रूप से मानव ज्यादा सुखी होगा। पर हम दखते हैं कि आवश्यकताआ का कहीं अन्त नहीं हाता। वे आगे बढती जाती हैं। इसम प्रकृति का जबरदस्त दोहन होता है और प्रदूषण की समस्या खडी होती है। यह ठीक है कि आदमी पुन गुफा-मानव नहीं बन सकता पर यह भी सत्य हे कि यदि उसने अपनी आवश्यकताओं पर अकुश नहीं लगाया ता एक दिन प्रकृति का सतुलन विगड जाएगा। अत यह बहुत जरूरी है कि आदमी समय रहते चेते। इसीलिए उसे अणुव्रत की आवश्यकता है।

व्यापार के सन्दर्भ म सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र की चर्चा भी बहुत बार चलती हे। निजी क्षेत्रा की स्वार्थपरता के कारण सार्वजनिक क्षेत्र का प्रयाग भी उभरता रहा ह पर सच्चाई यह है कि सार्वजनिक क्षेत्रा म भी आपाधापी की काई कमी नहीं है। रूस की साम्यवादी व्यवस्था क पतन के बाद तो सार्वजनिक व्यवस्था को और भी आघात लगा है। अत व्यापार म निजी क्षेत्र की भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता। फिर भी वह सुखकर तभी हो सकती है जब कि आत्म-सयम क मार्ग से चले। अणुव्रत की भी यही अभीप्सा है।

पर्यावरण और अणुव्रत

अद्वत का अर्थ केवल मनुष्य के साथ एकता और मैत्री स्थापित कर लेना ही नहीं हैं। पशु-पक्षी कीड-मकोडे आदि त्रस तथा पृथ्वी, पानी अग्नि हवा तथा वनस्पति के स्थावर जीवा के साथ एकता साधना भी अहिमा की ही समुपासना है। दुनिया मे जो कुछ है उसे उसी तरह रहने देना उसक साथ छडछाड नहीं करना ही अहिसा है। विश्व-सरचना का एक ऐसा परस्पराधारित ताना-बाना है कि तार को छूने से पूरा आकाश झनझना उठता है। एसी स्थिति म एक का वध करने स काई दूसरा जीवाश चुपचाप नष्ट हो जाता है। पृथ्वी पर पाई जान वाली समस्त जीवित तथा अजीवित वस्तुए आपस म उसी प्रकार जुडी हुई हैं जिस प्रकार माला के मोती। उनम आपस म एक गहरा तालमल है। यह तालमल लाखा वर्षों से बनी जटिल व्यवस्था का परिणाम है। हमे अभी इस तालमेल की पूरी जानकारी नहीं है। भगवान् महावीर न कहा है—सर्वं सर्वेण सम्बद्धम्। सब एक दूसर के साथ जुडा हुआ है। सुनने म यह बात अजीब लगती हे कि एक पड काटने से केवल उस पेड की ही हिसा नहीं होती अपितु किसी बादल का भी धक्का लग जाता हे। जब एक पत्थर को एक जगह से उठाकर दूसरी जगह रखा जाता है तो उसकी पूरी दुनिया क साथ सधी हुई एकरसता खडित हा जाती है। इसीलिए अहिसा की सूक्ष्मता म प्रवेश कर जाने वाला साधक अकर्म मे दीक्षित हो जाता है। महावीर ने कहा है—लोक म समस्त कर्म परिज्ञातव्य— जानने एव त्यागने योग्य हैं। परिज्ञातकर्मा व्यक्ति ही मुनि हो सकता है। वह मन वचन और काया के योगा का विराध कर शेलपी-अकम्प अवस्था को प्राप्त हो जाता है, आत्मलीनता की स्थिति को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार वह अजीव पदार्थो के उपयोग से भी विरत हो जाता है। पर हर एक के लिए यह सभव नही है। मुनि इस दृष्टि से सर्वथा जागृत हाता है। गृहस्थ यदि प्रमादाचरण से भी बच जाए तो वह अनर्थ हिसा से काफी दूर तक विरत हो जाता है। ऐसा हाने पर पर्यावरण की रक्षा तो अपने आप हो जाती हे।

पहले महावीर की अहिसा को समझना मुश्किल था पर जब से प्रदूषण की बात सामने आई है तब से स्थावर जीवा की अहिसा ने भी गहरा अर्थ ग्रहण कर

लिया है। कुछ लोग प्रकृति की सुरक्षा के लिए ही स्थावर जीवो की रक्षा को महत्त्व देते हैं पर महावीर इसे अहिसा के साथ जोडते हैं। यद्यपि विज्ञान की नयी खोजो ने पृथ्वी आदि भूतो मे जीवन की सभावनाआ को स्वीकार कर उसे बहुत व्यापक बना दिया है। स्थावर जीवो की प्रतिपत्ति महावीर की अपनी एक मौलिक सूझ है।

मनुष्य के लिए जमीन बहुत कीमती है। क्याकि पृथ्वी का केवल २० प्रतिशत भाग ही जमीन है। इसम भी १६-१७ प्रतिशत भाग ऐसा ह जिस पर मनुष्य रह सकता है। पृथ्वी पर प्रकृति से मिलने वाली चीजा का बहुत बडा भडार है। यह भडार इतना विशाल है कि इससे धरती पर रहने वाले सभी लागा की जरूरत पूरी हो सकती हैं। पर इच्छाए पूरी नहीं हो सकतीं। इच्छाआ का यह विस्तार विलास को जन्म देता है। उसीसे समस्याए खडी हाती हैं।

पृथ्वी के बेहिसाब उत्खनन की समस्याए आज स्पष्ट हें। पर्यावरण की दृष्टि से पृथ्वी के ऊपर की मिट्टी की परत बहुत कीमती है। १ से मी माटी परत के बनने में लगभग ४०० वर्ष लग जाते हैं। एक-एक कण के जमने से इस परत का निर्माण होता है। मनुष्य के एक ही झटके से यह परत इतनी क्षतिग्रस्त हा जाती है जिसकी पूर्ति लाखा वर्षो बाद ही सभव हो सकती है। कई जगह परता के उत्खनन स पानी का प्रवाह इतना विपर्यस्त हो जाता हे कि बहुत सारी कीमती जमीन को नदिया लील जाती हैं। उससे जो प्राकृतिक विनाश हो जाता हे उसे आकना बडा मुश्किल है। अधाधुध खनन से १९५० और १९८० के बीच के काल मे खनिज उत्पादन म ३० गुना वृद्धि हुई है। इससे लाखो एकड वन ओर कृषिभूमि और वहा के निवासी प्रभावित हुए हैं। गावा मे १५ प्रतिशत भूभाग मे उत्खनन हो रहा है। उससे उत्पादन तो बढा हे पर मानवीय समस्या खासकर आदिवासी-समस्या विकट होती जा रही है।

कायला तेल तथा पेट्राल आदि के लिए जो भूमि-उत्खनन हा रहा है अतत उससे भी प्राकृतिक सतुलन बिगडता है। हो सकता है आज वह प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित नहीं हो रहा हे पर इसम कोई सदेह नहीं हे कि एक सीमा के बाद वह परिलक्षित होगा ही। ईंधन के उच्छृखल उपयोग की समस्या तो आज भी स्पष्ट अभिनात हो ही रही है। कोयले तथा पेट्राल क भारी उपयोग से आज दुनिया जिस विपम आर्थिक परिस्थिति से गुजर रही है वह तो सर्वविदित हैं। यदि इस उपयोग को कम किया जाए तो न केवल वाहनो के उपयाग म आने वाला पेट्राल कम खर्च होगा अपितु उसमे उत्पन्न होने वाली प्रदूषण की समस्या भी कम हो जाएगी।

इसीलिए भगवान् महावीर ने कहा हे—पृथ्वीकाय की हिसा करने वाला केवल पृथ्वीकाय के जीवा की ही हत्या नहीं करता अपितु नाना प्रकार के जीवा

की हत्या करता है। बल्कि वह हिसा उसके अपने भी अहित और अबाधि का निमित्त बनती है। इसीलिए साधक हिसा के परिणाम को समीचीन दृष्टि स समझ कर अहिसा की साधना मे सावधान हो जाए।

वास्तव मे ही पृथ्वीकाय के जीवा की हिसा ग्रन्थि है माह है, मृत्यु है नरक है। भगवान् महावीर का हिसा का यह सकेत केवल पृथ्वीकाय क लिए ही नहीं हे अपितु पानी अग्नि हवा तथा वनस्पति के लिए भी इन्ही शब्दा म बार-बार दोहराया गया हे। उन्हाने कहा है— भले ही ये जीव सूक्ष्म हात हें पर प्राण-वियाजन करन पर उनका भा भयकर भय एव कष्ट की अनुभूति होती है। यह जानकर मेधावी पुरुष न केवल स्वय शस्त्र समारभ से दूर रह अपितु दसरा स भी नहीं करवाए तथा करते हुए का भी अच्छा न समझ।

जलवायु-प्रदूषण

मनुष्य की सुविधा के विविध साज-सामान बनान वाल कारखाना की गदगी स नदिया अत्यधिक प्रदूषित हाने लगी हैं तथा प्राण वायु नष्ट हान लगी है। इस बिगडते पर्यावरण का मनुष्य पर ही बुरा प्रभाव पड रहा है। नदी घाटी याजनाआ के कारण डूब म आए विशाल क्षेत्र और औद्योगिक तथा ईधन क लिए किए गए अत्यधिक निर्वनीकरण से पयावरण का भयकर खतरा पैदा हो रहा है।

वैज्ञानिक शाधा स पता चला है कि वायुमडल मे मौजूद ओजोन की परत धीरे-धीरे क्षीण हाती जा रही हे। सबूत मिले हैं कि न केवल अटार्कटिक से ऊपर अपितु आर्कटिक क्षेत्र के ऊपर भी ओजोन की परत के जीवन-रक्षक कवच मे छेद हो गए हैं। ओजोन परत म छेद होने का मतलब है सूर्य की घातक पराबैंगनी (अल्टरा वायनेट) किरणा का बेरोकटोक धरातल पर पहुचना। ये किरणें न केवल त्वचा का कैंसर करती हे अपितु आदमी के अधा तथा सूक्ष्म जीव-जन्तुआ तथा फमला को नष्ट कर देती हैं। इनसे डी एन ए के अणुआ को भी क्षति पहुचती है।

आजान को नष्ट करने वाली दो प्रमुख चीजे हैं—नाइट्रिक आक्साइड तथा क्लोरिन आक्साइड। अधिक ऊचीई पर उडने वाले सुपरसोनिक जेट विमान नाइट्रिक आक्साइड पैदा करते हैं। उससे ओजान का नुकसान पहुचता हे। पर नाइट्रिक एसिड से भी आजोन को ज्यादा खतरा ह क्लारिन आक्साइड से। क्लारिन आक्साइड का निमाण फ्लुओराकार्बन नामक रसायन मे होता है। फ्लुओराकार्बन प्राकृतिक रसायन नहीं है। इसे मनुष्य ने बनाया है। यह फ्लुओरीन और कार्बन का यौगिक है। यह उच्च तापमान का झेल सकता है अत अत्यत टिकाऊ है। इसीलिए

अनेक उद्योगो मे इसका व्यापक उपयोग होता है। रेफ्रीजरेटरा तथा एयर-कडीशनरा म प्रयुक्त होने वाले द्रवो एयरोसोल स्प्रे ठोस प्लास्टिक फोमो के निमार्ण मे फ्लुओरो कार्बन के यौगिका का उपयोग होता है। ये फ्लओरोकार्बन वायुमडल म पहुचकर हवा के अन्य अणुओ के साथ मिल कर सारी दुनिया मे फल जाते हैं। वैज्ञानिको का मत है कि ये ५० से ९०० वर्ष तक नष्ट नहीं होते। तथा धीरे-धीर ऊपर समतापमडल-ओजोन तक पहुच जाते हैं। तथा वहा पराबैंगनी किरणो के प्रभाव से इनके बधन टूट जाते है ओर इस प्रक्रिया मे क्लारिन मुक्त परमाणु उपलब्ध हो जात हें। क्लारीन क ये मुक्त परमाणु आजोन के अणुओ को लगातार तोडते चले जाते है। यह क्रिया लम्बे समय तक चलती रहती हे। वैज्ञानिक गणनाआ के अनुसार क्लारीन का प्रत्येक परमाणु ओजोन के १००००० अणुआ को नष्ट करता है। इस तरह औद्यागीकरण के कारण समूची पृथ्वी पर भयकर प्रदूपण फैन्न रहा है।

प्रदूपण का एक अन्य स्रोत है आणविक हथियारा का विस्फोट। सचमुच उससे हाने वाली हानि के अकल्प्य परिणाम हो सकते हैं। इससे एक राष्ट्र का नुकसान नहीं हे अपितु पूरे भूमडल का पारिस्थितिकीय सतुलन बिगड जाएगा। पृथ्वी जीवन के लिए अयोग्य हो जाएगी। वायुमडलीय तथा जीव-विज्ञान के अध्ययना से यह सिद्ध हो गया है कि सीमित अणुयुद्ध से भी भयकर गर्मी विस्फोट और विकिरण के खतरे पैदा हो सकते ह। हवा म कार्बनडाइ आक्साइड गैस की वृद्धि से पृथ्वी का औसत तापमान बढ सकता है। उससे आर्कटिक तथा अटार्कटिक प्रदेशा की बर्फ पिघल कर समुद्र के पानी की सतह को ऊची कर देगी और समुद्रतट की बहुत सारी धरती जल-समाधि ग्रहण कर लेगी। पहले तो वृक्ष-वन कार्बन डाइआक्माइड को सोख लेते थे पर चूकि अव वन भी नष्ट होते जा रहे हैं उससे गेस के प्रलय-प्रभाव से बचना असभव हो गया है। इसका दूसरा खतरा शीत का प्रादुर्भाव भी है। उससे धरती अधकार पूर्ण तथा अत्यन्त शीतल ग्रह के रूप मे परिणत हो जाएगी।

यह ता एक अतिम बात है पर इससे पहले के खतरे भी कम नहीं है। विस्फोटो से उद्भूत धुआ पर्यावरण म फैलकर वादला के रूप मे बदल जाएगा। जब बादल जल के रूप म पृथ्वी पर बरसेंगे तो धरती भी विकिरण के प्रभाव से मुक्त नहीं रह पाएगी। उससे घास-पात तथा वनस्पति भी रेडियोधर्मिता स बच नहीं सकगी। इन सब म विपाक्तता होने से मनुष्य का तन ही नहीं मन भी विपाक्त हुए बिना नहीं रहेगा। वह भी साप की तरह अपनी सास से फुफकारे लेन लगेगा।

विस्फोटा से प्रभावित धूलिकण जब समुद्र मे पहुचेग तो वहा भी विपाक्तता

पैदा कर दग। उससे जल-जतु भी प्रभावित हुए विना नहीं रहगे। जो बच जायगे वे यदि मनुष्य का आहार बने तो उसे भी मौत के मुख म धकेल देगे।

ऊपरी वायुमडल म किए जाने वाले नाभिकीय विस्फोटा से बडी मात्रा म नाइट्रिक आक्साइड के अणु पैदा हाते हैं। उससे ओजान की समूची जीवन-रक्षक परतों का नष्ट हा जाना भी बहुत सभव है। नाभिकीय युद्ध स जितनी तबाही हागी उससे अधिक तबाही ओजान परत के नष्ट हो जाने से हागी। इस खतरे से बचन का एक ही उपाय है कि युद्ध तथा नाभिकीय शस्त्रा के प्रयोग को बद किया जाए। जयप्रकाश नारायण ने ठीक ही कहा था कि "अणुबम बनाना नैतिक दृष्टि से अनुचित राजनीतिक दृष्टि स खतरनाक तथा सामरिक दृष्टि स अनावश्यक ह।"

आज पूरी दुनिया के जगला की हालत बद से बदतर होती जा रही है। सयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सुरक्षा कार्यक्रम के भूतपूर्व प्रमुख मारिश एस स्ट्राग ने १९७३मे भविष्यवाणी का थी कि १० या १५ वर्षों मे पर्यावरण शुद्ध राजनीतिक तकरार का प्रमुख मुद्दा रहेगा। आज यह भविष्यवाणी सच हो रही हे। अनेक विकसित राष्ट्र अपने यहा के जगला का बचाने के लिए पूरा-पूरा ध्यान दे रहे हैं परन्तु विकासशाल राष्ट्रा क जगला को किसी न-किसी बहाने नष्ट करने पर तुले हुए है। विकासशील राष्ट्र विभिन्न विकास याजनाआ के नाम पर अपने यहा के वना का बेरहमी से सफाया करने के लिए तैयार हो जाते हैं। विश्व बैंक जैसी सस्था भी विकसित राष्ट्रा के इशारे पर इस तरह की विकास याजनाआ को तुरत आर्थिक सहायता प्रदान कर देती हे तथा बडे पैमाने पर जगला का सफाया हान से पर्यावरण तीव्रता से दूषित किया जा रहा है।

भारत मे भी जगला की हालत बद स बदतर हाती जा रही है। १९५१ से १९७२ के बीच बाधो खेती सडको तथा उद्योगो के कारण कोई ३४ लाख हेक्टेयर जगल खत्म किए जा चुके हैं। स्वतत्रता प्राप्ति के समय यहा १९५२ तक जगल थे पर उसके बाद जगला की काफा क्षति हुई ह। सारी जमीन पर कम से कम ३३ प्रतिशत वन होन चाहिए। पर सटेलाइट द्वारा लिये गए चित्रा म कवल ११ प्रतिशत वन चित्रित हैं। वन का सीधा सम्बन्ध हाता हैं बाढ और सूख मे। वन जहा बरसात के पानी को रोककर जमीन म रिसने म अह भूमिका निभाते हैं वहीं बरसात के लिए एक तरह का दबाव निर्मित करते हैं। वना के खत्म हाने से बरसात का चक्र बिगड जाता है। पवत के ऊपर से पेड क कारण मिट्टी की ऊपरी सतह और चक्र पापक तत्त्व बारिश म बह जाते हैं इसस भी प्राकृतिक सम्पदा का बहुत बडा विनाश हाता है। इसलिए आज पूरी दुनिया म पयावरण क सदर्भ म एक नयी चेतना का उदय हा रहा है। अणुव्रत का भा यहा अभिप्रत है।

अणुव्रत अनुशास्ता 'आचार्यश्री तुलसी' एक बहुमुखी व्यक्तित्व

भगवान हमारे शब्दकोश का एक बहुत ही कीमती शब्द है। सचमुच म यह श्रद्धा की इति है। पर बहुत बार इसक साथ अति भी हो जाती है। आचार्यश्री तुलसी अपन आपको आचार्य ही मानते हैं। यद्यपि उन्हे भगवान कहन वाले लागा की कमी नहीं है। श्रद्धा जहा सघन होती है वहा मामूली आदमी भी भगवान के रूप मे उभर आता है पर आचार्यश्री को इस शब्द के अर्थ-पर्याय का अवबाध है, इसीलिए वे अपने का भगवान कहने वाल लोगा को निराश करते हैं। वे जानते हैं भगवान कहलान वाले बहुत सारे लोग श्रद्धा के अतिरेक का तो स्पर्श कर सकते हैं पर वे बौद्धिक-वर्ग से कट जाते हैं। आचार्यश्री ने अपने आचार्यत्व की रक्षा कर न तो श्रद्धा को अतिरेक तक जाने दिया और न ही स्वय बुद्धि की पहुच से बाहर हुए। इसीलिए उनके आचार्यत्व मे बहुत सारी सभावनाआ के दर्शन होते हैं।

आचार्यश्री तुलसी ने अपने कार्य-कौशल से आचार्यत्व को गौरव प्रदान किया है। एक परम्परा के प्रतिनिधि होने के बावजूद आपने एक सार्वजनिकता प्राप्त की है। आज के बुद्धिवादी युग म श्रद्धा अर्जित करना मामूली बात नहीं है। यह *तभी सभव हो पाता है, जब आदमी हर नुक्ते से अपना आत्म-दर्शन करता रहे।* सम्प्रदाय की ओर से इन्हे घेरे रहने म कमी नहीं थी अब भी नहीं है पर आचार्यश्री ने बडी सहजता से इस द्वद्व को समाहित किया। इसीलिए अपनी जडा को मजबूत बनान के साथ-साथ आकाश म भी अपने आपको विस्तार दे पाए। असल में जो वृक्ष जितना गहरा होता है वह उतना ही उन्मुक्त आकाश म अपनी बाहा को फैला सकता है। बहुत सारे लोग जडो की गहराई म तो विश्वास करते हैं पर फेलाव म विश्वास नहीं करते। आचार्यश्री ने दोना के बीच म एक सतुलन स्थापित किया है। इसीलिए वे सम्प्रदाय तथा असम्प्रदाय का समान रूप से ग्राह्य बन सके।

यह असल म बुद्धि और श्रद्धा का सतुलन है। अतिरक कवल श्रद्धा का ही नहीं हाता बुद्धि का भी होता है। श्रद्धा का अतिरेक जहा अधता को जन्म देता है वहा बुद्धि का अतिरेक विश्वास की जडा म मट्ठा डालता है। मनुष्य को अपना

जीवन श्रद्धा और बुद्धि के बीच ही जीना पडता है। यदि वह निरा श्रद्धाशील बन जाए ता कोइ ठग सकता है। यदि वह निरा बुद्धिवादी बन जाए तो अपने आप म बन्द हो सकता है। दोना तटा के बीच म सेतु बाधकर आचार्यश्री न इतिहास में अपनी जगह बनाई है।

रचनात्मक दृष्टि

जीवन वरदान भी है अभिशाप भी है। अमृत भी है विष भी है। यह आदमी पर निर्भर करता ह कि वह किसका चुनाव करता है। जो आदमी वरदान और अमृत का चुनाव करता है उसकी दृष्टि रचनात्मक होती है जो अभिशाप और विष का चुनाव करता है उसकी दृष्टि निषधात्मक हाती है।

गाधी का एक व्यक्ति ने एक बार कागज का एक पुलिन्दा थमाते हुए उसे पढन का आग्रह किया। उन्हाने सरसरी दृष्टि स उस दखा। बिना कुछ बोले उसमे लगी हुई आलपीन को निकालकर अपने पास रख लिया और कागजा को रद्दी की टोकरी मे फकना शुरू कर दिया। कागज लाने वाले व्यक्ति ने कहा-- 'महाशय! आप इन कागजो को पढिए। इनके अन्दर बहुत सारी काम की बाते हैं।' गाधीजी ने मुस्कराकर कहा-- 'इसमे जो काम की चीज थी उसको मैंने निकाल लिया। जो बिना काम की चीज हैं उन्हे ही फेक रहा हू। आलपीन के सिवाय इसम कोई काम की चीज नहीं है।'

यह है एक रचनात्मक दृष्टि। यह केवल गाधीजी का ही सवाल नहीं है दुनिया मे जितने भी बडे लोग हुए हैं या हाते हैं वे इसी राह से आग गुजरते हैं आचार्यश्री तुलसी की महानता का भी यही राज है। उनकी दृष्टि नितात रचनात्मक है। यदि आचार्यश्री चाह तो वे वाद-विवाद के अनेक अखाडे रचा सकते हैं। पर वे उनमे उलझना ही नहीं चाहते। यदि कोई उनसे उलझता है तो वे अपनी हार मानकर किनारे हा जाते हैं। भिवानी मे एक ऐसा ही प्रसग सामने आया। कुछ लाग जय-पराजय का भाव लेकर आचार्यश्री के पास आए। बातचीत शुरू हुई। आचार्यश्री का यह समझते देर नहीं लगी कि आगन्तुक महाशय तत्त्वोन्वेषण के लिए नहीं आए ह, अपितु छिद्रान्वषण के लिए आए हैं। अत उन्होने बातचीत की डोर को ढीला छोडना शुरू कर दिया। आगन्तुका ने कहा-- ''आप बातचीत करना नहीं चाहते हैं इसका मतलब यह है कि आपका पक्ष सही नहीं है। आप पराजित हो रहे हैं।'' आचार्यश्री ने कहा-- 'आप मुझे पराजित करने ही आए हैं तो मान लीजिए मैं पराजित हो गया। आप यदि इस बात का प्रचार भी नहीं करना चाह ता मुझे कोई आपत्ति नहीं हे। आप खुशी से अपना शौक पूरा कीजिए।'' आगन्तुक

आदमी स्वय ही पराजित होकर चले गए।

यह है रचनात्मक दृष्टि। यदि आचार्यश्री उनसे उलझना चाहते तो उसका पूरा इन्तजाम था। पर जिन आदमियो की दृष्टि विधायक होती है वे किसी प्रकार के वाद-विवाद या खण्डन-मण्डन म नहीं उलझते। आचार्यश्री की इसी दृष्टि ने उन्ह एक गरिमा प्रदान की है और वे अणुव्रत जैसे आन्दोलन का सूत्रपात कर सके। आज युग के सामने नैतिकता का कितना बडा सकट है, उसे सभी लोग महसूस करते हैं। पूरे देश म एक निराशा-सी छायी हुई है। पर निराशा के उस माहौल म भी आपने आशा की एक किरण फैलाई है। प्रश्न हा सकता है कि एक किरण से क्या सवेरा उग पाएगा पर उत्तर भी उसी म छुपा हुआ हे।

एक-एक किरण मिलकर ही सहस्राशु बनता है। सभी लोग अपनी एक-एक किरण उनके साथ जोड दे तो निश्चय ही देश मे आशा का सूरज उग सकता है। आज इसी रचनात्मक दृष्टिकोण की आवश्यकता हे। जिस किसी के पास भी कोई एक किरण है वह उसे दूसरे के साथ जोडकर अन्धतमिस्रा को मिटाने का प्रयोग करे यह अत्यन्त जरूरी है।

हमारे युग म जिन बाता का विशेष अभाव हुआ है उनम रचनात्मक दृष्टि का अभाव मुख्य है। एक मामूली आदमी भी बड-से-बडे आदमी की पगडी उछाल सकता है। इसम कोई सन्देह नहीं कि आज जनतन्त्र ह और किसी भी आदमी की जबान को पकडा नहीं जा सकता पर यह भी सच है कि यदि आदमी अनर्गल जबान हिलाने लगता है तो जनतन्त्र भी बहुत लम्बा नहीं चल सकता। जनतन्त्र म यदि रचनात्मक आलोचना का भाव नहीं रहा तो जल्दी ही वह अपने लिए खाई खोद लेगा।

आचार्यश्री तुलसी के बारे म भी आलोचको की कमी नहीं है। बहुत सारे तुच्छ आदमी भी इस दौड मे तेजी से दौड रहे हे। बहुत सारे पत्रकार भी आगे से आगे दौड रहे हैं। कहने का यह अर्थ नहीं है कि सभी लोग आचार्य तुलसी को परमेश्वर माने। बल्कि सच तो यह है कि गलती देखने वाला परमेश्वर मे भी गलती खोज लेगा। आज हमारे सारे युग को ही विध्वसक मनोवृत्ति ने ग्रसित कर लिया है। पत्रकार लोग चटपटी चाट परोसने के लिए न जाने कहा-कहा की खाक छान लते ह। असल म यह दाष उनका ही नहीं है। आज देश की मनोवृत्ति चटपटी चाट को ही ज्यादा पसन्द करने की हो रही है। ऐसी स्थिति म पत्रकार भी जन-रुचि का अनादर नहीं कर सकते। वे समाज के दर्पण हाते हैं। पर पत्रकारो का यह भी कहना है कि वे चाट बेचने वाले फेरी वाले नहीं हैं। चाट आदमी को चटखोरा तो बनाती ही है पर आगे जाकर उसकी स्वस्थता को भी चोपट बनाती

है। पत्रकारा अपने पाठका को सात्त्विक स्वास्थ्यवर्धक भोजन-सामग्री परासनी होगी। यदि पत्रकार ऐसा नहीं करते हैं तो वे अपन पत्रकार धर्म से विमुख होकर पीत-पत्रकारिता को प्रश्रय दते है।

इसका अर्थ भी नहीं है कि आचार्य तुलसी की रचनात्मक आलोचना न की जाए। बल्कि ऐसी आलोचनाआ को व स्वय प्रश्रय दते हैं। उन्हाने ऐसी आलोचनाआ का स्वागत किया है। पर दु ख तो तब होता है जब एरा-गैरा नत्थू-खरा जा भी काई बालता है उसे पत्रकार सिर आखा पर बिठा लेते हैं। चालणी सूई को कहे कि तुम्हारे सिर पर छिद्र है ता आश्चय हाता है। अनेक बार एसा दखा गया है कि आचार्य तुलसी की आलाचना का स्तर इतना घटिया हाता है कि उनक बार म कुछ कहना भी अच्छा नहीं लगता। इसीलिए आचार्यश्री मौन हो जात हैं।

लोग कहते है आजकल बुराइया ज्यादा हैं पर यह ता स्वाभाविक है। आदमी का नीचे गिरना जितना सहज है उतना ऊपर चढना नहीं हो सकता। फिर भी यदि हमारा दृष्टि बुराइया की ओर ही रहेगी जनता का ध्यान बार-बार बुराइया की ओर ही आकृष्ट किया जाएगा तो उनमे से अच्छाइया कैसे प्रकट हो सकगी? इसका यह अर्थ नहीं है कि बुराइया का सरक्षण दिया जाए। पर यदि चटखारेपन का पोषण करन क लिए उन्ह चुन-चुन कर प्रकाशित किया जाता है तो कैस उचित कहा जा सकता है?

आचार्यश्री कभी अपनी आलोचनाआ से विचलित नहीं होते। यदि वे इस तरह विचलित होते तो इतनी रचना नहीं कर पाते जितनी आज कर पाए है। व अणुव्रत जैसा असाम्प्रदायिक आन्दोलन नहीं चला सकत। प्रेक्षाध्यान जैसा रचनात्मक कदम नहीं बढा पाते। सत्साहित्य की गगा-यमुना नहीं बहा सकते। असल म रचनाधर्मिता न ही आपको लाखो-लाखो लोगों का प्रणम्य बनाया है। आवश्यकता हे हमे वह दृष्टि प्राप्त हो, जो उन्हे पहचान सके।

एक कूटनीतिज्ञ सत

अभी-अभा हमार सामने गार्बाचोव हुए। उन्हाने ऐसा कमाल कर दिखाया जिसकी कल्पना नहीं को जा सकती दुनिया म अमरीका और रूस क दा विरोधी खम बने हुए थे। बराबर शीत युद्ध का वातावरण बना रहता था। शस्त्रास्त्रा का अम्बार लग गया था। युद्ध किस क्षण फूट जाए, इसका काई अन्दाज नहीं लगा रहा था। पर गोर्बाचोव ने एसा डडा हिलाया कि रूस आर अमेरिका का विरोधी रुख खत्म हो गया। निश्चय ही अहिंसा की ऐसी मिशाल गाधी जी भी कायम नहीं कर

सके थे। गोबाचोव ने किन परिस्थितियो मे यह प्रस्ताव रखा यह नहीं कहा जा सकता। कुछ लोग कहते हैं, यह रूस की आतरिक विवशता थी। कुछ लोग कहते हैं, यह गोर्बाचोव की शाति-कामना थी। कुछ भी हो लेकिन परस्पर की गाठो को ढीला करने म गोर्बाचोव ने जो उपलब्धि हासिल की वैसी गाधीजी भी हासिल नहीं कर सके। गाधीजी के भरसक प्रयत्ला के बावजूद भारत मे जातीय हिसा नहीं मिट सकी थी। ऐसी स्थिति म गोर्बाचोव ने जो कुछ किया वह अनुपम था। बुश ने भी सहयाग किया। परमाणु तापो के मुह फिर गए। पर इसका मुख्य श्रेय तो गोर्बाचाव को ही जाएगा। गोर्बाचोव ने कवल अमेरिका के साथ ही नहीं अपितु अनेकानेक देशा के माथ अपने राष्ट्रीय-सम्वन्धो का मुख मोड दिया था। निश्चय ही यह एक भारी सफलता थी।

पर *गोर्बाचोव का आखिरी हश्र क्या हुआ? वे अपने ही राष्ट्र म अपदस्थ हो* गए। एक दिन जिस व्यक्ति की चर्चा प्रमुख रूप से थी आज लोग उसे भूलने लगे हैं। गाधीजी का निधन हुए चालीस वर्ष हो गए, पर वे बासी नहीं हुए। उनमी उस कालजयिता का रहस्य क्या है? सीधा-सा उत्तर होगा सतत्व। गोर्बाचोव कूटनीति म गाधीजी से जितने निपुण थे उतनी ही अधिक यशस्विता उन्हाने प्राप्त की। पर आज उनकी कूटनीति धुधली पडती जा रही है गाधीजी का सतत्व ओर अधिक निखरता जा रहा है।

गाधी के सतत्व को देखिए—

एक अग्रेज गुप्तचल गाधीजी के आश्रम मे रोज-रोज आया करता था। उसका काम यह था कि वह गाधीजी के पास आने-जाने वाले लोगा की सूची बनाकर अपने अग्रेज अफसर को देता था। गाधीजी को उसका पता लग गया। उन्होने उसे बुलाकर कहा— "*तुम सारा दिन बेकार यहा क्यो खराब करते हो? तुम्हे* मेरे आश्रम म आने वाले लोगा की सूची चाहिए ता शाम को मेरे पास आकर ल जाया करो।" और यही हुआ। अब वह गुप्तचर गाधी के पास आने वाले लोगो की अविकल सूची अपने अफसर क पास भेजने लगा। अफसर का वह सही सूची प्राप्त कर बडा आश्चर्य हुआ। उमने अपन गुप्तचर से सही बात पूछी। गुप्तचर ने सारी बात सही-सही बता दी। यह जानकर अफसर भी गाधीजी से बडा प्रभावित हुआ और उनके सामने *नतमस्तक हो गया।*

आचार्यश्री तुलसी के बार मे भी मुझ ऐसा ही प्रतीत होता है। कुछ लोग कहते हैं कि ये बडे कूटनीतिज्ञ हैं पर मर विचार से आपकी कूटनीति आपकी सहजता ही है। इसम कोई शक नहीं है कि अणुव्रत के रूप म आचार्यश्री ने जो व्यापक कमद उठाया है वैसा बहुत कम धर्माचार्य उठा पात हैं। तेगपथ के आचार्य

के दायित्व का वहन करते हुए भी आपने अणुव्रत का एक सार्वजनिक आधार प्रदान किया है। प्रारम्भ म कुछ लागा का विचार था कि अणुव्रत तरापथ को ही पिछले दरवाज स प्रस्थापित करने का प्रयत्न है। यह एक गहरी कूटनीतिक चाल ह पर आज तक की अणुव्रत की गतिविधिया से यह स्पष्ट हो गया है कि आचायश्री ने अणुव्रत का तेरापथ तक लाने का प्रयत्न नहीं किया हे अपितु तरापथ को ही एक व्यापक मनोभाव प्रदान करने की कोशिश की है। इस वात का सर्तकता से ध्यान रखा गया हैं कि अणुव्रन और तरापथ म काई घपला पैदा न हो।

तेरापथ एक बहुत छोटा-सा समुदाय है पर आचार्यश्री के प्रयत्ना स इसे एक व्यापक दृष्टि मिली ह। इमी से आज तरापथ क अनक सदस्य सम्प्रदाय से ऊपर उठकर समूची मानवता क विषय म साचने क लिए सक्षम बन हैं। इसम भी काई सदेह नहीं हे कि अणुव्रत क माध्यम स अनेक अच्छाइया का उजागर होने का अवसर प्राप्त हुआ हैं। पर यह सब आचार्यश्री की सहजता का ही परिणाम है।

आचार्यश्री सहज तो हें पर इसका यह अर्थ नहीं है कि वे दूसरो की कूटनीति को समझते नहीं ह। अक्सर कूटनीतिज्ञ लाग सामने वाले की सरलता का भी कूटनीति समझते हैं और सत लोग दूसरे की कूटनीति को भी सरलता समझते हैं। इसीलिए समस्या सुलझती नहीं है। कोई सत यदि दूसरे की कूटनीति को समझ भी जाते ह तो उस ओर से उदासीन हाकर अकाम हा जाते ह। आचार्यश्री दूसरे की कूटनीति का समझते तो हैं ही पर सरल-सहज होकर भी अकाम उदासीन नहीं होते। इसीलिए आपने दुनिया के महान सता म अपना स्थान बनाया है। आपके पास वह दूर-दृष्टि अन्तर्दृष्टि है जो कुछ ही लोगा के पास होती है इसीलिए अनक कूटनीतिज्ञ भी आपके सामने नतमस्तक हो जाते हैं।

धर्म और सम्प्रदाय के सेतु

धर्म और सम्प्रदाय दो भिन्न दिशाए ह। धर्म आत्मा है सम्प्रदाय शरीर है। आत्मा जब तक मुक्त नहीं हो जाती उसे शरीर का आश्रय लेना ही पडता है। एक शरीर छूट जाता है तो दूसरा शरीर पकडना पडता ह। इस दृष्टि से मुक्ति क किनार तक जीव को शरीर का बोझ ढोना पडता हे। इसी तरह जब तक आत्मत्व पूर्ण रूप स प्रकट नहीं हो जाता तब तक आदमी का एक-दूसरे सम्प्रदाय का आश्रय लेना ही पडता है।

सम्प्रदाय चलाना भी कोई सहज बात नहीं हे। उसके लिए बहुत तजस्व की आवश्यकता होती है। कभी-कभी ही कोई एक ऐसा बोधिदाता महापुरुष पेदा होता है जिनके पदचिह्न सम्प्रदाय बन जाते है। पर सम्प्रदाय का सुरक्षित रखना भी

बहुत सहज बात नहीं है। सम्प्रदायों की परम्परा में यदि कोई तेजस्वी पुरुष नहीं होता है तो वे जीवित नहीं रह सकते। भगवान् महावीर एक आत्म-प्रचेता महापुरुष थे। वे जिस मार्ग से आगे बढ़े वही मार्ग जैन-धर्म बन गया। 'जैन-धर्म' शब्द में यद्यपि एक व्यापकता है पर यह समझने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि यह भी एक सम्प्रदाय है। ढाई हजार वर्षों से निरन्तर यह सम्प्रदाय चलता आ रहा है। जैसा कि स्वाभाविक है धर्म-सम्प्रदायों के अंगारे पर कालान्तर में क्रियाकांड की राख आती ही है। पर उन्हीं में समय-समय पर ऐसे लोक-प्रदीप भी पैदा होते रहते हैं जो अपने तपश्चरण से राख को उड़ाकर अंगारे की ज्वलनशीलता को अगली पीढ़ी तक पहुंचाते रहते हैं। इस दृष्टि से जैन परम्परा में ऐसे अनेक मुमुक्षु हुए हैं जिन्होंने न केवल स्वयं को ही ज्योतिर्मय बनाया अपितु सम्प्रदाय में भी नव प्राणों का संचारण किया है।

आचार्य भिक्षु एक ऐसे ही आत्मवान् पुरुष सिद्ध थे। आज से सवा दो सौ वर्ष पहले जब जैन धर्म की ज्योति पर क्रियाकांड का आवरण आ गया था उन्होंने उसे दूर हटाकर तेरापंथ धर्म-संघ का आविष्करण किया। उसके बाद नौ अनुशास्ता इस धर्म-संघ को प्राप्त हुए। सभी ने अपने-अपने तरीके से तेरापंथ को ज्योतिर्दान किया। आचार्यश्री तुलसी इस धर्म-संघ के नौवें आचार्य थे। आपने इस संघ को जिस प्रकार सप्राणता प्रदान की है यह अद्भुत है।

निःसन्देह आचार्यश्री के पास सवा सात सौ साधु-साध्वियों का एक अनुशासित संघ है। पर आचार्यश्री ने यह अनुभव किया कि बहुत बड़ी संख्या हो जाने ही पर्याप्त नहीं है। यद्यपि संख्या भी एक बड़ा बल है। पर जब तक गुणात्मकता का विकास नहीं हो तब तक केवल संख्या बल बहुत बड़ा काम नहीं कर सकता। इसीलिए आपने साधु-साध्वी समाज के प्रशिक्षण को बहुत बड़ा महत्त्व दिया।

कर्म को अकर्म से जोड़ने का जैसा प्रयत्न आचार्यश्री ने किया है वह अपने आप में अद्भुत है। बहुत सारे धार्मिक लोग कर्म से घबराते हैं। आचार्यश्री की मान्यता है कि अकर्म में परिष्कृत कर्म न केवल कल्याणकारी है अपितु निर्जरा भी है।

समाज में सब तरह के लोग होते हैं। कुछ गरमदली होते हैं, कुछ नरमदली होते हैं। दोनों की अपनी-अपनी उपयोगिता है। केवल गरमदली लोग हों तो समाज भटक जाता है। केवल नरमदली लोग हों तो समाज पिछड़ जाता है। असल में समाज में ऐसे नेता की आवश्यकता होती है जो दोनों प्रकार के लोगों में समन्वय सन्तुलन बना सके। आचार्यश्री तुलसी एक ऐसे ही व्यक्ति हैं। आचार्यश्री ने तेरापंथ

होते हैं। आचार्यश्री के लिए यह आवश्यक था कि परम्परा की विशेषताओ को अक्षुण्ण रखते हुए नये युग में प्रवेश किया जाए। स्थिरता और प्रगतिशीलता मे एक सतुलन कायम हो।

उस समय तेरापथ सारे जैन-सघो म पिछडा हुआ माना जाता था। बल्कि कुछ लोग ता उसके अस्तित्व का भी नहीं स्वीकारत थ। यह तो सही है कि किसी भी धर्मसघ की तेजस्विता उसका साधना-बल है। तेरापथ के पास अपरिमित साधना-बल था। विचार और सिद्धान्त की दृष्टि से भी वह एक समृद्ध धर्मसघ था। पर उसक पास युग की भाषा नहीं थी। आचार्यश्री ने सबसे पहले तेरापथ क विचार का भाषा प्रदान की, उसके साधनातज को नया आयाम प्रदान किया। मालिकता को सुरक्षित रखते हुए आपने इतनी चतुराई से इसे ऐस स्थान पर पहुचा दिया जहा से वह हर आदमी को नजर आन लगा। यद्यपि इस पूरी प्रक्रिया म आचार्यश्री को बहुत कुछ सहना पडा पर आपने अपने कौशल से एक ऐसे पथ का निर्माण किया जो गरमदल और नरमदल दोना के लिए स्वीकार्य है। आचार्यश्री ने किसी को भी उपेक्षित नहीं किया। पुराने को भी निमत्रित किया। नये को भी आमत्रित किया। पर आपने इस दृष्टि से निरन्तर मध्यम मार्गी लागा का सहारा लिया। इस प्रक्रिया मे कुछ नये तथा कुछ पुराने लोग आपसे कट भी गए, पर सघ का मौलिक-बल कभी क्षीण नहीं हुआ। यह सही ह कि तेरापथ इतना आधुनिक नहीं हो पाया जितना कुछ तथाकथित व्यक्ति चाहते थे पर वह इतना पिछडा हुआ भी नहीं माना जाता जितना कि कभी माना जाता था। यह सब करामात आचार्यश्री तुलसी के प्रभावी नेतृत्व की ही है। अपने आपको अत्याधुनिकता मे ले जाने वाले लोगो के नीचे से आज मौलिक धरातल खिसक चुका है। वे व्यक्ति के रूप मे अपन आपको चाहे जैसा माने पर उनका पारम्परिक स्वरूप विक्षत हो चुका है। इस दृष्टि से आचार्यश्री ने पूर्व और पश्चिम म भी एक मिशाल बन गया है। नि सदेह आप भारतीयता जैनत्व को महत्त्व दते हैं, पर अपनी सीमा मे रहकर भारतीय एव पश्चिमी विशेषताओ को स्वीकार करने मे भी सकोच नहीं करत। आचार्यश्री ने जिस तह से परिवर्तन को आपने जीवन तथा सघ के जीवन म रचा-बसा लिया है यह एक विस्तृत विवेचना का विषय है। सक्षेप मे हम यही समझ सकते हैं कि आचार्यश्री तुलसी दो विरोधी अतियों के बीच एक मध्यम मार्ग हैं।

तेरापथ अणुव्रत को सम्बल प्रदान करे

देश म आज अनेक आन्दोलन चल रहे हैं, पर नैतिक जागरण का शायद एक मात्र आन्दोलन अणुव्रत ही हे। इसम कोई सन्देह नही कि अणुव्रत की परिकल्पना

की भूमिका म जैनधर्म तथा तरापथ ही रहा है। पर यह भी सच है कि अस्तित्व की धरा पर पैर टिकात ही इस आन्दालन न एक राष्ट्रीय रग-रूप ग्रहण कर लिया था। वह आजादी क अवतरण का समय था। कुछ अन्य नैतिक आन्दालन भी उस समय क आसपास शुरू हुए, पर व लम्बा मफर नहीं कर सक। वास्तव म यह है भी एक कठिन काम। आजादी की लडाई क समय गाधीजी न दश का सफलतापूण एव गौरवपूर्ण नतृत्व किया। उनकी आवाज न हजारा-हजारा लागा का आकृष्ट किया। अनेक लागा ने उस समय अपन प्राणा का भी उत्सर्ग कर दिया। पर आजादी क वाद जस गाधीजी क सपन टूट गए। निश्चय ही गाधीजी भारत के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थ। पर अपन जीवन क अति क्षणा म उन्ह भी महसूस हाने लगा था कि मरी आवाज का काई नहीं सुनता। हा सकता है गाधीजी जीवित रहते ता अन्य काई विकल्प सुझाते। पर सकीर्ण मनावृत्ति के लागा ने उन्ह देश स छीन लिया। एसी स्थिति म नैतिक निर्माण की वहुत वडी अपेक्षा थी। आचार्यश्री तुलसी ने उस अपक्षा को समझा और अणुव्रत आन्दालन का जन्म हुआ। ऐसे समय म जबकि गाधीजी अपने आपको निर्वल अनुभव करन लगे थे अणुव्रत का प्रारम्भ एक बहुत बडी चुनोती थी। पर आचार्यश्री ने उस चुनौती को स्वीकार किया और निष्ठा स न केवल इस आन्दोलन का सूत्रपात किया अपितु इसे निरन्तर प्रवहमान भी रखा। आज अणुव्रत एक राष्ट्रीय ही नहीं पूरी दुनिया म नैतिक आन्दोलन क रूप मे स्वीकृत हो गया है।

आचार्यश्री तुलसी तेरापथ के आचार्य एव अणुव्रत के अनुशास्ता— दोनो एक साथ हैं। इस बात को लेकर प्रारम्भ म लागा ने अनेक प्रकार की आशकाए भी व्यक्त की थीं। यह भी कहा था कि अणुव्रत तेरापथ को पिछले दरवाजे से प्रविष्ट कराने का प्रयास है। पर ५० वर्षों के तोर-तरीका से यह बात अत्यन्त स्पष्ट हो गई है कि आचार्यश्री ने तेरापथ का भी अत्यन्त कुशलता से सचालन किया। आपके शासनकाल मे तेरापथ ने विकास के नए-नए क्षितिजा का स्पर्श किया। परन्तु उसके लिए आचार्यश्री ने अणुव्रत को जा असाम्प्रदायिक रूपाकार प्रदान किया वह अपन आप म एक एतिहासिक बात है। देश मे अनेक धर्माचार्य हें पर एसा साहस करने वाले आचार्य विरले ही हे। तेरापथ की ताकत को अणुव्रत के प्रचार-प्रसार से जाड कर आपने अणुव्रत को एस सार्थक दीर्घ-जीविता पदान की ह। अणुव्रत आन्दालन जसा आन्दोलन यदि सरकार चलाती तो शायद उसके लिए अरवो-खरबा रुपये भी नाकाफी हाते। देश के एक किनारे स दूसरे किनार तक नैतिकता के घोप को इतनी सशक्त अभिव्यक्ति देन क लिए आचार्यश्री के पास तेरापथ का ही पृष्ठवल था। यह निश्चित तोर पर कहा जा सकता है कि अर्थ के लिए तेरापथ

ने कभी भी सरकार से सामने हाथ नहीं फैलाया। अपने बलबूत पर ही इस धर्म-सध ने आन्दोलन को बल प्रदान किया।

एक सवाल उठाया जाता है क्या अणुव्रत आन्दोलन से अनैतिकता मिट गई? सवाल अनैतिकता के मिटने या न मिटने का नहीं है। सवाल ईमानदारीपूर्वक कार्य करने का है। अनैतिकता को पूर्ण रूप से न ता महावीर मिटा पाए थे न बुद्ध मिटा पाए थे। पर उन्हाने अपनी आर से प्रयास किया इसम काई सदेह नहीं है। आचार्यश्री ने भी अणुव्रत के प्रचार-प्रसार मे काई कमी नहीं रखी। इस बात का मूल्य ता ह कि सूर्य बनकर पूरी दुनिया से अधकार का मिटाया जाए, पर जब चारा आर अधेरा हो उस समय यदि काई दीपक भी अपनी लौ से प्रकाश फैलाता है तो उसका अपना मूल्य है। सुधार की काई अन्तिम सीमा नहीं हा सकती। जितना सुधार किया जाए उससे और ज्यादा सुधार किए जाने की गुजायश हमेशा बनी रहती है। आचार्यश्री न गहन अधेरे मे एक दीप जलाया। वास्तव म इस दीपक की कीमत वही आदमी समझ सकता है जो स्वय जलना जानता है। आचार्यश्री ने अपने दीप से ऐस अनेक दीपा को ज्यातिर्दान किया है जिन्होने सूचि-भेद्य अधेरे मे लोगो को राह दिखाई। निश्चय ही एक अकिंचन फकीर ही ऐसा कार्य कर सकता था।